खरे-खोटे

लेखक
'आरिगपूडि'

भारती साहित्य सदन

श्री मेका वेन्कटाद्रि अप्पाराव जी को,

जिनकी उदारता के कारण

मैं पढ़ सका,

सादर समर्पित

रमेश

इससे पहले कि—

'खरे-खोटे' कुछ आपबीती है, कुछ परबीती, कुछ सुनी सुनाई है। कहानी है। कल्पित है।

द्वितीय महायुद्ध की पृष्ठभूमि में 'खरे-खोटे' की कहानी चली है। पृष्ठभूमि वास्तविक है, ऐतिहासिक है।

आन्ध्र का कृष्णा जिला प्रसिद्ध है। कहानी का क्षेत्र भी वही है। पात्र कल्पित हैं, स्थल अकल्पित, घटनायें भी।

गाँवों के नाम असली हैं पर उनके निवासी नहीं। वुय्युर में शुगर मिल है, किन्तु 'खरे-खोटे' की शुगर मिल उससे भिन्न है। दोनों का कोई सम्बन्ध नहीं।

यह सामाजिक उपन्यास है। अतः यह यथार्थता के आधार का अधिकारी है। व्यक्ति परिवार में पनपता है और परिवार समाज में। 'खरे-खोटे' में परिवार, व्यक्ति और समाज के पारस्परिक सम्बन्धों का चित्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

इसमें एक नायक नहीं, कई हैं। शायद नायिका है ही नहीं। इसे कहानी की विशेषता कहूँ या न्यूनता, मैं निर्धारित नहीं कर पाता हूँ। मैं इसे निस्संकोच भिन्नता अवश्य कह सकूँगा।

मैं किसी पार्टी से सम्बन्धित नहीं हूँ, न कोई पार्टी ही मुझसे सम्बन्धित है। लेखक के नाते मेरा घटना-मात्र से सम्बन्ध है।

'आरिगपूडि' मेरा उपनाम है। मैं आन्ध्रवासी हूँ। 'भूले-भटके' (मेरा प्रथम उपन्यास) की तरह 'खरे-खोटे' की कहानी भी आन्ध्र की है। पात्र आन्ध्र के हैं। भाषा सम्पूर्ण राष्ट्र की है।

कहानी में कई ऐसी बातें हैं जिन पर कोई भी प्रान्त गर्व नहीं क
सकता। न आन्ध्र ही करता है। मेरा प्रान्त इतना उच्छृङ्खल, उद्धत
अनियन्त्रित नहीं है, जितना कि सम्भवतः यहाँ चित्रित हो गया है।
साधारणतायें सर्वत्र समान हैं। असाधारणतायें भिन्न-भिन्न हैं।
साधारण वस्तुएँ, घटनायें आदि ही कथा-विषय बनती हैं। ये बुरी
हैं और अच्छी भी। संयोगवश 'बुरी' का भाग ही कहानी में अधिक
गया है। कारण स्पष्ट है।

"मैं" कहानी कह रहा है। पर मेरी यह रामकहानी नहीं है। "मैं"
एक पात्र है, रघू मामा की तरह।

, शेनोय नगर,
त–३०

ए० रमेश चौधरी

प्रथम परिच्छेद

माँ-बाप ने उनको राघवेन्द्रराव नाम दिया था। गाँव के बड़े बूढ़े उन्हें राघवैय्या कह कर पुकारते थे। हमारी टोली में वे रघू मामा के नाम से परिचित थे।

भारी भरकम शरीर, काला रंग; घनी भौंहें, पतली-तिरछी मूँछ, भयानक लाल-लाल आँखें। उनका चित्र अब भी जब कभी आँखों के सामने आता है तो एक साथ कई घटनाएँ स्मरण हो आती हैं।

ठीक तरह याद नहीं कि दीवाली के दिन थे या दसहरे के—खेतों में हरा धान लहलहा रहा था—हवा के झोंके के साथ एक विचित्र संगीत पैदा होता, खेतों का पानी भी कल-कल करता मेंढों को फाँदता मानो संगीत से उन्मत्त हो; हम नहर के किनारे बैठे पाल फैलाये नावों को आता-जाता देख रहे थे।

एकाएक रघू मामा नहर की पटरी पर चलते-चलते आये। उनके पीछे सुब्बाराव आ रहा था। उसके हाथ में एक बड़ी पोटली थी। रघू मामा हमें देख कर मुस्कराये। हम चार-पाँच लड़के उनकी तरफ ऐसे भागे, जैसे परदेश से हमारे बड़े भाई वापस आ रहे हों।

रघू मामा ने हमें वहीं अमलतास के पेड़ के नीचे बैठा दिया। उन्होंने हम में से किसी के गाल पर नोंचा तो किसी की पीठ थपथपाई, किसी का कन्धा सहलाया, मूर्ति को कानी आँख बना कर भी छेड़ा। वह बेचारा झेंप गया।

बात यों थी; एक दिन हम रघू मामा के घर के पिछवाड़े में इमली

के पेड़ पर चढ़ कर इमली तोड़ रहे थे। पेड़ रग्घू मामा का था। हर क
इमली तोड़ सकता था, पर किसी की वहाँ जाने की हिम्मत न होती थी
मूर्ति एक पतली टहनी पर से इमली हाथ में पकड़े-पकड़े धड़ाम से नी
जा गिरा। रग्घू मामा भागे आये। उनको आता देख मूर्ति धूल झाड़त
हुआ भागा—हम तो तब तक नौ दो ग्यारह हो चुके थे। मामा ने उसके
लपक कर पकड़ लिया। उसकी आँखों से खून बह रहा था।

"मामा, मैंने इमली नहीं तोड़ी; सच कहता हूँ मैंने नहीं तोड़ी।" उसने हाथ में रखी इमली दूर फेंक दी। खाली हाथ फैला-फैला कर दिखाने लगा। वह भय से काँप रहा था, रोता जाता था।

"अबे, कहीं चोट तो नहीं लगी? इमली नहीं तोड़ी है तो जा तोड़ ले।" मामा ने कहा।

सिसकियाँ भरते-भरते मूर्ति ने कहा, "नहीं तो।" उसने भागने की चेष्टा की पर मामा ने उसको कस कर पकड़ लिया। वे उसकी आँखों से बहते खून को पोंछते जाते थे। "अबे, आँख बाल-बाल बची है, नहीं तो जिन्दगी भर के लिए काना हो जाता।" मामा ने कहते हुए इधर-उधर से इमली बटोर कर उसको दे दी। "पेड़ लदा पड़ा है, इमली के लिए भी क्या लालच, आ चल चलें।"

हम सब यह दीवार के पीछे से देख रहे थे। मामा के बारे में हमने बहुत कुछ सुन रखा था। माँ-बाप की सख्त हिदायत थी कि हम उनसे बातचीत तक न करें। सोहबत की बात तो अलग हम उनकी छाया से भी दूर रहते थे। उन्हें मूर्ति की आँखें पोंछता देख हमारी जान-में-जान आई, हम मामा के पास गये।

"मामा, इमली चाहिए।" मैंने कहा

"पहिले तुम में से एक इसको डाक्टर के पास ले जाओ। क्यों बे, या नाम है तेरा?" मामा ने पूछा।

"मूर्ति।"

कुटुम्ब राव के साथ उन्होंने उसको भेज दिया।

उनके स्वर में विचित्र गूँज थी, दहलाने वाली, भयंकर। सुनते ही कंपकंपी पैदा हो जाती थी।

मामा स्वयं पेड़ पर चढ़ गये और देखते-देखते इतनी इमली झाड़ दी कि सारे गाँव के लिए अचार बन जाये। अगर किसी को वे पेड़ ठेके पर देते तो पचास-साठ रुपये भी बन जाते। मामा बेफिक्र आदमी थे, मस्त; गदह पचीसी में थे। पैसे की चिन्ता न थी। बच्चों में बच्चे बन जाते थे।

यह हमारी उनसे पहली भेंट थी। फिर तो हम किसी-न-किसी बहाने छुपछुपाकर प्रायः उनसे मिल लेते थे और कभी खाली हाथ या खाली पेट वापिस न आते थे। मगर कभी-कभी वे दिनों नदारद रहते। किसी को कुछ न पता देते, हम ढूँढते-ढूँढते परेशान हो जाते।

इस समय तो मैं उनके बारे में इतना जानता हूँ कि सोच नहीं पाता हूँ कि क्या कहूँ और क्या न कहूँ।

हम लोगों के लिए वे शीशे की तरह स्पष्ट थे, पारदर्शक। पर कहने वाले कहते थे कि मामा को आरपार देखना आसान काम न था।

मामा की शादी हो चुकी थी, अलग घर भी बसा लिया था। उनकी स्त्री साधारण घराने की थीं। न वे पैसे वाली थीं, पढ़ी-लिखी ही थीं। गऊ थीं; चुप रहतीं। पर भाइयों में जब बटवारा हुआ तो उन बेचारी को ही कारण माना गया। मामा के बाल-बच्चे न थे।

वस्तुतः बात कुछ और थी। मामा के भाइयों की पत्नियाँ उनके कारनामों के कारण उनसे भय खाई हुई थीं। वे घर का रुपया-पैसा बरबाद करते। काम-धन्धा भी कुछ न करते-कराते। हमेशा कोई झगड़ा मोल ले आते। बड़े भाई के लिए कभी-कभी बीच-बचाव करना कठिन हो जाता।

पर बड़े भाई के सामने ऐसे लक्ष्मण बने रहते कि देखने वाले आश्चर्य करते। वह ज़बान, जो औरों के सामने आग उगलती थी, उनके सामने राख-सी हो जाती। बड़े भाई डाँटते-डपटते तो चूँ तक न करते।

छोटे भाई के साथ भी ऐसे रहते जैसे अब भी बचपन हो, यद्यपि वे शादी-शुदा थे। मामा की कोई ऐसी चीज़ न थी, जिस पर उन्होंने अपने भाइयों को अधिकार न दे रखा हो।

वे तीन भाई थे। पिता जब गुज़रे तो तीनों भाइयों के नाम तीन-तीन एकड़ उपजाऊ भूमि छोड़ गये थे। एक बहिन थीं, उनकी शादी हो चुकी थी। वे पास वाले गाँव—काटूर में ही रहा करती थीं।

गाँव वालों के मुँह सुना है कि रग्घू मामा के बाबा की नूजवीड के आस-पास कभी जमींदारी थी। आयु के अन्तिम दिनों में वे यहाँ आकर बस गये थे। गरीबी में भी उनके रईसी के ऐश थे। खैर, उनकी तो अलग कहानी है, फिर कभी सुनाऊँगा। कहने का मतलब यह है कि रग्घू मामा का खानदान बहुत पुराना है। जाति के वे कम्मा हैं।

रग्घू मामा ने अपनी खेती का काम भी बड़े भाई को सौंप रखा था, बारहों महीने मटरगश्ती में कटते। हमेशा यार-दोस्तों की महफ़िल लगी रहती।

कहने कुछ लगा था और कह कुछ और रहा हूँ, बहुत दूर भटक गया हूँ। रग्घू मामा का नाम याद आते ही न ख्यालात ही काबू में रहते हैं, न जबान ही।

हाँ, उन्होंने मिठाई की पोटली खोल दी, उसमें तरह-तरह की मिठाइयाँ थीं।

"खाओ, पेट भर कर खाओ, आज त्योहार है।" मामा ने कहा। हम खाते जाते थे और वे हमारी ओर देख-देखकर मुस्कराते जाते थे। स्वयं उन्होंने कुछ न खाया पर उनके चेहरे से लगता था कि खा हम रहे हों और स्वाद उन्हें आ रहा हो।

"जाओ, जरा सम्भल कर रखना।" मामा ने सुब्बाराव को पास खड़े देख कर कहा, "मैं आजाऊँगा, घबराने की कोई बात नहीं।" सुब्बाराव उनका लंगोटिया यार था, हम-उम्र का भी था। इकहरा बदन, कड़ा इस्पाती शरीर, लम्बा कदावर। उसके बाप-दादा कभी मामा के

बाप-दादाओं के खेतों में काम करते थे। अब उसके यहाँ एक-दो जोड़ी बैल हैं और पाँच दस-एकड़ की खेती होती है।

"क्यों अभी पेट नहीं भरा ?" मामा ने पूछा। हम आपस में एक-दूसरे की ओर देखने लगे। मूर्ति ने तो इशारा भी किया कि पेट खाली है। उसके पिता पुरोहित थे, दान-दक्षिणा पर जीवन निर्वाह करते थे।

"तो क्या खाओगे ?" मामा ने पूछा।

"अमरूद।" हम सबने मिलकर कहा। अमरूद के बाग पर हमला बोलने के लिये हमारी टोली चली थी पर बाग में मौका न लगा था। माली ने हमारी दाल न गलने दी थी। निराश हो हमें वापिस आना पड़ा था। अमरूद का बाग पाँच-छः फर्लांग की दूरी पर था······दूसरे गाँव वालों का था।

"अच्छा, तो चलो चलें।" मामा ने कहा।

दूर एक नाव को आता देख मैंने कहा, "मामा, नाव से चलेंगे।"

"अच्छा।" हम फिर बैठ गये। नाव खींचने वाले पास आते जाते थे। ज्यों ही वे पास आये तो मामा ने उन्हें इस प्रकार आज्ञा दी जैसे वे उनके निजी नौकर हों। उनकी आज्ञा सुनते ही वे रुक भी गए। मामा की धाक दूर-दूर तक थी, पंचम् लोगों के लिये तो वे भगवान्-से थे। आस-पास के गरीब उनके सामने झुक-झुककर हाथ जोड़ते थे।

हम नाव में बैठकर अमरूद के बाग तक गए। मामा को आता देख माली सलाम करने लगा। मुख से एक बात न निकली, आँखें भी ऊपर न उठीं। वह भयभीत था।

"खाओ बेटा, जी भरकर खाओ।" मामा ने कहा।

"पर······साहब ······" माली गिड़गिड़ाने लगा।

"क्यों बे, क्यों गिड़गिड़ाता है ? तेरे घर का थोड़े ही है बाग ? मालिक का है। वह तो सैकड़ों एकड़ वाला है। एक-डेढ़ एकड़ का बाग बच्चों ने लूट लिया तो उसका क्या जाता है ?" मामा ने रोबीले स्वर में कहा।

"जैसी आपकी मर्जी······" माली ने कहा ।

"अरे बेटो, टहनियां वगैरह न तोड़ना । पेट-भर खा लो । घर ले जाना सख्त मना है, नहीं तो इस बेचारे गरीब पर आफत आ जाएगी।" मामा ने हमसे कहा।

हम काफी देर तक अमरूद खाते रहे और मामा माली की कुटिया के सामने खाट पर बैठे बीड़ी पीते रहे। जब हम खा-पीकर चले तो शाम हो रही थी।

रास्ते में मामा के बड़े भाई नरसिंह मामा का घर था। वे बाहर बैठे थे। उनके सामने कोई और भी खड़ा था। दूर से मामा ने उसको देखा तो हमें अपने घर जाने के लिए कहा। मैं उनके साथ चलता जाता था। मामा ने मना किया, पर मैंने जिद पकड़ी। मेरे घर का रास्ता भी वही था।

"कहाँ से आ रहे हो?" नरसिंह मामा ने अपने भाई से पूछा।

"खेत से······" मामा ने तिरछी नजर से उस व्यक्ति को देखा, जो उनके भाई के सामने खड़ा था।

"मैंने इनसे कोई शिकायत नहीं की है। मैं तो सिर्फ यह पूछने आया था कि त्योहार के लिये मिठाई वगैरह तो घर में नहीं चाहिए थी।" उस व्यक्ति ने दबे स्वर में डरते-डरते कहा। मामा और उनके भाई ने एक साथ उसको घूरा। वह हलवाई था और सरासर झूठ बोल रहा था। साफ था कि वह मामा की उनके भाई से शिकायत करने आया था।

"तुम्हें पैसे मिल गए हैं न? अब तुम जा सकते हो।" नरसिंह मामा ने कहा। हलवाई मामा की नजर बचाता हुआ खिसक गया।

"अरे, मिठाई चाहिए थी तो क्या इसकी मिठाई ही छीननी थी?' मामा के भाई ने और कुछ न कहा। मामा ने भी कोई उत्तर न दिया वे चुप खड़े रहे। मैं हंसता-हंसता चला गया।

रघू मामा सज-धजकर पण्डाल के सामने खड़े थे। लम्बे-लम्बे घुंघराले बाल बनाये हुए थे। माथे पर टीका था; कन्धे पर रेशमी, जरीदार दुपट्टा; पुराने ढंग का तंग कोट; पतली रेशमी धोती; छैल-छबीले लगते थे। पण्डाल में उनके भाई—नरसिंह मामा नौकरों से काम-काज करवा रहे थे। मामा स्वयं अतिथियों की आवभगत करने में लगे हुए थे।

उनकी बहिन की लड़की की शादी थी। लड़की का नाम सुजाता था। उसकी आयु तब लगभग पन्द्रह-सोलह की थी। स्कूल-फाइनल तक वह पढ़ी थी। अच्छा खाता-पीता परिवार था। बड़ी धूमधाम से शादी हो रही थी। सम्बन्धी मित्र, परिचित और दो-चार जमींदार, जिनसे पुश्तैनी रिश्ता था, उपस्थित थे।

सुजाता के पिता, ब्रह्मेश्वर राव काटूर के बड़े किसान थे। सौ-डेढ़-सौ एकड़ के मालिक थे। रघू मामा का जीजा के प्रति काफी आदर था। उनको भी वे अपने बड़े भाई के सदृश समझते थे। बड़ी बहिन, बीरम्मा पर तो वे नाज करते थे। वे रघू मामा से बड़ी थीं और नरसिंह मामा से छोटी। मां के गुजरने के बाद उन्होंने ही अपने भाइयों की देख-भाल की थी।

सुजाता से तो मामा का बहुत लगाव था। बचपन में उसे खूब खिलाया-पिलाया था—उसके साथ खेले-कूदे थे। हर त्योहार पर, चाहे वे कहीं भी हों, मामा उसके लिए तोहफे भेजते थे। वर्षगांठ तो उसकी इस तरह मनाई जाती, जैसे वह कोई शहज़ादी हो। मामा रेशमी कपड़े भेंट देते; नौकर-चाकरों को इनाम मिलता। जब वह सयानी हुई तो मामा ने अपनी जेब से दो-तीन सौ रुपये खर्चे थे।

सुजाता भी उनसे बहुत हिली हुई थी। मामा उसके लिए आदर्श पुरुष थे। मेले वगैरह में वे साथ जाते। समुद्र स्नान करने भी वह उनके साथ जाती। उनके घर तो वह प्रायः हर सप्ताह आती। वह मामा के बारे में लोगों से इस प्रकार कहती जैसे वे कोई पूज्य व्यक्ति हों। गांव

वाले उनके बारे में कानाफूसी भी करते।

वीरम्मा चाहती थी कि सुजाता की शादी रघू मामा से हो, पर मामा न माने। उन्होंने बहिन से कहा, "अपनी सुजाता किस्मत वाली है—मुझ जैसे गंवार के साथ उसको क्यों बाँधती हो? उसकी शादी ऐसे से होगी, जिसकी बराबरी करने वाला तालुके-भर में कोई न होगा।" उनके भाई नरसिंह मामा की भी यही राय थी।

बहिन खीझ गई। जीजा भी नाराज़ हुए। दोनों परिवारों में इस तरह के सम्बन्ध पीढ़ियों से होते आ रहे थे। यह एक प्रथा-सी थी। सुजाता भी खूब रोई-धोई, एक दिन तो वह कुएँ में भी जा कूदी। मुश्किल से जान बची।

यह सब एक-डेढ़ वर्ष पहिले की ही बात है। इस बीच में रघू मामा ने भाई के कहने पर, उन्हीं की चुनी हुई लड़की से शादी भी कर ली ताकि उनकी बहिन, सुजाता का विवाह लाचार हो किसी और व्यक्ति के साथ करे। रघू मामा को जब कभी अवकाश मिलता—और काम भी उन्हें क्या था!—काटूर चले जाते। बहिन को मनाने की कोशिश करते। भानजी से खेल-खिलवाड़ करते, जीजा के सामने सविनय हाथ मलते।

पर दुनिया तो लकीर की फकीर होती है। जहाँ कोई लकीर से हटा नहीं कि सब कोई अंगुली उठाकर दिखाते हैं। सुजाता और रघू मामा के बारे में लोग बे-सिर-पैर की उड़ाते आ रहे थे। कुछ बातें मामा के कानों में भी पड़ीं। कोटय्या को, जो गांव के गुण्डों में समझा जाता था, ऐसी बातें बकता देख उन्होंने उसे सरे-आम धुन भी दिया था। मामा ने उसे उस दिन इतना पीटा कि वह अब उनका जानी दुश्मन था। वह जात का ग्वाला था, अच्छा लठैत, कसरती शरीर।

दूल्हा रघू मामा का ही खोजा हुआ था। मद्रास के किसी कॉलेज में वह पढ़ रहा था। होनहार समझा जाता था। घराना भी पुराना था। पर अब वे तंगी में थे। लड़का देखने में भोला-भाला लगता था। आयु

लगभग बीस-इक्कीस की थी। मामा के कहने-सुनने पर ब्रह्मेश्वर राव जी पन्द्रह-बीस हजार का दहेज देना भी मान गए थे।

जब यह उनकी बहिन को बताया गया तो वे आँसू बहाने लगीं। पुरानी बातें उन्हें याद आती जाती थीं। उनके ढहे सपनों के ढेर में से अब एक टूटा-फूटा झोंपड़ा उठ रहा था। न वे ठीक तरह रो ही पाती थीं, न सन्तुष्ट ही हो पाती थीं। सुजाता पर तो कड़ा पहरा लगा दिया गया।

शहनाइयां बज रही थीं। मामा तनकर खड़े हो गये। सामने से एक लाल शाल के नीचे, दूल्हे के पिता, पांच-दस स्त्रियाँ और दो-चार सम्बन्धी आ रहे थे। शादी से पहले कोई रस्म अदा की जा रही थी। बराती पिछले दिन ही काटूर में आगये थे। वे मामा के किसी रिश्तेदार के घर टहराये गये थे।

बराती ब्रह्मेश्वर राव जी को अलग ले जाकर बातें करने लगे। उन्होंने मामा की तरफ नजर उठाकर भी न देखा। मामा उनकी ओर तिरछी नजर से देख रहे थे। दाल में कुछ काला नजर आता था, क्योंकि तब तक सारी बातचीत उनके और उनके भाई के द्वारा हुई थी। बातें जब जोर-जोर से होने लगीं तो नरसिंह मामा भी उनके पास खड़े हो गये।

"भले ही आज हम गरीब हों, पर हमारे खानदान की भी मान-मर्यादा है।" दूल्हे के पिता कह रहे थे और मामा कान लगाकर सुन रहे थे। "लेन-देन के बारे में हम बहुत पक्के हैं, नकद का हिसाब है। सारा-का-सारा दहेज, बीस हजार शादी के समय सबके सामने देना होगा।" कहते-कहते वे इधर-उधर देखने लगे।

मामा पैसे के बारे में उनकी चिन्ता समझ सकते थे। दो लड़कियाँ थीं, शादी की उम्र हो चुकी थी और बिना दहेज दिये उनकी शादी की नहीं जा सकती थी। इसी दहेज से वे उनकी शादी करना चाहते थे। लड़के को आगे पढ़ाने-लिखाने की व्यवस्था भी कर रहे थे। मामा

नी जगह से न हिले ।

"अगर यह बात अभी तय न हुई तो न जाने मुझे लाचारी में
या करना पड़ जाये !" दूल्हे के पिता गरम हो रहे थे। मामा उनकी
रफ बढ़े, किन्तु भाई को अपनी तरफ घूरता देख एकाएक रुक गये।

मामा ने पहले ही लड़के वालों से तय कर लिया था कि फिलहाल
वे बारह हजार रुपये नकद दे देंगे और बाकी आठ हजार फसल कटने
पर उनके घर भिजवा देंगे। इसलिये उनकी यह जिद उनको पसन्
न थी।

"हम वचन देकर कभी नहीं मुकरे हैं। हमारा विश्वास रखिये।"
नरसिंह मामा ने कहा।

"शादी-वादी के बारे में नकद का हिसाब ही अच्छा रहता है।
और ज्यादा क्या कहूँ? आप जानते ही हैं।" दूल्हे के पिता ने कहा।

"पर यह तो आप तब जानते थे जबकि मैं आपसे बातचीत करने
आया था। आप तब कहते तो हम रुपये का इन्तजाम कर देते। दो-
चार वर्ष से ठीक फसलें नहीं हुई हैं—नकद पास नहीं है, नहीं तो सारा
रुपया एक साथ दे देते। अब आप ऐन मौके पर तकाजा कर रहे हैं।"
रघू मामा ने कहा।

"आप अभी छोटी आयु के हैं, ये बातें आप नहीं जानते।" दूल्हे
के पिता ने सिर मोड़कर कहा।

"रघू, तुम संभलकर बात करो।" नरसिंह मामा ने अपने भा
को सावधान किया।

थोड़ी देर बाद नाक-भौं चढ़ाते हुए दूल्हे के पिता ने कहा, "
कहा जाय तो हमें यह शादी पसन्द नहीं है। हमें कुछ ऐसी बातें मा
हुई हैं कि अच्छा होगा अगर यह शादी ही न हो। वचन दे चुका हूँ
लाचारी है।"

"क्या बातें मालूम हुई हैं आपको? यह कम्बख्त गांव है,
ऊपटांग बकते रहते हैं। आप भी दो लड़कियों के बाप हैं, अ

विश्वास नहीं करना चाहिये।" ब्रह्मेश्वर राव ने कहा।

"जीजा, आप यह क्या कह रहे हैं?" मामा ने पूछा। "ऐसी कोई बात नहीं हुई है, जिसके लिये हमें शर्मिन्दा होना पड़े।"

"वह तो आप खुद जानते होंगे।" दूल्हे के पिता ने इस प्रकार ताना दिया जैसे वे मामा और सुजाता की बात शुरू से अन्त तक जानते हों।

"आपके किसने कान भर दिये हैं?" मामा ने पूछा।

"नाम की क्या जरूरत?"

"वेंकटेश्वर राव ने ही न?"

"रघू, रघू!" नरसिंह मामा ने उनकी तरफ गुस्से से देखा। मामा सटपटाकर पीछे हट गये।

"क्यों बात का बतंगड़ बना रखा है? सब आपकी इच्छा के अनुसार ही होगा, नहीं तो भगवान् हैं ही।" नरसिंह मामा ने कहा।

दूल्हे के पिता पण्डाल के एक कोने में रखी बेंत की कुर्सी पर बैठ गये। अभी भोजन का समय न हुआ था। स्त्रियाँ भी अन्दर बातचीत कर रही थीं।

चिन्तित हो, ब्रह्मेश्वर राव जी इधर-उधर चहलकदमी कर रहे थे। उनके घर में यह पहली शादी थी और वह भी 'प्रथमे ग्रासे मक्षिका पातः' की तरह हो रही थी। उन्होंने रुपये के लिए आदमी इधर-उधर दौड़ाये, पर गाँव में एकाएक दस-ग्यारह हजार नकद मिलना असम्भव था। जिनके पास मिल सकता था, वे वेंकटेश्वर राव के कहने पर पहले ही मुट्ठी बाँधे बैठे थे।

हताश हो ब्रह्मेश्वर राव चारपाई पर लेट गये। उनके सालों ने बहुत दौड़-धूप की, पर कहीं सफलता न मिली। नरसिंह मामा कार में कुप्पुर भागे, पर वहाँ भी न मिला। जमींदार रिश्तेदारों से पैसा माँगा जा सकता था पर किसी ने माँगा नहीं। सभी को मान-मर्यादा, वंश-परम्परा की पड़ी थी।

और दूल्हे के पिता इस तरह बड़बड़ा रहे थे कि अगर पैसा भी मिल

जाता तो भी वे विवाह के लिए राजी न होते। सुनते हैं उनको यहाँ
तक बताया गया था कि अगर लड़की की शादी हो भी गई तो दो-चार
दिन में वह अपने मामा के साथ भाग निकलेगी। साफ़-साफ़ कह न
पाते थे, इसलिए उन्होंने रुपये का पत्ता फेंका था और वे सफल होते
दिखाई देते थे।

रघू मामा यह सब जान गये थे। जब उन्होंने कोटय्या और उसके
साथियों को पण्डाल के आस-पास घूमते देखा तो उनका सन्देह और
भी पक्का हो गया। वेंकटेश्वर राव ने सब तैयारियाँ करवा रखी थीं।
यदि घटनाओं का क्रम वही रहता तो पण्डाल में ज़रूर लाठी चलती
और शादी भी न होती।

मामा पिछवाड़े में गये। वहाँ उनके भाई सुब्रह्मण्यं थे। उन्हीं के
जिम्मे भोजन आदि का प्रबन्ध था। मामा ने उनसे कहा, "तुम जाओ,
अतिथियों की देख-भाल करो—मैं यह काम कर लूँगा।" सुब्रह्मण्यं मामा
चले गये, और मामा कुछ सोचते-सोचते बीड़ी सुलगाकर बैठ गये।
वे फिर झट उठे और किसी के घर जाकर आये।

भोजन का समय हो गया था। बराती लोग भोजन के लिए बैठ रहे
थे और मामा दीवारों के ऊपर, पेड़-पत्तों के पीछे, पशुशाला में पागलों
की तरह घूम रहे थे। आखिर उन्हें वह चीज़ मिली, जिसे वे ढूँढते-से
लगते थे। तुरन्त वे पिछवाड़े में गये। रसोइये को बाहर भेजा और
स्वयं बालटी लेकर बरातियों को 'दाल' परोसने लगे।

दूल्हे के पिता सबसे आगे बैठे थे। उनके बाद उनके सम्बन्ध
कतार में थे। मामा उन सबको दाल परोस आये, किसी को कम किस
को अधिक, प्रत्येक को आवश्यकता के अनुसार।

खा-पीकर बराती अपने-अपने ठहरने की जगह चले गये। फिर ख
मिली कि उनमें से कई बुरी तरह उलटी कर रहे हैं। कई बेहोश थे।
हल्ला हो रहा था। किसी ने कहा कि ज़हर दे दिया गया है। डाक्टर
पास खबर भेजी गई। डाक्टर के आते-आते दो-तीन घण्टे गुजर गये

दूल्हे के पिता अब मरे, अब मरे की अवस्था में थे।

पुलिस को इत्तिला दी गई। ब्रह्मेश्वर राव के मकान के हर बर्तन को ग़ौर से देखा गया। हर चीज की जाँच-पड़ताल की गई। तहक़ीक़ात हुई। किसी कॉन्स्टेबल ने एक बाल्टी में मरी छिपकली देखी। बरातियों की बुरी हालत का कारण स्पष्ट था।

रग्घू मामा पिछवाड़े में खटिया पर बैठकर बीड़ी इस तरह पी रहे थे, जैसे कुछ हुआ ही न हो।

वह शादी न हुई। दूल्हे के पिता चल बसे थे। दूल्हा और बराती रोते-धोते चले गये। दुलहन लेने आये थे और मुरदे को ढोकर ले जाना पड़ा। खुशी-खुशी आये थे और मातम मनाते गये। सारा-का-सारा काम गड़बड़ा गया था।

शाम को नहर के किनारे शराब के नशे में, ताड़ के वृक्ष के नीचे लेटे अपने कुत्ते से कह रहे थे, "कर दिया छिपकली ने इनका हिसाब—नकद हिसाब। राघवैय्या भलों के लिए भला है और बुरों के लिए बुरा। खबरदार, नहीं तो संखिया खिला दूँगा।"

श्री ब्रह्मेश्वर राव जी के घर रोना-धोना हो रहा था। सब भाग्य को कोस रहे थे। मामा की बहिन की तो बुरी हालत थी। उन्होंने पाँच-दस दिन से अन्न छुआ तक न था। कभी रोतीं, कभी घण्टों चुप बैठी रहतीं। उनके पास जाते लोग घबराते थे।

ब्रह्मेश्वर राव आँगन में खटिया पर लेटे थे। वे एकाएक बूढ़े-से हो गये थे। शर्म के कारण कहीं जा नहीं पाते थे। न नींद थी, न खाना-पीना ही।

सुजाता तो बुत की तरह थी, निष्प्राण, निर्भाव-सी, पीली। किसी

से कुछ न बोलती, आँखें पथरा-सी गई थीं। वह भी खा-पी न पा रही थी। अभी जीवन की देहली पर ही थी कि देखते-देखते द्वार बन्द कर दिया गया। उसके सम्बन्धी उसको चारों ओर से घेरे हुए थे। उसको एक क्षण भी अकेली न छोड़ते थे।

ब्रह्मेश्वर राव के साले—नरसिंह मामा और सुब्रह्मण्यं मामा—घर में ही थे। उनकी हालत भी दयनीय थी। भानजी की शादी प्यार से कराने आये थे, पर कुछ-का-कुछ हो गया। बजती-बजती शहनाइयाँ सहसा रुक गईं।

रघू मामा का कहीं पता न था। बरातियों के जाने के बाद वे नहर की ओर गये, फिर घर वापिस न आये, कहीं गायब हो गये थे। उनको खोजने के लिए चारों ओर आदमी भेजे गये। भावुक व्यक्ति थे, उनके बारे में तरह-तरह के अनुमान लगाये जाने लगे। उनकी पत्नी का ख्याल था कि कहीं वे जग्गय्या-पेट—दूल्हे का स्थान—न पहुँच गये हों और बरातियों का 'लंका दहन' कर रहे हों। नरसिंह मामा को भी यह डर था।

सुनते हैं, वेंकटेश्वर राव ने पुलिस की जेबें गरम कर दी थीं। अफसरों तक को इत्तिला दे दी थी। वे स्वयं घर छोड़कर विजयवाड़ा भागे हुए थे। वे एक क्षण भी कहीं स्थिर न बैठ पाते थे। भय आदमी को उच्छृङ्खल बना देता है। कार में हमेशा उनके साथ दो-तीन आदमी रहते।

उन्होंने पुलिस से यह भी शिकायत कर दी थी कि रघू मामा हाथ धोकर उनके पीछे पड़े हुए हैं। पैसे वाले आदमी थे, पुलिस भी उनको बचाने का भरसक प्रयत्न कर रही थी। पर सबूत ही क्या था कि रघू मामा को गिरफ्तार करते! रघू मामा भले ही पैसे वाले न हों, भले ही वे अफसरों को न जानते हों, पर सारा तालुका उनके नाम से काँपता था। हर गाँव में उनकी अपनी टोली थी। मामा को तंग करना आग से खेलना था।

काटूर में वेंकटेश्वर राव का मकान खाली पड़ा था, सुनसान, भूतों

का अड्डा-सा। वे अपने परिवार को भी विजयवाड़ा ले गये थे। किवाड़ों पर बड़े-बड़े ताले लगे हुए थे। पाँच-छः लठैत घर का पहरा दे रहे थे। गाँव में सनातनी का वातावरण था।

गाँव का स्कूल भी बन्द था। मास्टर जाते तो बच्चे न आते। बच्चों में जाने क्यों, रग्घू मामा के लिए माँ-बाप से भी अधिक आदर था। वे कभी वेंकटेश्वर राव के घर पर ईंट-पत्थर फेंकते, कभी उनके घर के सामने नारे लगाते, जलूस निकालते। लठैत उनके पीछे भागते तो वे वेंकटेश्वर राव को गालियाँ देते-देते रफ़ू चक्कर हो जाते।

हर घर में इस घटना पर रह-रहकर बहस हो रही थी। यों तो विवाह के मौके पर किसी व्यक्ति का आकस्मिक रूप से मर जाना कहीं भी एक बड़ी घटना है, गाँव में तो कहना ही क्या! रग्घू मामा और वेंकटेश्वर राव को गाँव में न पा लोगों की जबान बेलगाम चल रही थी। यह स्पष्ट था कि मामला उतना साफ़ और सुलझा हुआ न था, जितना कि सतही तौर पर लगता था।

शाम को सुना गया कि रग्घू मामा अंगलूर में किसी रंडी के घर पड़े हुए थे, नशे में चूर, भयंकर अवस्था में। बहुत मनाने पर भी वे काटूर आने से इन्कार कर रहे थे।

अंगलूर काटूर से पाँच-छः कोस दूर है। न जाने रग्घू मामा सबकी नजर बचाकर वहाँ कैसे पहुँच गये थे। खबर लाने वाले को कार में बिठाकर नरसिंह मामा स्वयं अंगलूर की ओर चल दिये। कार वही थी, जिसमें वर-वधू को बिठाकर गाँव में जलूस निकालना था। सजाई गई थी, पर वह अब एक विधवा-सी लगती थी।

नरसिंह मामा यह न चाहते थे कि उनके भाई के बारे में कोई और कुछ जाने। और कोई जाता तो गाँव में व्यर्थ में हो-हल्ला मच जाता और फिर रग्घू मामा शायद आते भी न।

रात को करीब आठ बजे रग्घू मामा घर आये। उनको देखकर लगता था, जैसे किसी ने उनको भून दिया हो। कपड़े वही थे, जो पाँच दिन

पहिले पहने थे। आँखें खुली थीं, पर किसी को देखती न लगती थीं। दाढ़ी बढ़ी हुई थी। वे एक-दो बार दरवाजा पार कर आँगन में लड़खड़ाये भी। किसी से कुछ न कहा। चुप थे। जाकर फिर कार में बैठ गये। उनके भाई उनकी हालत जान गये और अपने साथ उनको उनके घर ले गये।

नहर के उस पार काटूर वालों की जमीन है और इस पार कडवाकोल्लु की। नहर सीमा है। नहर के कारण ही वह इलाका हरा-भरा है। बुजुर्गों का कहना है कि यहाँ पहले या तो रेती थी नहीं तो दलदल। जमीन की कोई कीमत न थी। आज एक-एक एकड़ पाँच-पाँच हजार में विकता है।

नहर से सटा, वेंकटेश्वर राव का सौ एकड़ का एक ही खेत है। इस पार भी सात-आठ एकड़ का अमरूद का बाग है। यह पहले रघू मामा के किसी दूर के सम्बन्धी का था, जो अब गाँव छोड़कर कहीं और मजदूरी-मशक्कत कर रोजी कमा रहे हैं। वेंकटेश्वर राव के पास उन्होंने यह बाग गिरवी रखकर कर्ज लिया था। कर्ज न चुका पाये और जमीन भी खो बैटे। इस जमीन के अतिरिक्त वेंकटेश्वर की और दो-ढाई सौ एकड़ जमीन इधर-उधर फैली पड़ी है। आस-पास के इलाके में वे ही सबसे बड़े किसान हैं। जमींदारों को भी उन्हीं पर भरोसा था। अफसर भी उनके यहाँ पड़ाव डाला करते थे। वे बहुत पैसे वाले हैं। कहने वालों का कहना था कि उनके घर में तिजोरियाँ जेवर-जवाहरातों से भरी पड़ी थीं।

अच्छा-बड़ा पक्का मकान है। एक-डेढ़ एकड़ का चारों ओर दालान है। कई जोड़ी बैल हैं। हमेशा उनके गोदाम चावल से भरे रहते। फसल के दिनों में वे चावल का व्यापार भी करते। अपना धान तब बेचते, जब सबका खतम हो जाता। खासा दाम पाते। दो तीन

चावल की मिलों में उनका साझा भी था।

पिछले दिनों वे वुय्युर की शुगर मिल में डायरेक्टर भी हो गये थे। वुय्युर हमारे गाँव से कोई दो-ढाई मील दूर है। वहाँ मुसलमानों की आबादी अधिक है। बढ़ई, लोहार आदि रहते हैं। यह बन्दर—विजयवाड़े के रास्ते में है। अब तो यह बड़ा कस्बा हो गया है। पर उन दिनों न आबादी ही बड़ी थी, न बस्ती ही। काम-कारोबार भी अधिक न था।

पर जब से शुगर मिल चली है, तब से वुय्युर की रौनक बढ़ गई है। समीपस्थ गांव भी सम्पन्न हो गये हैं। पहले जहां धान लहलहाता था, अब गन्ना झूमता है। मिल के कारण कई गरीब बेरोजगारों को नौकरी भी मिल गई है। जिन्होंने पैसा लगाया था वे और अधिक पैसे वाले हो गये हैं।

तालुके-भर में शायद वेंकटेश्वर राव ही एक ऐसे हैं जिनके पास अच्छी कार है। पहले कभी शेवरलेट थी, आजकल ब्यूक है। पर वह ऐसे रखी जाती है जैसे कोई मन्दिर का रथ हो। जब कोई बड़ा अफसर या शुगर मिल के डायरेक्टर आते हैं, तभी उस पर सवारी होती है, अन्यथा पुराने जमाने की बग्गी या एक बैल की गाड़ी से काम चला लिया जाता है।

रघू मामा के वंश का इतिहास तो काकतीय काल से भी मिलता है। पर वेंकटेश्वर राव के परिवार का इतिहास शायद उनके दादा सोमशेखर शर्मा से ही प्रारम्भ होता है। वे कोनमूरु में रहा करते थे। वुय्युर के पास नहर के किनारे यह गांव है। पूजा-पौरोहित्य करके जीवन-निर्वाह करते थे। ज्योतिष और जन्म-पत्री भी लिखकर दो-चार पैसे बना लेते थे। हरिकथा भी करते थे। गांव के करणं (मुन्शी) से भी रिश्तेदारी थी। इसलिये भूमि की पैमाइश वगैरह जानते थे। लोग उनसे दस्तावेज आदि भी लिखवा लेते थे। बुद्धिमान और समझदार समझे जाते थे।

हरिकथा करते-करते वे नूजवीड के इलाके में पहुँच गये। मामा के

परदादा को हरिकथा का बहुत शौक था। उन्हें सोमशेखर शर्मा की हरि-कथा बहुत भाई। उन्होंने उनका बहुत आदर-सत्कार किया। और जब उनकी बताई हुई दो-तीन ज्योतिष की बातें सच निकलीं तो वे काफी प्रभावित हुए। उनको ज्योतिष का व्यसन था। उन्होंने सोमशेखर शर्मा को अपने यहां नौकर रख लिया। शायद दस-पन्द्रह रुपये वेतन था।

रघू मामा के परदादा, नरसिंह प्रसाद वस्तुतः नूजवीड के वास्तव्य न थे। वे वहां दामाद होकर आये थे और वहीं ससुराल में बस गये थे। उनकी पत्नी अपने मां-बाप की इकलौती थीं। पुराना रिश्ता था। काफी बड़ी जमीन-जायदाद थी। ससुर गुजर चुके थे। एक दीवान भी रखा हुआ था। वे दान-धर्म के लिये प्रसिद्ध थे। उनके घर से कोई भी खाली हाथ न जाता था। कई संस्थाएँ उनके दान पर चलती थीं।

वे दिन-रात पूजा-पाठ में लगे रहते, नहीं तो ज्योतिष के चक्कर में फंसे रहते। रसिक प्रकृति के भी थे। दीवान सारा काम करता था। उनके पास कागज़ात हस्ताक्षर के लिये आ जाते। यह उनका अपना ही आदेश था।

सोमशेखर शर्मा उनकी खुशामद करने लगे। दिन-रात उनकी जी-हजूरी करते। ऐसे कई बेहूदे काम भी वे उनके लिये करते, जो दूसरे करते हिचकते थे। वे छुटे तिकड़मबाज थे। दीवान के बारे में वे नरसिंह प्रसाद के कान भरने लगे। और जब दीवान अचानक मर गये तो रघू मामा के परदादा ने वेंकटेश्वर राव के दादा को दीवान बना दिया। कइयों का यह भी कहना था कि सोमशेखर शर्मा ने पुराने दीवान को नौकरों द्वारा विष दिलवाया था।

भगवान् जाने यह कहां तक सच है और कहां तक झूठ। पर इतना सब जानते हैं कि सोमशेखर शर्मा ने जाली दस्तावेज बनाकर नरसिंह प्रसाद की बहुत सी सम्पत्ति हड़प ली थी। जैसे-जैसे नरसिंह प्रसाद की आर्थिक स्थिति गिरती जाती थी, वैसे-वैसे सोमशेखर शर्मा की स्थिति बनती जाती थी। पर तब भी वे ऐसे रहते जैसे भिक्षा मांगकर जीवन-

यापन कर रहे हों।

नरसिंह प्रसाद की पत्नी की ढाई सौ एकड़ उपजाऊ जमीन काटूर के पास थी। जब पैसे की आवश्यकता पड़ी तो उन्होंने ये जमीनें बिकवानी चाहीं। सोमशेखर शर्मा ने अपने किसी मित्र के साथ साझा किया और उनके नाम सस्ते में जमीन बेच दी। पर इस साझे के बारे में तब किसी को न मालूम था।

जब नरसिंह प्रसाद की पत्नी गुजर गई तो उन पर काफी कर्ज था। जमीन जायदाद भी बहुत कम होगई थी। गुडीवाड के आस-पास सौ-डेढ़ सौ एकड़ के बाग-बगीचे रह गये थे—और एक बड़ा मकान, जिसकी अब टूटी दीवारें रह गई हैं। जैसे-तैसे मान-मर्यादा निभाते हुए गुजारा चल रहा था। तभी सोमशेखर शर्मा ने उनकी नौकरी छोड़ दी। वे काटूर में आ बसे। नरसिंह प्रसाद के गुजर जाने पर सोमशेखर शर्मा ने अपने मित्र से जमीन वसूल करली। तब उनकी पचास वर्ष की आयु थी।

वेंकटेश्वर राव की जमीन-जायदाद यद्यपि किसी की दान थी या धोखे में हथियाई हुई थी, तो भी न वेंकटेश्वर राव ने, न उनके बाप-दादाओं ने एक पाई भी किसी भूले-भटके को दान में दी। उनके नाम से एक भी मन्दिर में दीया नहीं जला। ऐसी कोई संस्था नहीं थी, जिसकी दाताओं की सूचि में उनका नाम हो। माने हुए कंजूस थे।

पैसे वाले थे और बदनाम भी। गांव में उनके कई शत्रु थे। मजदूर वगैरह भी भगवान् से मिन्नत करते थे कि वे जल्दी मरें और भूमि का भार हल्का हो। शायद पापियों की आयु अधिक होती है। वेंकटेश्वर राव चालीस-पैंतालीस के हो रहे थे, पर ऐसे लगते थे जैसे तीस की चढ़ती जवानी में हों। हरकतें भी जवानों की-सी थीं।

राम-नाम जपते-जपते विरक्त होना तो अलग, वे जीवन से और भी आसक्त हो गये थे। उन्होंने कई गुण्डों को पाल रखा था। कोटय्या उनका सरदार था। गाँव में उनकी कद्र करने वाले कम थे, होने को उनके भी कई खुशामदी पिट्ठू थे।

ब्रह्मेश्वर राव काटूर गाँव के प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। खानदानी आदमी हैं। बाप-दादा पैसे वाले थे। उनकी स्थिति भी खराब नहीं है। कभी सारा गाँव उनके पुरखों के अधीन था। आजकल वे केवल मुखिया-मात्र रह गये हैं। गाँव का स्कूल, जो कभी उनके बाप-दादाओं ने बनवाया था, अब भी उन्हीं के दान पर चलता है।

उनकी जमीनों की सरहद वेंकटेश्वर राव की जमीनों से मिलती है। पानी के बारे में कभी-कभी रगड़-झगड़ भी हो जाती थी। वेंकटेश्वर राव उनके खेत में अक्सर गाय-भैंस हाँक देता, तंग करता। ब्रह्मेश्वर राव चुपचाप सहते गये। वेंकटेश्वर राव की धाँधली बढ़ती गई। आखिर उन्हें लाचार हो अपने सालों को खबर देनी पड़ी।

तब से रग्घू मामा की वेंकटेश्वर राव के आदमियों से कई बार ठन चुकी थी। एक बार तो ऐसी मारामारी हुई कि नहर का पानी भी लाल हो गया। वेंकटेश्वर राव ने बुय्युर से मुसलमान गुण्डे बुला लिये थे। गण्डिगुण्टा से कुछ आदमी मामा की सहायता करने आये। गण्डिगुण्टा कम्माओं का गाँव है। बुय्युर के मुसलमान उन्हीं के भरोसे जीते हैं। उनको देखते ही वे मैदान छोड़कर भाग गये।

कुछ दिन तो वेंकटेश्वर राव चुप रहे, फिर वही पुरानी करतूतें शुरू कर दीं। काटूर में भी कम्मा जाति के लोग ही अधिक हैं, इसलिए वे अधिक न कर पाते थे। अफसरों से चुगली करते फिरते। उनकी हमेशा यह शिकायत रहती कि उनका उतना आदर नहीं हो रहा था जितना कि एक पैसे वाले का होना चाहिये था।

जिस साल वेंकटेश्वर राव कुछ गड़बड़ी करते, नहर के इस पार वाले अमरूद के बगीचे में से उनको कानी कौड़ी न मिलती। उल्टा माली का वेतन उनको अपनी जेब से देना होता। अगर कभी उनको एक-डेढ़ रुपये मिल भी जाते तो रग्घू मामा की मेहरबानी समझिये। हमारे गाँव के लड़कों को हर साल अमरूद मुफ्त मिल जाते थे।

रग्घू मामा के भाइयों की जमीनें भी अमरूद के बाग से सटी थीं।

वेंकटेश्वर राव ने जब बाग बेचना चाहा तो कोई खरीदने वाला नहीं आया। सब जानते थे कि रघू मामा की और उनके भाइयों की नजर उस बाग पर थी। कोई उनसे दुश्मनी मोल लेना नहीं चाहता था। और वेंकटेश्वर राव रघू मामा के भाइयों को बाग बेचने के लिये तैयार न था।

रघू मामा की तबीयत कुछ सुधरी। पन्द्रह-बीस दिन से वे बिस्तरे पर पड़े हुए थे। बीमारी क्या थी, कोई भी न बता सका। डॉक्टर ने बुखार का इलाज किया।

जब तक मामा बीमार रहे, तब तक उनका हिन्दी-अध्यापक नियमित रूप से रामायण का पाठ कर जाता। मामा के भाई, नरसिंह मामा ने उत्तर से एक हिन्दी-पण्डित को बुला रखा था। नहर के किनारे, पुल के पास एक छप्पर में पाठशाला चलती थी। वहाँ हिन्दी और अन्य विषयों का अध्यापन भी होता था।

मामा की पत्नी, अन्नपूर्णा ने वीरम्मा के मन्दिर में पूजा-पाठ करवाया। ब्राह्मणों को भोज दिया। गरीबों को अन्न दान दिया। वीरम्मा गाँव की अधिष्ठात्री देवी हैं। अन्नपूर्णा मामी धार्मिक प्रकृति की थीं।

मामा ने वेंकटेश्वर राव के बारे में कुछ न कहा, न कोटय्या के बारे में ही। पुलिस जब पूछताछ के लिए आई तब भी वे मौन-से रहे। सिर्फ इतना ही कहा, "क्या छिपकली मेरे हुक्म पर गिरी थी?"

अन्नपूर्णा मामी प्रसाद लेकर पहुँचीं तो मामा डण्डा लेकर, सिर पर तौलिया डाल कड़ी धूप में कहीं जाने को तैयार हो रहे थे। कमजोरी थी। चाल में भी चुस्ती न थी। फिर धूप ऐसी कि स्वस्थ आदमी भी घर से बाहर निकलने की हिम्मत न करे। झुलसाने वाली लू। मामी उनको देखते ही घबरा गईं।

"कहाँ जा रहे हैं?" मामी ने पूछा।

"कितनी बार कहा कि आदमी जब कभी कहीं जा रहा हो, उससे ह न पूछा करो। यह अपशकुन होता है।"

"पर आपकी......।"

"मैं ठीक हूँ, जरा बाहर जा रहा हूँ।"

मामा चलते जाते थे। मामी उनकी ओर देखती जाती थीं, किं-कर्तव्य विमूढ़ा-सी। मामा नहर की ओर जा रहे थे, काटूर के रास्ते पर। मामी का भय और बढ़ा। वे चुपचाप नरसिंह मामा के घर गईं। उनको अपने पति के बारे में बताया। वे भी कुरता पहिनकर झट निकल पड़े।

नरसिंह मामा के आते-आते मामा पुल पार कर चुके थे और काटूर के तालाब के पास पहुँच रहे थे। तालाब के किनारे ताड़ और अन्य पेड़ों का घना झुरमुट है। दिन में भी वहाँ लोग आते-जाते घबराते हैं। दिन-दहाड़े वहाँ चोरियाँ होती थीं, रात को तो दिलेर ही उस तरफ जा पाते थे।

नरसिंह मामा आवाज़ देते जाते थे और जल्दी-जल्दी चलते जाते थे। अधेड़ हो गये थे, जल्दी चल भी न पाते थे। उनको आशंका थी कि कहीं तालाब पर वेंकटेश्वर राव के आदमी न हों। उनकी आवाज सुनते ही मामा रुक गये और पास वाले पेड़ के नीचे हाँफते-हाँफते खड़े हो गये। अभी तीन-चौथाई रास्ता बाकी था। काटूर, कडवाकोल्लु से एक-डेढ़ मील दूर है।

"इस धूप में तुम कहाँ अकेले निकल पड़े?" नरसिंह मामा ने पूछा।

"बहिन के यहाँ जा रहा हूँ।"

"इतना भी क्या काम था? दो-चार दिन बाद चले जाते।"

"जाना ही है...।" कहते-कहते मामा के आँखों में तरी आ गई।

"यह सब मेरी वजह से हुआ है। भैया, आप नाराज तो नहीं हैं?" मामा ने सिसकते हुए पूछा।

"इसमें नाराज होने की क्या बात है ? जो कुछ तुम कर सकते थे, तुमने किया। भगवान् ने साथ नहीं दिया। तुम क्या कर सकते हो और मैं क्या कर सकता हूँ ?" कहते-कहते नरसिंह मामा का भी गला रुंध गया।

रास्ता सुनसान था। धूप के मारे पक्षी भी डालों पर पत्तों की छाँह में बैठे थे। खेतों में कोई न था। कापूर पास आ रहा था।

"देखो, जल्दबाजी में कुछ न करना। नहीं तो ब्रह्मेश्वर राव का इस गांव में रहना मुश्किल हो जायेगा। भगवान् वेंकटेश्वर राव को दण्ड देंगे ही। किसी का बुरा कर कोई आदमी भला नहीं रह सकता।" नरसिंह मामा ने कहा।

रग्घू मामा चुप रहे।

जीजा के घर पहुँचते ही नरसिंह मामा ब्रह्मेश्वर राव से चोपाल में ही बातचीत करने लगे और मामा सीधे अन्दर चले गए। उनकी बहिन चारपाई पर लेटी हुई थीं। मामा भी एक खटिया पर जा लेटे। वे न खड़े रह पाते थे, न बैठ ही पाते थे। पसीने से तर थे। पैर काँप रहे थे।

उनको उस हालत में देखकर उनकी बहिन फूट पड़ीं। जब कोई उनको देखने जाता तो वे आँसू बहाने लगती थीं। भाई को देखकर तो वे अपने दुःख पर कैसे संयम रख सकतीं ?

थोड़ी देर बाद उन्होंने पूछा, "कैसी है तेरी तबीयत ? अच्छी है ?" वे उनको कमजोर देखकर शायद अपनी दयनीय हालत भूल रही थीं।

मामा बहुत-कुछ कहने के लिये आये थे पर कुछ कह न पाये। तकिये पर सिर रख बिलखने लगे। उनकी बहिन पंखा झलती जाती थीं। सगे-सम्बन्धियों ने भी मामा को बुरा-भला कहा था। पर उनकी बहिन ने एक कड़वी बात भी उनके बारे में जबान से फिसलने न दी थी।

शाम तक मामा वहीं सोते रहे। न जाने कब उनकी आँखें मिच गईं। उठने पर उनको बुखार था, पर वे अपने को स्वस्थ अनुभव कर रहे थे।

"मैंने सुजाता के बारे में एक बात सोची है और उसे कहने लिए इतनी दूर चला आया हूँ।" मामा ने कहा।

"स्वस्थ तो हो जाते, मैं ही तुम्हारे जीजा को भेज देती।"

"जीजा नाराज तो नहीं हैं?"

"क्यों नाराज होंगे? अपना-अपना भाग्य है। तुम्हारा क्या दोष है?"

मामा के आँसू टपकने लगे। उनको रोता देख उनकी बहिन भी देहली के पास बैठ गईं। मामा बहुत सोच-विचारकर आये थे कि वे रोयेंगे-धोयेंगे नहीं, पर लाचार थे।

"सुजाता अच्छी है न?"

"हाँ, उसकी क्या पूछते हो?"

"वह जब तक यहाँ रहेगी वैसी ही रहेगी। नादान लड़की है। यह सब न समझ पायेगी। उसके लिए यहाँ आराम से रहना एकदम असम्भव है।"

"तो और कहाँ रहेगी?"

"स्कूल फाइनल उसने पास कर लिया है। मद्रास के कॉलेज में पढ़ाओ। पढ़ाई की पढ़ाई होगी, जी का जी बहलेगा। यह कहने के लिए ही मैं इस हालत में चला आया हूँ।" मामा ने एक लम्बा निःश्वास छोड़ा, जैसे दिल पर से कोई भार सहसा हट गया हो।

"स्कूल फाइनल तक पढ़ाने पर ही शादी करनी मुश्किल हो गई। ज्यादा पढ़-लिख जाएगी तो और आफत।"

"इतने कड़वे अनुभव के बाद क्या अब सुजाता तुरत शादी करना चाहेगी? क्या हम कर सकेंगे? मेरी बात मानो भी, जीजा को तो कोई एतराज न होगा?"

"होना तो नहीं चाहिए···पर·····"

"झिझको नहीं, वक्त नहीं रह गया है। जुलाई में कॉलेज खुलता है। भरती कराने भैया चले जायेंगे।"

"भैया की भी क्या यही राय है ?"

"भैया से मैंने इस बारे में बातचीत नहीं की। तुम्हीं अच्छी तरह कर पाओगी। यह काम तुम्हारा रहा।"

"कितना पैसा लगेगा ?"

"कितना भी लगे, सब इन्तजाम हो जायेगा।"

मामा सुजाता से बातचीत करने चले गए और उनकी बहिन अपने भाई से।

आठ-नौ बजे के करीब बहिन और जीजाजी के बहुत सावधान करने पर भी मामा और उनके भाई अपने गाँव वापिस चले आये।

नरसिंह मामा और रघू मामा दोपहर को ही सुजाता को लेकर विजयवाड़ा चले गए। मामा एकाएक स्वस्थ हो गये थे। आश्चर्य होता था।

साधारण परिस्थितियों में सुजाता यदि कालेज जा रही होती, तो जाने वह कितनी धूमधाम से भेजी जाती। पर आज परिस्थितियाँ कुछ और थीं। ब्रह्मेश्वर राव किसी को यह जानने भी न देना चाहते थे कि सुजाता कहाँ जा रही है और क्यों जा रही है। वे विजयवाड़ा भी न गए। कहीं ऐसा न हो कि जान-पहिचान के आदमी शादी के बारे में कुछ पूछ बैठें और बेकार में उनकी तौहीन हो।

मामा सुजाता को छोड़कर तुरत घर वापिस न आये। उड़ती-उड़ती खबरों से पता चला कि वे वेंकट सुब्बय्या के घर भी न ठहरे थे। वे उनके सम्बन्धी थे और नगर में प्रतिष्ठित वकील थे। नरसिंह मामा प्रायः उन्हीं के घर ठहरते थे।

फिर सुशीला के किसी सम्बन्धी से मालूम हुआ कि वे उसके यहाँ चले गए थे। वह लब्बी-पेट में नहर के किनारे एक झोंपड़े में रहती थी। मामा का उससे बहुत पुराना परिचय था। उसकी आयु तब कोई बीसएक

वर्ष की होगी। वह हमारे गाँव के हरिजन-वाड़े की थी। वह जात की 'माला' थी—आन्ध्र की पंचम् जाति।

वह उन दिनों विजयवाड़ा के एक हास्पिटल में नर्स का काम करती थी। मामा की सहायता से वह थोड़ा-बहुत पढ़-लिख पाई थी। उन्हीं की कृपा से उसको नौकरी भी मिली थी।

अमावस की रात-सी स्याह, ऊँचे उभरे दाँत, बड़ी-बड़ी आँखें, चपटी नाक,—उस जैसी बदसूरत स्त्री ढूँढे भी न मिलती। पर कहते हैं वह बड़ी चुलबुली थी। उसमें कोई खास आकर्षण था। बातें खूब बनाती। बड़ी बेशर्म।

मामा जब दो-चार दिन तक न आये तो कल्पना की गई कि वे ताडेपल्लि गूडिम चले गए होंगे। मामा दो-तीन बार महीने में वहाँ हो आते थे। कई बार तो वहीं पाँच-दस दिन रहते। और जब वहाँ से गाँव वापिस आते तो हमारी दावत होती। खाने की चीजें लाते, खिलौने वगैरह भी बटोर लाते। मामा के मुँह पर तब एक नई रौनक रहती। प्रसन्न दिखाई देते।

बड़े होने पर हमें बताया गया कि मामा का किसी गुट से सम्बन्ध था। वह गुट काफी दूर-दूर तक काम करता था। उसके मामा सरदार समझे जाते थे। अधिक रुपये-पैसे की जरूरत होने पर वे ताडेपल्लि गूडिम चले जाते। मामा ताश खेलने में बहुत माहिर थे, पर अपने गाँव में वे भूलकर भी ताश न छूते थे।

फिर हमारे सुनने में यह भी आया कि यह गुट रातों-रात मालगाड़ी [व]गैरह भी लूट लेता था। बड़े-बड़े आदमी इन डकैतियों में हिस्सेदार [थे]। पुलिस वालों को भी अच्छी रिश्वत दी जाती। ये घटनाएँ प्रायः [न] होतीं, पर जब होतीं तो कोई पकड़ा न जाता। लोगों का मामा पर [स]न्देह होता। हमें नहीं मालूम कि मामा का इन घटनाओं में कितना [हा]थ था।

मामा के साथ कड्वाकोल्लु प्रकाश राव भी आये। प्रकाश राव ताडेपल्लि गूडिम के एक बड़े रईस थे। उनकी दो-तीन चावल की मिलें थीं। सैंकड़ों उपजाऊ एकड़ों के वे मालिक थे। पहुँचे हुए अय्याश समझे जाते थे।

सरकारी नौकरों पर जितनी उनकी धाक थी, कहा जाता है; उतनी किसी और की न थी। उन्हें साहित्य का शौक था। नाटकों का तो बुरा व्यसन था। कई कवि, लेखकों को उन्होंने अपनी उदारता का परिचय दिया था। राजनीति में भी हाथ-पैर पटकते थे।

आज तो लोग यह भी कहते हैं कि उन्होंने जाली रुपया भी बनाया था। पुलिस जब सतर्क होती तो घूस दे-दाकर उनको खामोश कर दिया जाता। प्रकाश राव के माँ-बाप मामूली किसान थे। व्यापार आदि में इतना रुपया बना लेना युद्ध के दिनों में भी आसान न था। यों तो वे लड़ाई से बहुत पहले ही धनी हो गए थे।

यह भी लोगों का कहना था कि जाली रुपयों के बनाने में मामा का भी साझा था। कारण दिया जाता था कि मामा बिना किसी काम-धन्धे के ऐसे रहते थे मानो कोई अमीर-उमराव हों। रहते तो वे झोंपड़ी में ही थे, पर उनके ठाटबाट ऐसे थे, जैसे महलों में रहने वालों के भी नहीं होते।

प्रकाश राव प्रायः मामा के साथ कड्वाकोल्लु पैदल आते। कार वुय्युर के डाक बंगले में छोड़ दी जाती थी। वे प्रायः ऐसे समय ही आया करते जब नरसिंह मामा घर में न होते। उनको प्रकाशराव का आना-जाना पसन्द न था।

घर के पिछवाड़े में इमली के पेड़ के नीचे, चौकड़ी लगती। मामा बीड़ी सुलगाकर खाट पर बैठ जाते, प्रकाश राव सिगरेट फूँकते। सुब्बाराव मामा के पीछे जमीन पर धरना देता। पोतुडु दूर हाथ जोड़े खड़ा रहता। पोतुडु मामा का चमार था। वह मामा का हर काम करता। सिवाय हम बच्चों के कोई गांव वाला उस तरफ गलती से भी नहीं भटकता।

"इस वेंकटेश्वर राव को जरा सबक सिखाना है। अफसर लोगों को जानता है, इसी धौंस में है। तुम ज़रा इन अफसरों से कहना।" रग्घू मामा ने कहा।

"हाँ, हाँ जरूर, पूरे लाख रुपये दिये हैं वार-फ्रण्ट के लिये। इतनी तो सुनेगी ही सरकार।" वे कुछ सोचते-सोचते बैठ गए। बाद में बहुत सारी बातें हुईं।

भोजन का समय हो गया था। मामा और उनके दोस्त घर में भोजन के लिए चले गए। मैं खेलता-खेलता नहर के पुल पर पहुँच गया। गांव में यह ही एक जगह थी, जहाँ बिना साथी के दिल बहलाया जा सकता था। शायद प्रकृति का आनन्द एकान्त में ही है।

कडवाकोल्लु गांव बहुत छोटा है। अधिक आबादी उन दिनों ब्राह्मणों की थी। किसान भी थे, पर कोई खास बड़े न थे। किसी के पास भी बीस एकड़ से ज्यादा जमीन न थी। रामस्वामी ही गांव का सबसे बड़ा किसान था। वह भी कम्मा था।

कडवाकोल्लु के पास ही पटलापाडु है—दो फर्लांग की दूरी पर। नरसिंह मामा ने अपना घर कडवाकोल्लु में बना रखा था। आस-पास कोई घर न था। रग्घू मामा का घर कडवाकोल्लु और पटलापाडु के बीच में था, खेत में।

पटलापाडु भी बहुत छोटा गांव है। लगभग सारे घर कम्माओं के हैं। दो-तीन घर 'कापुओं' के हैं और दो-चार घर दूसरी जात वालों के। यह गांव नरसिंह मामा पर जान देता था। मामा के घर के सामने गूडिम—हरिजनवाड़ा है। यहाँ एक भी पक्का मकान नहीं है। झोंपड़ियाँ भी टूटी-फूटी हैं। यद्यपि एक पक्का गिरजा जरूर है। हरिजनवाडा में हर जात की अपनी पार्टी है। कभी वे ब्राह्मणों की ओर बोलते हैं, तो कभी नरसिंह मामा की ओर। प्रायः नरसिंह मामा को ही उनका समर्थन मिलता रहा है।

हरिजनवाडा से हटकर दो फर्लांग की दूरी पर वीरवल्ली है। यह

मुखासादार रहता है। दो-चार घर ब्राह्मणों के हैं। पांच-दस कम्माओं के, दस-पन्द्रह कापुओं के, और बाकी ग्वालों के हैं। उन्हीं की संख्या अधिक है।

ग्वाले और कम्मा तो प्रायः नरसिंह मामा का ही साथ देते थे। कापू, मुखासादार ब्राह्मण की ही हाँ-हाँ करते। उन पर प्रकाश राव का काफी प्रभाव था। वे स्वयं कापू थे। प्रायः मुखासादार कापू और कम्माओं को आपस में भिड़ाकर अपना उल्लू सीधा करता। दोनों पार्टियों में तनातनी बनी रहती।

इन चारों गाँवों का एक ही मुन्सिफ—ग्रामाधिकारी था और एक ही कर्णं। मुन्सिफ वीरवल्ली का ग्वाला था और कर्णं कडवाकोल्लु का ब्राह्मण। मुन्सिफ मुखासादार की सुनता तो कर्णं नरसिंह मामा के इशारे का पालन करता।

नरसिंह मामा चारों गांवों के मुखिया थे। बुय्युर के जमींदार, जिनकी जमींदारी में कडवाकोल्लु आता था, उनके अपने निजी मित्र थे। उनकी सिफारिश उन्होंने कभी भी न ठुकराई थी। वे मामा के हिन्दी पाठशाला के लिए भी पर्याप्त सहायता दे रहे थे। मामा के कहने पर उन्होंने कई विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियाँ दे रखी थीं। इसलिए मुखासादार, जो उनका नमक खाता था, उनसे घबराता भी था।

मैं पुल पर बैठा दूर कहीं देख रहा था कि रग्बू मामा, प्रकाश राव, सुब्बाराव, पोतुडु उस तरफ आ पहुँचे। प्रकाश राव मुश्किल से चल पा रहे थे। मामा के हाथ में मोटा डंडा था। मैंने सोचा कि वे शायद काटूर जा रहे हैं। पर वे पटरी पर मुड़ गए, कुन्देरु की ओर जाने लगे। कुन्देरु हमारे गांव से दो मील की दूरी पर एक सम्पन्न गाँव है। उसमें कम्मा घर ही अधिक हैं। अधिक जमीन-जायदाद भी उन्हीं के हाथ में है। कुन्देरु और काटूर की जमीनें मिलती हैं। वेंकटेश्वर राव की कुछ जमीनें वहाँ भी हैं।

उस समय तो कुछ समझ में न आया था, पर आज एक-एक बात

को मिलाकर देखने से आश्चर्य होता है। मामा किसी से कभी सला
मशवरा न करते। जो कुछ उन्हें सूझता, वे करते। न समाज से डरते
सरकार से ही।

शाम को मामा और प्रकाश राव नहर के किनारे-किनारे चले आ
रहे थे। मामा सबसे आगे थे। प्रकाश राव बीच में और सुब्बाराव पीछे
पीछे। और उनके पीछे कुन्देरु के तीन लठैत। अन्धेरा हो रहा था।

कई का कहना था कि वेंकटेश्वर राव फिर काटूर न आयेंगे। वे
विजयवाड़ा में कुछ व्यापार भी करने लगे थे। कभी-कभी बुय्युर तक दो-
तीन आदमियों के साथ आते और खेतीबाड़ी का पैसा वसूल करके चले
जाते। काटूर में उनके मकान पर पहरा रहता। उनके भाई-बन्धु उनकी
सम्पत्ति की देख-भाल करते।

वेंकटेश्वर राव के भड़काने से उनके घर में इतनी बड़ी दुखद् घटना
हुई थी, तो भी वे शान्त थे। अगर मामा चाहते तो उनका उस गांव में
नामोनिशान तक न रहता।

गाँव वालों को यह समझ में नहीं आ रहा था कि रग्घू मामा इतने
दिनों तक क्यों चुप हैं। कोई कहता कि वे सुधर गए हैं, कोई कहता कि
भाई के कहने पर वे दबे हुए हैं। कोई कुछ कहता तो कोई कुछ। पर
इतना अवश्य था कि रग्घू मामा को सक्रिय न पा उनका आतंक कम ही
मालूम होता था। पीठ पीछे बातें करने वाले बहुत सारे दुमदबाऊ
दिलेर पैदा हो गए थे।

रग्घू मामा प्रायः अंगलूर में मस्त पड़े रहते। वेश्या के यहाँ रातः
दिन काट देते। उनका कई स्त्रियों से सम्बन्ध था, पर यह नहीं कहा जा
सकता था कि उनके कारण कोई स्त्री कभी बिगड़ी है। वे बिगड़ी
स्त्रियों के पास ही जाते थे और हमेशा इस कारण अपने को निर्दोष
पाते थे। वे दोस्तों से यह भी कहते सुने गए थे, "उन लोगों को भी तो

जीना है। हम नहीं देंगे तो क्या ये पुजारी-पुरोहित उन्हें खिलायेंगे-पिलायेंगे ? वे हमारे भरोसे ही तो जी रही हैं।"

मुझे एक और बात याद आ रही है। तब मामा की आयु अधिक न थी। विवाह भी न हुआ था। मनचले समझे जाते थे। एक बार चाँदनी रात में बुय्युर से चले आ रहे थे। पैदल। गाते—गुनगुनाते। बुय्युर की पुलिया पर उन्हें किसी के रोने-चिल्लाने की आवाज सुनाई दी। इधर-उधर देखा तो कोई कहीं नहीं। पर आवाज आती जाती थी। पुलिया के नीचे बुय्युर के दो बदमाश पियक्कड़ मुसलमान किसी स्त्री के साथ बलात्कार कर रहे थे। मामा को देखते ही वे उन पर लपके। मामा कसरती आदमी थे। लाठी के दाँव-पैंतरे भी जानते थे। मुसलमान पिट-पिटा कर भाग गये। मामा ने स्त्री को घर भेज दिया। उन्होंने किसी से कुछ नहीं कहा। उस स्त्री ने ही लोगों से कहा। आजकल वह वीरवल्ली में पकौड़ी बेच कर जीवन-निर्वाह करती है। नाम सुब्बम्मा है।

नरसिंह मामा गाँव की तिकमड़बाजी में कोई हिस्सा न लेते थे। यद्यपि उनके विरोध में एक जबरदस्त गुट बना हुआ था तो भी वे कभी ऐसा काम न करते थे, जो प्राय: विरोधी आपस में एक-दूसरे के विरुद्ध करते हैं। वे अपने काम में व्यस्त रहते। हिन्दी विद्यालय के काम में ही अपना अधिक समय बिताते।

मुखासादार पिछले दिनों विजयवाडा से आये थे। सुनते हैं उन्हें वेंकटेश्वर राव ने बुलवाया था। उन दोनों की रिश्तेदारी थी, और अच्छी दोस्ती भी। दोनों एक ही जोड़ी के बैल से लगते थे।

मैं अपनी टोली के साथ घूमता-घामता वीरवल्ली के श्मशान के पास पहुँच गया। वहाँ बहुत सारे ताड़ के पेड़ थे। अनेक फल लटक रहे थे। हम उन्हें तोड़ने गये थे।

मुखासादार और मुन्सिफ सूरय्या वहाँ कीकर के नीचे बातें कर रहे थे। उनके चेहरे से लगता था जैसे किसी महत्वपूर्ण विषय पर विचार-विनिमय हो रहा हो।

"आजकल तो रघू गुण्डा का प्रताप कम हो गया है। पट्ठा ठंड पड़ गया है।" मुखासादार ने कहा।

"वह यहाँ दिखाई ही नहीं देता। न जाने कहाँ भटकता फिरता है।" सूरय्या ने कहा।

"डाकू-डकैतों का भी कोई ठिकाना होता है? आज यहाँ कल वहाँ।"

"ऐसा न कहिये, बच्चे सुन लेंगे तो वे भिंडों की तरह चिपट जायेंगे।" सूरय्या ने दबी आवाज़ में कहा।

"खैर, तुम जानते ही हो, वेंकटेश्वर राव का एक अमरूद का बाग नहर के किनारे है। सात-आठ एकड़ का है। वे उसे बेचना चाहते हैं।"

"मुसीबत हो जायेगी। नरसिंह और उसके भाई की उस पर नज़र है।"

"नजर है तो खरीद लें।"

"पैसा हो तब न? वे सस्ते में लेना चाहते हैं। वेंकटेश्वर राव कोई कंगाल नहीं कि जमीन यों ही उठा दें।"

"उनको अब भी बाग से कोई खास आमदनी नहीं होती है। अब तक इनके डर के मारे लोग खरीदते डरते थे। पर अब बात कुछ और है। एक चोट क्या पड़ी कि छटपटाकर पस्त पड़ गये।"

"पर फिर भी······।"

"तुम फिक्र न करो। सारे अफसर हमारे हाथ में हैं। पुलिस यहाँ गश्त लगायेगी। किसी का कुछ न बिगड़ेगा। पाँच-दस आदमियों को नीलामी की इत्तिला दे देना। अगले इतवार को सब काम निबट जाये। राघवैय्या गाँव में नहीं है। एक बार दस्तावेज़ लिख दिये गये तो कोई भी कुछ नहीं कर सकता।"

"पर खरीदेगा कौन?"

"मैंने रामय्या से बात कर ली है। कापु रामय्या जो हमारी ज़मीनों पर काम करता था, वही। बड़ा नरम आदमी है। बैल है। ऐसे

आदमियों का राधवैय्या कुछ नहीं विगाड़ेगा। गरीब है। उसका भी गुजारा हो जाएगा।"

"हूँ।" सूरय्या कुछ सोचता-सोचता उठ कर चल पड़ा। मुखासादार भी उसके साथ हो लिया।

बाद में मालूम हुआ कि मुखासादार ने पहिले ही रामय्या से समझौता कर लिया था कि आय का कुछ हिस्सा उसे भी दिया जाय। कहते हैं उनका रामय्या की पत्नी से सम्बन्ध था। उसी के कहने पर मुखासादार इतने उदार हो रहे थे। अगर वे स्वयं खरीदते तो गाँव में तो हल्ला मचता ही, शायद वेंकटेश्वर राव को भी यह न भाता।

रविवार को मुन्सिफ ने बाग की नीलामी कर दी। रामय्या बाग पाकर फूला न समाता था। उसको देखकर औरों को अचरज हो रहा था। नरसिंह मामा उपस्थित थे। उनके छोटे भाई भी वहाँ थे। पर दोनों कुछ न कर सके। रघू मामा अंगुलूर से वापिस न आये थे।

अगर नीलामी ठीक तरह होती और मामा की नज़र उस पर न होती तो बाग कम-से-कम तीस हज़ार रुपये में बिकता पर बिका वह पन्द्रह हज़ार में ही।

मामा की अनुपस्थिति में मुखासादार ने उनके परिवार पर एक और चोट लगाई। सालों की दुश्मनी इस तरह बढ़ती मालूम होती थी।

कई दिनों बाद रघू मामा घर आये। और उनके भाई ने उनको काम में जोत दिया। वे इस तरह उनकी आवारागर्दी कम करना चाहते थे।

वे पेड़ के नीचे, मेंड पर बैठे सुब्बाराव से गप्पें मार रहे थे। सिरपर तौलिया डाल रखा था। बगल में एक मोटा लठ था। समय दस-ग्यारह का होगा।

खेत में मजदूर काम कर रहे थे। वे काम में इस तरह लगे हुए थे

मानों मालिक की आँखें उन्हें तरेर रही हों। मामा अक्सर खेत पर न जाते थे। जब जाते तो उनको मजदूरों को डाँटने-डपटने की आवश्यकता न होती थी।

नरसिंह मामा ने सुब्रह्मण्यं मामा को किसी बहाने ससुराल भेज दिया था और स्वयं विजयवाड़ा चले गये थे। लाचार रघू मामा को गाँव में रहना पड़ा। भाई की आज्ञा थी।

रामय्या ने बाग तो खरीद लिया था पर मामा को खेत में देख कर, न तो वह आने की हिम्मत करता था, न मुखासादार ही। बाग सूख रहा था। हर जगह सूखे पत्ते पड़े हुए थे। माली का झोंपड़ा भी तोड़ दिया गया था। वह बोरिया बिस्तर बाँध चला गया था।

संयोगवश उन दिनों मुखासादार भी गाँव में न था। लोग सोचने लगे थे कि सरकार से बाग के बारे में शिकायत हो रही थी। मुन्सिफ भी वीरवल्ली से बुय्युर और बुय्युर से वीरवल्ली इस तरह फिरता जैसे रहट का डब्बा हो। मुखासादार की अनुपस्थिति में वह चैन से न रह पात ा।

द्वितीय महायुद्ध शुरू हो गया था। जर्मन सेनायें विद्युत गति से बढ़ ही थीं। आस्ट्रिया कभी का हजम हो चुका था। सारा पश्चिम जर्मन बढ़ती शक्ति के कारण त्रस्त था।

युद्ध की आँच भारत तक भी आई। कांग्रेसी मन्त्रीमण्डल ने तीफा दे दिया था। वॉयसराय ही सर्वेसर्वा था। लड़ाई के लिये हर न पर तैयारियाँ हो रही थीं। दिन-रात हजारों रंगरूट भरती किये जा थे। अंग्रेजी फौज हिन्दुस्तान में आ रही थी और हिन्दुस्तानी फौज र भेजी जा रही थी।

देश में असन्तोष था। भारत को युद्ध की अग्नि में ईंधन की तरह दिया गया था। पर भारतीयों की इस विषय में राय तक न ली ी। भारतीयों का तिरस्कार हुआ। कांग्रेसी नेताओं का तिरस्कार । अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय परिस्थितियाँ इस तरह बदल रही थीं

कि कोई रास्ता न दिखाई देता था। भारतीय युद्ध में किसी पक्ष का साथ नहीं दे सकते थे और हाथ-पर-हाथ रख बैठ भी न सकते थे। अतः युद्ध के विरुद्ध ही अपना विरोध प्रकट कर रहे थे। वे शिकंजे में थे।

हर जगह सलाह-मशवरे हो रहे थे। प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों की सभाएँ आये दिन होतीं। सरकारी नीति पर असन्तोष प्रकट किया जाता। नेता देश के कोने-कोने से गांधी जी के दर्शन के लिये वर्धा जा रहे थे। पर कुछ निश्चय न हो पा रहा था।

नरसिंह मामा भी इसी सिलसिले में विजयवाड़ा गए थे। वे प्रान्तीय कांग्रेस के सदस्य थे। उनके साथ उनके मित्र मल्लिखार्जुन राव भी थे। मल्लिखार्जुन राव उन उत्तम आदर्श व्यक्तियों में से थे, जिनको प्रसिद्धि नहीं मिलती, जिनके जलूस नहीं निकलते, जिनके चित्र समाचार-पत्रों में नहीं छपते पर वे अपने सत्य और सेवा के पथ पर निरीह अग्रसर होते जाते हैं। ख्याति और प्रतिष्ठा एक चीज है और उनका पात्र होना दूसरी चीज।

पर जो उनको जानते थे, उनकी महानता से परिचित थे। वे विनय की मूर्ति थे। किसी ने उनसे सहायता माँगी हो और न पाई हो, यह कभी न सुना गया, न देखा गया। दरिद्र, वंचित, अवहेलित, तिरस्कृत लोगों की शिकायतें लेकर वे हमेशा कहीं-न-कहीं घूमते फिरते। वे अथक सेवक थे।

नरसिंह मामा उस दिन की घटना प्रायः सुनाया करते। गांधी महात्मा पहली बार आन्ध्र का दौरा करते कृष्णा जिले में भी आये। मामा ने ही उनके हिन्दी के भाषण का तेलुगु में अनुवाद किया था। गांधीजी ने भाषण के अन्त में दान माँगा। मल्लिखार्जुन राव ने पत्नी के सब जेवर-जवाहरात, रुपया-पैसा, लगभग १५-२० हजार रुपये गांधी जी के हाथ में रख दिये और जाकर कीमती-कीमती विदेशी कपड़ों की होली कर दी।

वे कृष्णा जिले के परिमाणों से काफी धनी थे। वे पन्द्रह एकड़

उपजाऊ डेल्टा भूमि के मालिक थे। उन्होंने गांधीजी को दस एकड़ सौंप दिये। पाँच एकड़ अपने गुजारे मात्र के लिए रख लिए थे, वे भी बहुत दिन न रहे। अपना पक्का मकान भी गाँव को दे दिया था। वहाँ कुछ दिन सूत काता जाता रहा, फिर वहाँ गाँव का पुस्तकालय रखा गया। अब उसकी नींव मात्र रह गई है। एक स्मारक चिह्न की तरह—बाकी सब ढह गया है।

उनके दान से देश का तो कल्याण हुआ ही होगा, पर उनके घर का न हुआ। उनकी पत्नी शायद हमेशा के लिए उनकी विरोधी हो गई। दिन-रात उनको जली-कटी सुनाती। चुड़ैल थी। उनको तंग करती, ताने-तश्मे कसती, पर वे हमेशा अपने काम में मस्त रहते। वे बाल-बच्चों वाले भी थे। बड़े का नाम गांधी था। वह सत्याग्रह के दिनों में पैदा हुआ था।

मल्लिखार्जन राव नरसिंह मामा के शिष्य-से थे। मित्र, अनुयायी संरक्षक भी। पहले जब मामा को रुपये-पैसे की तंगी होती तो मल्लिखार्जन राव ही पैसा जुटाते थे। दूर के सम्बन्धी भी थे। जहाँ वे जाते भी जाते। मल्लिखार्जन राव हृदय-ही-हृदय थे। मामा को वाक्शक्ति भी प्राप्त थी। उनकी बड़े-बड़े भी सुनते थे। नेता उनकी प्रशंसा करते। सरकारी अफसर भी उनका सिक्का मानते। इन दोनों की जोड़ी थी।

अगर नरसिंह मामा देश के काम में लगे हुए थे तो रग्घू मामा को नी एक समस्या तंग कर रही थी। उनको पैसे की आवश्यकता थी।

"उन जवाहरातों का क्या किया?" मामा ने सुब्बाराव से पूछा।

"किन जवाहरातों का?"

"उस दिन जो बुय्युर से लाये थे। मैं बच्चों के साथ बाग चला गया था और तुम्हें गहने देकर भेज दिया था। तेरी भूलने की आदत कब से हो गई है?"

"हाँ, हाँ, मैंने काकिनाडा भिजवा दिये थे। अभी तक पैसे नहीं आये हैं।"

"चिट्ठी-पत्री से कहीं पैसे मिलते हैं? आज की गाड़ी से चले जाओ, कल-परसों पैसे लेकर आ जाना।"

सुब्बाराव को भेज कर मामा अकेले बैठ गये। वे चिन्तित नजर आते थे। वे बैठ भी न पाये। मजदूरों के पास जाकर बातें करने लगे। शाम हो रही थी। उनको भेजकर वे अपना लट्ठ लिये खेतों-खेतों में से घर चले गये।

नरसिंह मामा घूम-घाम कर घर आये। उनकी पत्नी ने अपना मामूली पाठ छेड़ रखा था। "कहते हैं कि गाँव के पास आने पर ही कई को घर की याद आती है। तुम वैसे ही आदमी हो।"

"अच्छा, बेटा, तुम खेलो।" नरसिंह मामा ने प्रेम से कहा। प्रेम उनका छोटा लड़का था। प्रसाद बड़ा। तकलीफों के बावजूद भी, मामा बच्चों को इस तरह पालते थे, जैसे अब भी पुरानी जमींदारी चल रही हो। जी-जान से उनकी पढ़ाई-लिखाई के लिए पैसा जुटाते। उनको कोई ऐसी बात न कहते जिससे उनके दिल पर चोट लगे। वे बच्चों को यह भी न जानने देना चाहते थे कि उनकी माँ की जबान तेजाबी है, वह तुनुक मिजाज है।

"गाँव-गाँव घूमते हो कभी यह भी सोचा कि घर में क्या बीत रही है? यहाँ खाने को कुछ नहीं। कब तक उधार माँगू? लोग तुम्हें बड़ा समझते हैं। कैसे जाकर कहूँ कि घर में चावल के लाले पड़ रहे हैं। घर से निकलते हो तो वापिस आने का नाम नहीं लेते।" उनकी पत्नी कहती जाती थी और वे घर के सामने के तालाब की ओर देखते जाते थे।

"क्या वे लोग आये थे तालाब साफ करने के लिए?" मामा ने पूछा।

"हो सत्यानाश इन लोगों का। मेरी क्यों सुनोगे? सुनते-सुनते शायद दीवार के कान लग जायें पर तुम मेरी बातों पर कभी न कान

दोगे। भुगतोगे, परिवार को बिगाड़कर दुनियाँ को कोई नहीं बना पाया है।"

"कह, क्या कहना चाहती है?"

"कुछ दिन और घूम-फिर आते न?"

"घूम फिर कर वही बात, कहो क्या चाहती हो?"

"चाहती हूँ कि जैसे तुम गाँव के काम में रात-दिन इधर-उधर फिरते हो, वैसे ही घर के लिए जमीन-आसमान एक क्यों नहीं करते? बच्चे बड़े हो रहे हैं, उनके लिए भी तो कुछ करना है।"

"हाँ, हाँ उन्हीं के लिए तो कर रहा हूँ।"

"कर रहे हो खाक—यही काफी है अगर तुम दुनियाँ की मरम्मत के लिए घर का पैसा न लगाओ।"

"नहाने के लिए पानी गरम हो गया है कि नहीं?"

"ऐसी जल्दी ही क्या है? प्रेम को जबरदस्त पेट दर्द हुआ और यहाँ कोई पूछने वाला नहीं।"

"पेट दर्द? बेटा, प्रेम, इधर तो आओ। रग्घू यहाँ नहीं था क्या?"

"वह आपका भाई जो ठहरा। दुनियाँ भर की आवारागर्दी करेगा र यहाँ नहीं आयेगा।"

"तुमने खबर भिजवाई?"

"तुम ही अपने लाडले को जो कह देते कि यहाँ भी पूछ-ताछ कर या करे।"

"तो वह यहाँ आया ही नहीं?"

"आया तो था पर उसका आना न आना दोनों बेकार हैं।" प्रेम तालाब के किनारे से खेलता-खेलता आ गया। "क्यों बेटा, पेट दर्द हुआ था?"

"हाँ, हाँ, रग्घू चाचा ने डाक्टर के लिए आदमी दौड़ाये, पर वे न थे। दर्द अपने-आप ठीक हो गया।"

"अच्छा, तो जाओ, खेलो।" नरसिंह मामा ने मुस्कराते हुए कहा,

"डाक्टर घर में न हो तो वह बेचारा क्या करे ?"

"तुम क्यों अपने लाडले भाई को कोई बात लगने देोगे ? वह बुरी तरह बदनाम है, तुम भी बदनाम होगे, कहे देती हूँ।" कहती-कहती वे अन्दर चली गई।

मामा इधर-उधर देखते हुए उठे और तालाब के किनारे जा खड़े हुए। वे कह गए थे कि वर्षा शुरू होने से पहिले तालाब ठीक कर दिया जाय। तालाब एक तरफ गहरा कर दिया गया था, दूसरी तरफ मिट्टी का ढेर था और एक कोने में दलदल सड़ रही थी। तालाब उनके मन को आन्दोलित कर रहा था। पसीने की तरह वे पत्नी की बातों के भी आदि हो गए थे।

सामने हरिजनवाड़ा से कर्ण और रघू मामा चले आ रहे थे। उनको आता देख नरसिंह मामा उनकी ओर चले। उनके पास आते ही उन्होंने धीमे से कर्ण से पूछा, "क्यों भाई, तालाब क्यों नहीं ठीक करवाया ?"

"मजदूर ही नहीं मिले। नहर में पानी आ गया है। सब खेतों में काम कर रहे हैं।"

"क्यों, क्या हाल चाल है ? सुब्बू अभी आया कि नहीं ?" नरसिंह मामा ने अपने भाई से पूछा।

"अभी तक नहीं आया।" मामा ने इस तरह जवाब दिया जैसे किसी अध्यापक के प्रश्न का उत्तर दे रहे हों।

"तुम कहीं गए तो नहीं थे ?"

"नहीं तो।" मामा जवाब देकर आगे बढ़ गए। वे सीधे मल्लिखार्जुन राव के घर पहुँचे। वे प्रायः मामा के काम-काज के बारे में उनसे ही मालूम करते थे। वे स्वयं अपने भाई से कुछ न पूछ पाते थे। और साथ ही खबरें जाने बगैर रह भी न पाते थे क्योंकि वे कांग्रेसी कार्यवाही में दिलचस्पी लेते थे।

"आपको जाना ही होगा, जमींदार ही यह धांधली रोक सकते हैं।"

कर्ण ने नरसिंह मामा से हड़बड़ाते हुए कहा।

"आखिर बात क्या है, कहते क्यों नहीं हो?" मामा ने उत्सुकता दिखाई।

"मुखासादार ने वीरवल्ली में जमीन हड़प ली है। इस वर्ष वहां खेती करवा रहा है। 'ग्रो मोर फूड' का बहाना है। सरकार भी कुछ न करेगी। पर गांव वालों को बड़ी इल्लत होगी। गाड़ियों के आने-जाने के लिये भी रास्ता न रहेगा......कौन अपने खेत में से जाने देगा? यह अन्याय है।"

"वह जमीन किसकी है?"

"गाँव की। जमीन भी क्या है—रास्ता है। चरागाह है। पटरी-सी है। उसके सिवाय गांव के आसपास एक इंच भी खाली जमीन नहीं है। औरतों के लिये शौच जाने के लिये भी जगह खाली न रहेगी। क्या अन्धेर है!"

"पर जमींदार क्या कर सकते हैं?"

"जमीन उनकी है। उन्होंने ही मुखासादार को दे रखी है। आपकी जमींदार जरूर सुनेंगे।"

"इन्होंने क्या जमींदार की इजाजत ली है?"

"जमींदार भले आदमी हैं, हो सकता है कि इन्होंने जाकर उनकी आँखों में धूल झोंक दी हो। मुझे मालूम नहीं। सुनते हैं, बड़े ऐंठे ऐंठे फिरते हैं।"

"गांव में हैं क्या वे?"

"जब से बाग बेचा है तब से वे गांव से गायब रहते हैं। सुना है वेंकटेश्वर राव के साथ साझे में कोई व्यापार कर रहे हैं।"

"हूँ।" नरसिंह मामा कुछ सोचते-सोचते घर की ओर चले।

"हमें फौरन कुछ करना होगा, नहीं तो बात और उलझ जायेगी। मैंने मालूम कर लिया है कि इस समय नूजवीड में जमींदार हैं। जमींदार का क्या ठिकाना? आज यहाँ, कल वहाँ। आखिरी बस मिल सकत

है।" कर्ण ने कहा।

नरसिंह मामा कुछ कह न पा रहे थे। वे एक प्रकार की दुविधा में थे। यदि वे जमींदार से शिकायत करते हैं तो दुनिया यह मतलब निकालेगी कि वे मुखासादार से बदला ले रहे हैं। अगर वे शिकायत नहीं करते हैं तो मुखासादार गांव की जमीन हड़प लेता है। गांव वालों को हर तरफ़ दिक्कत होगी। वे चुप भी नहीं रह सकते थे। गांव में वे ही एक ऐसे व्यक्ति थे, जिनका जमींदार आदर करते थे, जिनका कहा वे सुनते थे। दो-एक घंटे पहिले ही वे बाहर से आये थे, स्नान भी न किया था। पर बात इतनी जरूरी थी कि वे टाल भी न सकते थे।

घर पहुँचते ही उन्होंने पूछा, "रघू नहीं आया क्या ?"

"अभी तो नहीं आया है।" उनकी पत्नी ने कहा। "नहाने के लिये पानी गरम हो गया है।"

"जाओ, बेटा, प्रसाद, देखकर आओ, कहीं चाचा मल्लिखार्जन राव के घर में तो नहीं हैं। जाते-जाते कर्ण जी को लस्सी भी पिलाते जाना।" कर्ण ब्राह्मण थे। वे मामा के घर कुछ न खाते थे। पर लस्सी से कोई परहेज न था।

"मैं, जरा खा-पी लूं, तुम घर जाकर उस जमीन के बारे में जरूरी कागजात इकट्ठे करके ले आओ। एक नक्शा भी तैयार करना। मैं नूजवीड जाऊँगा और अभी जाऊँगा।" मामा ने कहा।

शाम के पाँच बज रहे होंगे। गांव में चहल-पहल शुरू हो गई थी।

नरसिंह मामा नहा-धोकर खाना खा रहे थे। रघू मामा भी पास खम्भे के सहारे खड़े थे।

"अभी आये नहीं कि फिर चल दिये। ऐसा कौन सा जरूरी काम आ पड़ा है ! गांव को सुधारने का क्या तुमने ही ठेका ले रखा है ?" नरसिंह मामा की पत्नी ने पूछा।

"जरूरी काम है, जाना है, रघू है न यहाँ।" मामा ने कहा।

"आजकल इन लम्बाडियों के मारे नाक में दम हो रहा है। कल

वेन्कम्मा की भैंस खोल ले गये। मैंने आँगन में धान सुखा रखा था कि कोई वहाँ भी आ पहुँचा। मैं वक्त पर न जाती तो वहाँ धान भी न रहता। कोई चीज बाहर नहीं रखी जा सकती।" मामी कह रही थी।

"खैर।" मामा कुछ और सोचते लगते थे।

"तुम खा रहे हो कि सोच रहे हो? और तो और पंडित जी कह रहे थे कि जरा बादल आये नहीं कि वे अपना बोरा-बिस्तर उठाकर अपने स्कूल में पहुँच जाते हैं।"

"बेचारे वर्षा में पेड़ों के नीचे कैसे पड़े रहेंगे?" मामा ने कहा।

"इसका मतलब यह नहीं कि बिना पूछे ही जहां-तहां धरना देते रहें? दूसरों के लिये तुम कर्ण बने फिरते हो और घर वालों के लिये दुश्शासन, अच्छा न्याय है?"

नरसिंह मामा कपड़े पहिन रहे थे। जल्दी में थे। वे लम्बाडियों के बारे में नहीं सोच रहे थे। लम्बाडी प्रतिवर्ष धान बोने के लिये और फसल काटने के लिये जाने कहाँ-कहाँ से आ जाते थे। वे खानाबदोश होते हैं। जहाँ पड़ाव करते हैं, वहीं दो-चार चटाइयों की आड़ में अपना घर बना लेते हैं।

"मुझे नूजवीड जाना है। गांव में रहना, ख्याल रखना, सम्भल कर।" नरसिंह मामा ने अपने भाई से कहा।

बाहर कर्ण कागजात लेकर उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उनको लेकर मामा चल पड़े। कर्ण और मामा उनको वुय्युर तक छोड़ने गये।

पौ भी न फटा था कि रघू मामा काटूर चले गये। ब्रह्मेश्वर राव ने खबर भिजवाई थी।

अन्नपूर्णा मामी ने बहुत जिद की कि वे काटूर न जायें। उनकी दाईं आंख फड़क रही थी। मामा जब कभी काटूर जाते तो मामी मंदिर में जाकर पूजा करतीं। न जाने क्या-क्या मनोतियां करतीं।

काटूर में सब जगह खेतों में पानी भरा जा रहा था। धान बोने की तैयारियां हो रही थीं। जहां देखो वहीं किसान बैलों की जोड़ियों के साथ दलदल में काम कर रहे थे। कहीं-कहीं देहाती गीतों की गूंज भी सुनाई देती थी। झाग होते खेतों में बगुले आ गये थे। रंग-बिरंगी साड़ियाँ पहिने यत्र तत्र स्त्रियाँ धान बो रही थीं।

पर ब्रह्मेश्वर राव के खेत सूखे पड़े थे। खेत संवार दिये गये थे। नौकर-चाकर भी मेंड़ों पर चलते-फिरते दिखाई देते थे। सप्ताह भर ब्रह्मेश्वर राव ने पानी की प्रतीक्षा की पर जब उनको वेन्कटेश्वर राव की शरारत के बारे में मालूम हुआ तो उन्होंने अपने सालों के पास तुरन्त खबर भिजवाई।

ब्रह्मेश्वर राव के खेतों में पानी वेन्कटेश्वर राव के खेतों में से आता था। रजभाह दोनों के खेतों में से लगा लगा जाता था। वेन्कटेश्वर राव ने रजभाह बन्द करवा दिया था। उनके खेत भर गये थे। खेतों-खेतों में से वेन्कटेश्वर राव के आदमी आस-पास के किसानों को पानी दे रहे थे। ब्रह्मेश्वर राव के खेत में न आने देते थे।

ब्रह्मेश्वर राव ने वेन्कटेश्वर राव के पास खबर भिजवाई। पर न वे अपने घर में थे, न विजयवाड़ा में ही। उनके खेतों में कोटय्या का गुट पहरा दे रहा था। पता नहीं वे वेन्कटेश्वर राव की सलाह पर यह वाहियात काम कर रहे थे या उनकी खुशामद करने के लिए ब्रह्मेश्वर राव को तंग कर रहे थे।

यह सच था कि उन दिनों वेन्कटेश्वर राव के पैर जमीन पर न टिकते थे। जमाना बदल रहा था। युद्ध चल रहा था। अफसरों का राज था। वे पैसे वाले तो थे ही, व्यापार में भी उनका भाग्य ने साथ दिया था। लोग कहते थे कि उन पर सोना बरस रहा है। अब उनकी दौड़ मद्रास तक भी होती थी।

जब मामा को यह खबर मिली तो उन्होंने तुरन्त सुब्बाराव को कुन्देर भगवाया। लठैतों को खबर भिजवाई। उनको यह हिदायत की

गई कि कुन्देर के पास वाले वेन्कटेश्वर राव की जमीन में पानी
दें। एक-दो आदमी वहां रहें और पांच-सात जल्दी काटूर
मामा की कुन्देर में खूब चलती थी। वहां रिश्तेदारी थी। गांव
मुखिया भी वहीं का आदमी था।

मामा से पहिले ही उनके लठैत काटूर पहुँचे। वेंकटेश्वर रा
आदमियों के पास खबर भिजवा दी गई कि कुन्देर की जमीन में
बन्द कर दिया गया है। उनके आदमी खेत छोड़ कर कुंदेर भा
खेत में केवल कोटय्या और एक-दो आदमी रह गये। सारे गांव में ख
बली मची हुई थी। खून-खराबी की भी आशंका थी।

मामा अपने आदमियों को लेकर सीधे अपने जीजा के खेत में पहुँ
रजभाह के पास कोटय्या बैठा था। मामा को आता देख वह उठ ख
हुआ। वह निस्सहाय-सा लगता था। उसके साथी कुंदेर जा चु
थे।

मामा ने अपने नौकरों को हुक्म दिया, "खोल दो बाँध, पानी जा
दो।" देखते-देखते बांध तोड़ दिया गया। मटमैला पानी तेजी से बहने
लगा। ब्रह्मेश्वर राव के खेतों में पानी इस तरह जाने लगा जैसे वह
जाने के लिए बहुत दिनों से मचल रहा हो।

कोटय्या कुछ न बोला, घूरता रह गया। वह मामा और उन
आदमियों को देख कर डर गया था। कई लोग इकट्ठे हो गये थे। उन
उसके या वेन्कटेश्वर राव के समर्थक नहीं थे।

"सरकार का रजभाह है, या इसके बाप-दादा का। खेतों में पानी
भर लिया है, यह काफी है। इसको भला क्या हक है कि दूसरों के खेत
में पानी न जाने दे। धौंस चला रहा है। आखिर हम भी तो टैक्स दे
हैं।" मामा कह रहे थे।

"रघू! तुम बढ़-बढ़ कर बातें न करो। काम हो गया है। बस
आल्तु-फालतू लड़ाई-झगड़ा मोल लेने से क्या फायदा?" ब्रह्मेश्वर
राव ने कहा।

"अभी............" मामा कुछ कहते-कहते रुक गये। कोटय्या की ओर देखने लगे। वह तब तक दूर ताड़ों के पेड़ के नीचे जा चुका था। मामा वहीं बैठ गये। खुद पानी की निगरानी करने लगे। दिन-भर वहीं रहे। शाम को वे पांच-दस आदमियों को वहां छोड़कर घर चले आये।

नहर के पुल के पास लम्बाडी एक टोकरी बीच में रखकर नृत्य कर रहे थे। तालियां बजाते बजाते झुकते, फिर एक साथ उठते और गोलाकार में चलते। कुछ गाते जाते। नंग-धड़ंग, भूखे-प्यासे, लम्बाडी लड़के-लड़कियाँ, नाच-नाच कर आनंद मना रहे थे। हम तमाशा देख रहे थे।

मामा भी काटूर से वापिस आते-आते वहां रुके। उनको वहां पा लम्बाडी एकाएक तितर-बितर हो गये। मामा उनको देखकर गरजे, "अब लगता है, तुम फिर चोरी करने लगे हो। किसी के घर में बिना इजाजत के घुसे तो देह पर चमड़ी पर न रहेगी, खाल उखड़वादूंगा। समझे।"

"जी, जी।" लम्बाड़ी सरदार गिड़गिडाने लगा।

"अबे, जी जी क्या कर रहा है? मेरे पास फिर शिकायत आई तो यहां रहने भी न दूंगा। खबरदार, स्कूल में भी न घुसना। आओ, बेटा!" हम में से किसी ने मामा का हाथ पकड़ा, तो किसी ने लठ, तो कोई उनके कुरते का छोर पकड़कर ही संतुष्ट हो गया।

पुल के पार, उनके आदमी कुंदेर के रास्ते में उनकी इंतजारी कर रहे थे। "थोड़ी देर जिद करने के बाद हमने आपके हुक्म के मुताबिक वेन्कटेश्वर राव के खेतों में पानी छोड़ दिया।" एक आदमी ने कहा।

"यही तो हमने कहकर भेजा था। किसी को मारा-पीटा तो नहीं?" मामा ने पूछा।

"जी नहीं।"

"अच्छा किया।" मामा अपने घर की ओर चले गये और हम उनकी ओर आँखें फाड़कर देखते रहे।

"मामला जरा पेचीदा हो गया है। मुकदमेबाजी करनी होगी।" नरसिंह मामा कर्ण से कह रहे थे। वे घर के बाहर पेड़ के नीचे खड़े थे। सवेरे का समय था। दोनों के मुख में दातुन थी। मामा पिछले दिन रात को नौ बजे के करीब नूजवीड से आये थे।

"अपने जमींदार भी कितने भोले-भाले आदमी हैं। जो कोई जाकर अपना दुखड़ा रोता है, उस पर पसीज जाते हैं। दूर तक सोच नहीं पाते। एक व्यक्ति का फायदा करने के लिए सारे गांव की हानि कर बैठे हैं। हमारे जमींदार फिर भी पढ़े-लिखे दयालु आदमी हैं। औरों के यहां तो अंधेर है। नौकरों को कान देते हैं और मनमानी करते हैं।" मामा कहते जा रहे थे।

"आखिर क्या हुआ?" कर्ण ने पूछा।

"मुखासादर की नीयत अच्छी नहीं मालूम होती। भगवान ने इतना दे रखा है फिर भी सन्तोष नहीं। जमींदार साहब के पास जाकर कह आया कि घर में शादी होने के कारण बहुत खर्च हो गया है, कर्ज तक लेने की नौबत आ गई थी। उनके घर में कोई शादी हुई थी?"

"नहीं तो, अव्वल दर्जे का धोखेबाज है।"

"उनसे जाकर इसने कहा कि जमीन खाली पड़ी है, उसका कोई उपयोग नहीं है। सरकार की भी अनुमति ले ली है। जमींदार साहब ने उसका यकीन कर लिया और उसे खेती करने की इजाजत दे दी। मैंने उनसे कहा कि उन्हें इजाजत नहीं देनी चाहिये थी। वे कहने लगे कि ब्राह्मण है, हमारे भरोसे ही जिंदगी बसर कर रहा है। भला आदमी है। बेचारा गरीब है।

"गरीब! हां जिनके पास हजारों एकड़ हों उनको तीस एकड़ वाला किसान गरीब ही लगता है। उनको क्या मालूम कि वीरवल्ली में इससे बड़ा किसान नहीं है? इतना चलता पुरजा आदमी है।"

"तब मैंने उनको सारी बात समझाई। नक्शे-कागजात सामने रखे। उन्होंने कहा कि अब क्या हो सकता है, उसने तो दस्तावेज भी लिखवा लिया है। मुझे समझ में न आया कि क्या किया जाये। वे काफी देर तक दस्तावेज पढ़ते रहे। फिर कहा—'मुकदमा करो।'

"मुकदमा करो? पैसे कहां से आयेंगे?"

"मुकदमे का सारा खर्च वे ही उठायेंगे। वादा किया है।"

"अधिक दयालु होना भी खतरनाक है।"

"गन्नावरं तालुका आफिस से भी जो कुछ कागजात चाहियें, ले आओ। पहिले मैं मुखागदार से मिलूंगा। अगर वह अपनी जिद पर अड़ा रहा तो मुकदमा दायर करना ही होगा।" मामा दातुन करते-करते घर में चले गये। वहां उनके भाई, सुब्रह्मण्यं उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वे दो दिन पहिले ही ससुराल से आये थे। ससुर के दिये हुए नये जरीदार कपड़े पहिन रखे थे।

"बैठो।" मामा मुंह-हाथ धोने लगे और सुब्रह्मण्यं मामा इधर-उधर देखते खड़े रहे। कभी दाएं पैर के बल तो कभी बाएं पैर के बल। वे कुछ कहना चाहते थे और कहने के लिये शायद आवश्यक साहस जमा कर रहे थे।

"क्यों कुछ कहना चाहते हो?" नरसिंह मामा ने उनकी हालत देखकर पूछा।

"भाभी तिरुपति जाना चाहती हैं।"

"रघू की पत्नी?"

"जी, हां।"

"हां-हां, लेजाओ; पर रघू क्यों नहीं जाता?"

"भाभी उनसे कह नहीं पातीं। शायद भैया को देवी देवताओं में विश्वास नहीं है।"

"छः-सात वर्ष होने जा रहे हैं शादी हुए, अभी तक संतान नहीं हुई है। जाना ही चाहेंगी। स्त्री के पास बच्चे हों और कुछ न हो तो

विद्यार्थी कुछ रट-रटा लेते हैं और परीक्षायें पास कर लेते हैं।"

"हूँ।" मामा कुछ सोचते लगते थे। मामा पौधा लगवाकर कुटी में खम्भे के सहारे बैठ गये।

मामा की शिक्षा-दीक्षा नियमित रूप से न हुई थी। मां-बाप ने तो उन्हें स्कूल भी न भेजा था। वे अपने लड़कों को अन्य बच्चों के साथ पढ़ने देना न चाहते थे। अपनी हैसियत औरों से ऊंची समझते थे और इतनी ताकत न थी कि उनको रईसों के स्कूल में भेजते। उनकी अट्ठारह वर्ष की आयु में शादी हुई थी, तब वे काला अक्षर भैंस बराबर थे।

एक दिन, एक मित्र की प्रेरणा पर वे घर छोड़कर चले गये। खोज हुई। पता लगा कि वे एलोर में किसी स्कूल में भरती हो गये हैं। ससुर ने शोर मचाया कि वे पत्नी को छोड़ कर भाग गये हैं। पत्नी भी अपनी आंखें भिगोती पर मामा अपनी धुन में लगे रहे। वहीं उन्होंने पाँच-छः जमातें पढ़ीं फिर उसी साथी के साथ उत्तर भारत देखने निकल गये। उन्होंने अनुभव और प्रयत्न से वह ज्ञान प्राप्त किया जो विरले ही विश्व-विद्यालयों में प्राप्त करते हैं।

मामा को तेलुगु का तो बहुत अच्छा ज्ञान था। कोई ऐसा प्राचीन ...ंथ न था, जो उन्होंने न पढ़ा हो। संस्कृत कामचलाऊ जानते थे। ...ंग्रेजी भी समझ लेते थे।

मैंने बहुतों के भाषण सुने हैं, विद्वानों के सुने हैं, नेताओं के ...ने हैं, उपदेशकों के, जाने किन-किन के, पर मामा सबको मात कर ... लगते थे। मीठा स्वर, मीठी भाषा, सम्भ्रांत आचार-व्यवहार ...को सम्भाषण की प्रतिभा मिली थी। उन में एक विचित्र आकर्षण ...। हृदय इतना साफ कि शत्रु भी अपनी परछाईं देखले।

थोड़ी देर बाद वहां रग्घू मामा भी आगये। मामा अभी स्कूल के ...क के पास आये थे कि नरसिंह मामा फाटक की तरफ चल पड़े। ...दयाल जी कुटी में रह गये। वे दोनों मिलकर नहर के किनारे-किनारे ... की ओर चल दिये।

"सुना है अन्नपूर्णा तिरुपति जाना चाहती है, हो आओ।" मामा ने कहा, पर उनके भाई ने कोई उत्तर न दिया।

वे पुल पार कर सड़क पर आ गये। बड़ के पेड़ के नीचे से गुजर रहे थे। जब दोनों भाई साथ निकलते थे तो आस-पास के घरों से स्त्रियाँ देखा करतीं। हट्टे-कट्टे, लम्बे-चौड़े, रौबीले आदमी, देखते ही बनते थे।

"सुब्बू और उसकी पत्नी भी जा रहे हैं। उन सबकी देख-भाल करना।" नरसिंह मामा ने फिर कहा।

"हूँ।" रघू मामा ने सिर हिला दिया। नरसिंह मामा अपने घर चले गये और रघू मामा जब अपने घर पहुँचे तो उनकी पत्नी आंगन में तुलसी की पूजा कर रही थीं।

"अगर तिरुपति जाना चाहती थीं तो मुझसे क्यों नहीं कहा? भाई साहब के पास खबर भिजवाने की क्या जरूरत थी?" मामा ने पूछा।

"चिटम्मा जाना चाहती थी, मेरी भी बहुत दिनों से जाने की इच्छा थी। मैंने आपसे एक-दो बार कहा भी, आप शायद भूल गये हैं।" मामी ने पूजा समाप्त करके कहा।

"कहीं पत्थरों की पूजा करने से बच्चे पैदा होते हैं? पगली हो।"

"ऐसा न कहिये, क्या बच्चों के लिए ही भगवान् के दर्शन किये जाते हैं? तीर्थ यात्रा करना अच्छा है।" मामी ने कहा।

"क्या तुम्हारे भगवान् तीर्थों में ही रहते हैं? ढकोसलेबाजी है।" मामा खिझे-खिझे अपनी खटिया पर बैठ गये। "आखिर बच्चों की भी क्या जरूरत है, गांव-भर के बच्चे अपने ही तो हैं।" उनकी पत्नी उनके पैरों के पास बैठ गई। वे मुस्करा रही थीं, उनकी बात सुनकर।

"अब पैसा जमा करना है, कम्बख्त सुब्बाराव—खैर जाने दो।" मामा कहते-कहते रुक गये, जैसे कुछ याद आ गया हो।

"मेरे पास आप ही के पचास-साठ रुपये हैं, ले लीजिए।" मा ने कहा।

"पचास-साठ रुपयों से क्या होगा ? जब तिरुपति चलेंगे, तो चार दोस्त भी जायेंगे। अच्छा, देखा जायगा।" मामा ने बी सुलगा ली।

सुब्बाराव दो बार काकिनाडा हो आया था, पर जेवर बिक पाए थे। कहते हैं, एक गहना पुलिस के हाथ लग गया था इसलि और गहने नहर में फेंक दिये गए थे।

खा-पीकर, नये कपड़े पहन, पत्नी से बिना कुछ कहे, मामा घर से निकल गये। मामा उसी दिन ताडेपल्लि गूडिम पहुँचे।

जब मामा ने तिरुपति जाने का प्रोगाम बनाया तो गांव के और लोग भी उनके साथ जाने को तैयार हो गये। एक गाड़ी में स्त्रियाँ बैठी थीं, और सुब्रह्मण्यं मामा उसे हाँक रहे थे। बैलों को इस शुभ अवसर पर सजाया गया था। वे मस्तानी चाल चल रहे थे।

मामा, सुब्बाराव और मल्लिखार्जुन राव एक साथ चल रहे थे। नरसिंह मामा उनके आगे-आगे चलते जाते थे। मल्लिखार्जुन राव पहले भी दो-एक बार तिरुपति हो आये थे। उनकी पत्नी ने साथ आने से इनकार कर दिया था। रघू मामा ही उनका खर्च उठा रहे थे।

हमारा परिवार भी एक गाड़ी में जा रहा था। पिताजी, माताजी और मैं। पिताजी को रघू मामा की हरकतें पसन्द न थीं। वे उनसे प्रायः बातचीत भी न करते थे। उम्र में बड़े थे, मामा उनके प्रति आदर-भाव रखते थे। माँ का उनके परिवार से नज़दीकी रिश्ता था। उन्हीं की जिद पर हम तिरुपति जा रहे थे।

उय्युर पहुँचे। दोपहर का वक्त था। बस की इन्तजारी में बहुत देर खड़े रहे। किसी बस में एक के लिए जगह मिलती तो किसी में दो के लिए। अकेले-दुकेले कोई जाना न चाहता था। सड़क के किनारे धूप में खड़ा भी न रहा जाता था।

आखिर रंग्रू मामा ने कहा, "गाड़ी तो रात को आठ-दस बजे के करीब जाती है। हम तब तक गाड़ियों में ही विजयवाड़ा पहुँच जायेंगे।" मामा का यह कहना था कि हमारे लम्बे मुँह पड़ गये। इच्छा हुई कि बैल बीमार पड़ जायँ, गाड़ियों के पहिये टूट जायें। इतनी दूर से बस की सवारी करने आए थे, पर बैठने को मिली वही बैलगाड़ी।

नरसिंह मामा की भी यही राय थी। वे हमसे विदा लेकर चले गये। रग्घू मामा खुद गाड़ी हाँकने लगे। उनका बैठना शायद बैल भी जानते थे। वे दुम उठाकर हवा से बातें करने लगे। उनकी देखा-देखी और बैल भी भागने लगे। गाड़ी में ही बस का मजा आ गया।

हम ठीक समय पर विजयवाड़ा पहुँचे। जब मामा टिकट खरीदने गये तो उनके हाथ में एक बड़ा थैला रुपयों से भरा देखा। ताडेपल्लि गूडिम से शायद लाए थे। उन्होंने किसी और को टिकट न खरीदने दिया, सबके लिए वे ही खरीद लाए।

मामा लोगों को यह न दिखाना चाहते थे कि उनको देवी-देवताओं में विश्वास न था। गांव में उन्हें किसी ने किसी मन्दिर में भी जाते न देखा था। मेरा भी यह ख्याल था। अगर मैं उनके साथ तिरुपति न जाता तो शायद मेरा वही ख्याल बना रहता।

वहाँ उन्होंने हर संस्कार इस तरह किया, जैसे वे बड़े धार्मिक हों। उनका आचरण अधार्मिक का-सा था, पर मन में वे वस्तुतः अपने ढंग से भक्त थे। मामी ने जब-जब जो-जो कहा वह उन्होंने विधिपूर्वक किया।

प्रायः मामा अपनी पत्नी से ठीक तरह बातचीत करते भी न देखे जाते थे। पर तिरुपति में उन तीन-चार दिनों में वे पत्नी के हाथ में कठपुतली-से लगते थे। दोनों मिलकर भगवान् के दर्शन करने गये। दोनों ने मिलकर मन्दिर की परिक्रमा ली।

मामा के होते यह असम्भव था कि कोई अपनी अलग रसोई करे। उन्हीं के घरवाले हम सबके लिए खाना तैयार करते। मामी और मुब्बु

हम भी क्या करते ? कुछ सूझा नहीं। दो-चार मिनट इधर-उधर घूमते रहे। फिर कटे पेड़ों को लेकर जमीन में गाड़ दिया। जहाँ देखो वही लक्कड़ पड़े थे। घास-फूस सब उसी जगह फेंक दिया और पानी का आना भी बंद कर दिया। रामय्या की हरकत हमें बिल्कुल पसन्द न थी। हम लोग अपने को रघू मामा की वानर-सेना समझते थे।

हम भागे-भागे सुब्बाराव के गर गये। उससे सारी बात कह दी। वह भी थोड़ी देर तक खौला। उसने दो-चार व्यक्तियों से कहा, पर सब किसी-न-किसी काम में व्यस्त थे। कुछ न हुआ।

कहने लगे "दो चार लट्ठ चल जाते तो अक्ल ठिकाने आ जाती। भाई साहब की अहिंसा न होती तो मैं कभी का उसका हिसाब कर देता।"

"आप जरा यहां थे नहीं कि ऐरे-गैरे भी सीना तानकर चलने लगे हैं। रामय्या तक आपको ठंडा पा हिम्मत करने लगा है।" सुब्बाराव ने कहा।

"वह वहां खेती करने के सपने देख रहा है क्या? देखें। उसे खबरदार कर देना।" मामा ने कहा। पर वे किसी और चीज़ के बारे में सोचते लगते थे।

"यह पैसे वालों का जमाना है। मुकदमेबाजी में पैसे वालों की ही जीत होती है। गाँव वालों के पास पैसा नहीं है। ताकत है, दो-चार बार उसे झकझोर दिया कि वह अदालत से दूर भागेगा। मुकदमा महीनों चलेगा, फिजूल की माथापच्ची। जमींदार ने खर्च के लिये पैसे दिये हैं, पर वक्त तो नहीं देंगे। दौड़-धूप तो नहीं करेंगे?" मामा ने कहा।

शाम को किसी ने मामा से शिकायत की कि लम्बाडियों ने फिर चोरी की है। वे झट लम्बाडियों की झोंपड़ियों में गये। उनके सरदार को बुलाया। पूछ-तलब की। जब वह इधर-उधर ताकने लगा तो उसकी बुरी तरह मामा ने गत बना दी। अन्य उसे बचाने आये तो उन्हें भी चपत और लातें परोस दीं।

उनको रोता-धोता छोड़ वे हमारे पास चले आये। हम भी तब तक वहां जमा हो गये थे। पीपल के पेड़ के पास आकर हमें दो क्षण रुकने के लिये कहा और स्वयं शराब की दुकान में कुछ कहकर चले आये।

हम साथ-साथ उनके घर पहुँचे। मामा को आता देख, सुब्बाराव भी आ गया। मामा ने हंसते हुए कहा "लम्बाडियों को चावल दे आओ। टिंचर भी लेते जाना, दो चार को चोट लगी है।" वे हंसने लगे।

मामा के कारनामे हमें समझ में न आते थे।

नरसिंह मामा के घर के सामने का तालाब पूरा भर गया था तालाब के कमल सूर्य का स्वागत करते से लगते। नरसिंह मामा किनारे पर पेड़ के नीचे बैठे थे। उनके साथ कर्ण और मल्लिखार्जुन राव भी थे। कुछ बातें कर रहे थे। मुकदमे की एक सुनवाई खतम हो गई थी। अगले महीने फिर अदालत में मामला आ रहा था।

रघू मामा अपने भाई को देखने आये। वे उनकी अनुपस्थिति में एक-दो बार ताडेपल्लि गूडिम का दौरा कर आये थे। गाँव में उनको शायद कुछ सूझता न था।

मामा भाई के यहाँ अपनी हाजिरी देकर मल्लिखार्जुन राव के घर गये। मल्लिखार्जुन राव की स्थिति दिन-प्रतिदिन गिरती जाती थी। कमाई का कोई रास्ता न था। जमीन-जायदाद सब देश के लिए अर्पित कर दी थी। काम-धन्धा कोई जानते न थे। मुश्किल से गुजारा हो रहा था। रघू मामा के घर से उनके यहाँ रोज दूध-दही जाता था। फसल कटने पर चार-पाँच महीने का धान भी पहुँचा दिया जाता था।

नरसिंह मामा भी उनकी मदद करना चाहते थे, पर पत्नी के कारण कुछ न कर पाते थे। उनका बड़ा परिवार था, खास पैसे वाले भी न थे, लाचारी थी। तो भी जमींदार से सिफारिश कर उन्होंने मल्लिखार्जुन राव के बड़े लड़के के लिए छात्रवृत्ति दिलवा रखी थी। वह ताडंकि में पढ़ता था। बुद्धि का भी तेज न था। और बच्चे आवारागर्दी करते। उनकी पत्नी बच्चों के बारे में उन पर जबानी चाबुक कसतीं। वे अनसुनी-सी कर देते। भाग्य पर भरोसा रख अपना काम करते जाते थे।

वहाँ से घूम-फिर रघू मामा फिर नरसिंह मामा के यहाँ पहुँचे। वे तब भी तालाब के किनारे बैठे थे। वहाँ गांव के लोग भी जमा हो गये थे।

वीरवल्ली की तरफ से रामय्या लड़खड़ाता आता दिखाई दिया। वह नरसिंह मामा के सामने आते ही उनके पैरों पड़ गया और आंसू

बहाने लगा। "स्वामी, मदद करो। मुझे बचाओ।" मामा चौंके, उन्हें कुछ समझ में न आया।

"आफत में हूँ, आप ही मुझे बचा सकते हैं। गरीब हूँ। लड़की वाला हूँ। आपके सहारे ही जी रहा हूँ। बचाइये।" वह गिड़गिड़ाता जाता था।

"आखिर बात क्या है?" मामा ने पूछा।

"आपने गांव की जमीन के लिए मुखासादार पर मुकदमा कर रखा है। पर मुझे तो अपनी जमीन पर ही खेती नहीं करने देते? न्याय कीजिए।" रामय्या ने कहा।

"यह मुखासादार का आदमी है। चल बे चल। न्याय-अन्याय की बात कर रहा है।" किसी ने उसको डाँटा-डपटा। रघू मामा भी आँखें तरेर रहे थे।

"जमीन क्या तुम्हारी है?" एक व्यक्ति ने पूछा।

"जी हाँ, मैं दोनों तरफ से पिस रहा हूँ। खेती भी नहीं कर पाता हूँ। जो कुछ मैं करता हूँ वह तड़के कोई बिगाड़ जाता है। और मुखासादार अपने पैसों के लिए तंग कर रहे हैं।" रामय्या ने कहा। मैं मन-ही-मन हँसा।

"तो तुझे मुखासादार ने पैसे दिये थे?" किसी व्यक्ति ने पूछा।

"हाँ-हाँ, जब तक मैं उन्हें पैसे न दे दूँगा, बाग उनके पास गिरवी रहेगा। कड़ा ब्याज भी देना है। मेहरबानी कीजिए। हम भी इसी जमीन के सहारे तर जायेंगे।"

"क्या पागल है! धान अगर सोने के दाम बिके, तब जाकर कहीं तू उसके चंगुल से निकलेगा।" रामास्वामी ने कहा।

नरसिंह मामा सोचते जाते थे। उन्होंने इस घटना की कल्पना तक शायद न की थी। रामय्या की हरकतें देखकर उनको यह आशा न थी। अगर मुखासादार गांव में होता तो वह इस प्रकार गिड़गिड़ाता भी न।

"खैर, मुखासादार और तुम में कुछ भी लिखा-पढ़ी हुई हो, अब

जमीन तुम्हारी है; तुम चाहो जो-कुछ करो। हमने कब कहा है कि तुम खेती न करो? खूब करो।" नरसिंह मामा ने कहा।

"पर कोई करने नहीं देता महाराज!" रामय्या ने कहा।

"कौन नहीं करने देता? मुझे बताओ, मैं जो हो सकेगा, जरूर करूँगा।" नरसिंह मामा ने धीमे-धीमे सोचते हुए कहा। रामय्या रग्घू मामा की ओर देखने लगा। रग्घू मामा भी उसी की ओर घूर रहे थे।

"मेहरबानी आपकी।" रामय्या फिर नरसिंह मामा के पैरों पड़ा और हाथ जोड़कर अलग खड़ा हो गया।

"अरे, गरीब है, जाने दो। उसे खेती करने दो न?" मामा ने रग्घू मामा की ओर देखते हुए कहा।

रग्घू मामा कुछ न बोले।

विजयदशमी के दिन नहर की पटरी पर एक बैलगाड़ी ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर आती दिखाई दी। नहर की पटरी पर प्रायः गाड़ियाँ नहीं आती थीं। बरसात में तो उस पर मनुष्यों का आना-जाना ही कम रहता है। बरसात के बाद काली मिट्टी के इतने बड़े-बड़े पत्थर-से बन जाते हैं कि कोई भी रहमदिल अपने बैलों के पैर तोड़ने की हिम्मत नहीं करता।

हम अचरज से उस तरफ देख रहे थे। रग्घू मामा भी हमारे साथ थे। जब गाड़ी पास आई तो मामा मुँह नीचे किये उसकी ओर गये। उनको आता देख गाड़ी अमलतास के पेड़ के नीचे खड़ी हो गई। गाड़ी में मोटी काली, बढ़िया साड़ी पहने कोई स्त्री पान चबा रही थी। मामा को नजदीक देखकर वह गाड़ी से उतर गई। मामा कुछ झेंपे।

"तुम इस रास्ते से क्यों आई?" मामा ने दबी आवाज में पूछा।

"बुय्युर के रास्ते आती तो लोगों में ख्वाहमख्वाह कानाफूसी ती।" उस स्त्री ने कहा। "आजकल तो तुम्हारा अंगलूर आना ही

कम हो गया है। दर्शन दुर्लभ हैं। कमलवेणी इन्तजार करती-करती बेहाल हो गई है।"

"हूँ।"

"मुझे भेजा है, आज त्यौहार है। अगर तुम चाहते हो कि त्यौहार के दिन हमारे घर भी दिया जले तो हमारे साथ चले आओ। नहीं तो कमलवेणी......आखिर उसने किया ही क्या है, क्यों नाराज हो?"

मामा कुछ न बोले, वे हमारी तरफ देख रहे थे। उनको घूरता देख हम वहाँ से खिसक गये।

"चूल्हा चढ़े भी अर्सा हो गया है।" वह स्त्री अपना पोपला मुँह लिए कह रही थी।

हमें बाद में मालूम हुआ कि वह स्त्री कमलवेणी की माँ थी। कमलवेणी *मामा की रखैल थी, जो बंगलूर में रहती थी। मामा को इधर* बंगलूर गये कई दिन हो गये थे।

थोड़ी देर बाद, तौलिया झाड़ते हुए, सिर झुमाते हुए, मामा हमारे पास आकर पुल पर बैठ गये। गाड़ी जिस रास्ते से आई थी, उसी रास्ते से चली गई।

मामा के आते ही, पं० रामदयाल उनसे बातचीत करने लगे। वे चिन्तित लगते थे। "क्यों भाई, रुपये कैसे मिलेंगे?" उन्होंने पूछा। "दो महीने हो गये हैं हमें वेतन मिले। बच्चों के खर्च के लिए भी पैसा नहीं है। क्या किया जाय?"

"पैसा नहीं है क्या? भाई साहब को इस बारे में नहीं बताया?" मामा ने पूछा।

"इत्तिला दी थी, पर वे बेचारे क्या करें? और कितनों का करें? मुकदमा उनका वक्त ले लेता है। वे चन्दा इकट्ठा नहीं कर पाते। और हमारा यहाँ गुजारा नहीं होता। जमींदार साहब के यहाँ से रुपया आता था, वह भी नहीं आ रहा है। वे पचास रुपये मासिक देते हैं, और यहाँ उसके लिए अर्जियाँ लिखते-लिखते दम निकल जाता है।"

तीन-चार बजे का समय था। रघू मामा वहाँ से काटूर की ओर
चले गये। हम वहीं खेलते रहे।

थोड़ी देर बाद नरसिंह मामा सुजाता को लेकर गाड़ी में काटूर की
तरफ से आए। नहीं मालूम उन्होंने रास्ते में रघू मामा को देखा था
कि नहीं। वह छुट्टियों पर आई हुई थी। मामा ने हमें देखकर गाड़ी
रोकी।

सुजाता सचमुच बदल गई थी। महीन गुलाबी रंग की साड़ी,
चमकता 'सफेदी' पुता चेहरा। हम सुजाता को अच्छी तरह जानते थे।
पर अब उससे बात करते भय लगता था। उसने भी हमसे बातचीत न
की। शहरी सभ्यता की परिभाषा तब हम भली-भांति न जानते थे।

सात-साढ़े सात बजे के करीब, मामा हमें कुन्देर की तरफ से आ
दिखाई दिये। हमें अचरज हुआ, वे गये काटूर थे और लौट रहे थे
कुन्देर से। उनकी चाल-ढाल में मस्ती थी। आते ही वे पं० रामदयाल
के पास गये और उनके हाथ में कई रुपये उन्होंने गिना दिये।

"भाई साहब से इन रुपयों के बारे में न कहियेगा।" मामा ने
उनके कान में कहा।

देश में असन्तोष बढ़ता जाता था। उधर महायुद्ध भी और व्यापक
गया था। लन्दन महानगरी ध्वंस की जा रही थी।

आखिर महात्मा गांधीजी को एक उपाय सूझा। देश का असन्तोष
ट करने के लिए उन्होंने व्यक्तिगत सत्यागह प्रारम्भ किया। देश में
महान् आन्दोलन की सफलता के लिए अभी अनुकूल वातावरण
ना था। व्यक्तिगत सत्यागह उस आन्दोलन का प्राक्कथन-सा था।
मल्लिखार्जुन राव जी को सत्याग्रह करने की अनुमति मिल गई
वे आन्ध्र के प्रथम सत्याग्रहियों में से थे। विजयवाड़ा में उन्होंने
ार दिन पहले सत्याग्रह किया था और वे अब राजमन्द्री में सजा

भुगत रहे थे।

सुजाता छुट्टियाँ समाप्त होते ही मद्रास चली गई। मुकदमे की सुनवाई होती और मुल्तवी कर दिया जाता। नरसिंह मामा विजयवाड़ा जाते-आते रहते। उनके कई मित्र पहले ही सत्याग्रह कर चुके थे।

नरसिंह मामा भी आज युय्युर के चौराहे पर सत्याग्रह करने जा रहे थे। उनके गले में फूलों की मालायें पहनाई गई। उनके सम्बन्धी एकत्रित थे। काटूर से ब्रह्मेश्वर राव सपत्नीक पधारे थे। पर मामा की पत्नी ने घर में 'सत्याग्रह' कर रखा था। उन्होंने दो-तीन दिन से भोजन न किया था। मामा को उन्होंने खूब जली-कटी सुनाई, पर जब वे अपनी जिद पर अड़े रहे तो उन्होंने रो-धोकर 'व्रत' शुरू कर दिया।

नरसिंह मामा बहुत वर्षों से कांग्रेसी थे। वे महात्मा गांधीजी के व्यक्तित्व से प्रभावित थे। वे अपने ही ढंग से देश का कार्य कर रहे थे। पर उनको यह हमेशा बींधता रहता कि वे पिछले सत्याग्रहों में भाग न ले सके। उनके मित्रों को भी उनसे यही शिकायत थी। वे बड़े परिवार वाले थे। कई उन पर निर्भर थे। गाँव के मुखिया थे। कई जिम्मेवारियाँ थीं। रुपये-पैसे वाले भी न थे।

उनकी पत्नी की एक युक्ति उन्हें हमेशा याद रहती। उसका वे जवाब न दे पाये थे। पत्नी ने कहा था, "इस छोटी-सी जिन्दगी में एक परिवार का उद्धार कर दो, काफ़ी है। क्या परिवार का उपकार देश का उपकार नहीं है? इधर-उधर बीज फेंकने से क्या फायदा? यह काफी है अगर अपना खेत ठीक तरह देख लो। बिखेरे हुए बीज अक्सर उगते नहीं हैं।"

अब बहुत अर्सा हो गया है। लड़के बड़े हो रहे थे। जो कुछ वे परिवार के लिए कर सकते थे, कर रहे थे। अगर परिवार के लिए जिंदगी कुर्बान कर दी तो देश के लिए क्या त्याग किया? आखिर किसान सारी फसल खुद तो नहीं लेता है? दान-दक्षिणा भी करता है। पाँच-छः महीने की ही तो बात है। अब तक वे पत्नी की इस विषय में सुनते

आए थे, अब अपनी करना चाह रहे थे।

ब्रह्मेश्वर राव ने कहा सुना। उनकी बहन [illegible] -बाई। मग
रघू मामा की हरकतों से ऐसा लगता था जैसे कि वे स्वयं सत्याग्रह कर
के लिए उतावले हो रहे हों। पर वे शायद जानते थे कि उनको अनु
मति नहीं मिलेगी।

नरसिंह मामा वुय्युर जाने के लिए गाड़ी की ओर बढ़े। इतने में
कङ्चाकोल्लु की तरफ से चार-पाँच आदमी शोर करते आते नजर आए।
उनको देखकर रघू मामा उनकी ओर लपके। उनको आता देख वे चुप
हो गये। पर आगे चलते गये। सीधे वे नरसिंह मामा के पास जाकर
खड़े हो गये। हाथ जोड़ कहने लगे—

"आप ही बताइये कि यह कहाँ का न्याय है?" कुन्देर का सेठ कह
रहा था।

"क्यों, क्या बात है?" नरसिंह मामा ने पूछा।

"आपके भाई स्कूल के लिए चन्दा लेने आये। हम भी कौन-से
पैसे वाले हैं? कहाँ से देते? लाठी दिखाकर सौ रुपये हमसे ऐंठ लिए।
आप देश के लिए सत्याग्रह करें और आपके भाई हमें इस तरह सतायें?
अन्याय है।" वह कहता जा रहा था। वह बड़ा रईस था। हज़ारों का
व्यापार था। जब उसकी पत्नी चलती थी तो लगता था, जैसे घूमने-
फिरने वाली गहनों की दुकान जा रही हो।

नरसिंह मामा गाड़ी पर चढ़ रहे थे कि तनकर खड़े हो गये और
रघू मामा की ओर घूरने लगे। रघू मामा नीचा मुँह किये खड़े थे।
यह किसी ने कल्पना भी न की थी कि कुन्देर के सेठ की इतनी हिम्मत
होगी। उसने डर के मारे पुलिस को भी इत्तिला न की थी। पर जब उसे
यह मालूम हुआ कि नरसिंह मामा सत्याग्रह करने जा रहे हैं तो वह भी
अपना रोना रोने आया। उसे मालूम था कि रघू मामा नरसिंह मामा
की बात के खिलाफ कुछ न करेंगे। फिर वह शायद उनको इस मौके
पर नीचा भी दिखाना चाहता था। वेंकटेश्वर राव और उसका कई

चीजों में साझा था।

भीड़ में रामदयाल भी थे। नरसिंह मामा ने उन्हें अलग ले जाकर पूछा, "क्या यह सच है कि रघू आपको रुपये दे गया है?"

"जी हां।" रामदयाल स्वयं चकित थे।

"कितने?"

"सौ।"

"अब कितने बाकी हैं?"

"पचास।"

"आपने मुझसे क्यों नहीं कहा?"

"आप व्यस्त थे......" रामदयाल कुछ कहना चाह रहे थे।

"यह पहली बार है कि पहले भी उसने कभी रुपये दिये हैं?"

"दिये हैं।"

"हूँ।" नरसिंह मामा दूर देखते कुछ सोच रहे थे। "आप इसी महीने स्कूल बन्द करवा दीजिए। हम इस तरह स्कूल नहीं चला सकते। पचास रुपये कुन्देर वालों को दे दीजिये। आपकी तनख्वाह का मैं इन्तजाम कर दूँगा।" नरसिंह मामा और कुछ न कह सके। आँसू छलकने लगे। गला रुँध गया। वे पाठशाला को इस तरह चला रहे थे, जैसे निजी परिवार हो। उनके सारे स्वप्न उस छोटी-सी पाठशाला में साकार थे।

नरसिंह मामा ने रघू मामा को बुलाया। वह उनको घर की तरफ ले गये। उन दोनों को एक साथ बातें करता देख, अन्नपूर्णा मामी हिचकियाँ भरने लगीं। वे सारी बात जान गई थीं। वे शर्मिन्दा थीं।

नरसिंह मामा रघू मामा को अलग ले गये, पर उनकी तरफ देखते हुए वे चुप खड़े रहे। वे कुछ बोल न पाते थे। रघू मामा की आँखों में भी तरी थी। दोनों भाई चुप रहे। कुछ देर बाद लोगों के पास आकर नरसिंह मामा ने कुन्देर के सेठ से कहा, "आप रामदयालजी से पचास रुपये फिलहाल ले लीजिए। बाकी मैं लौटकर दे दूँगा।" वे झट से गाड़ी में जा बैठे। लोग तालियाँ पीटने लगे।

गाड़ी चल दी। रघू मामा भी साथ पैदल जा रहे थे। आँ
पोंछते हुए नरसिंह मामा ने यह कहा, "सत्याग्रह तो क्या पश्चात्ता
करने जा रहा हूँ?" रघू मामा फूट-फूटकर रोने लगे।

नरसिंह मामा को छः महीने की सजा दी गई। रघू मामा भी प्रायः
गाँव से नदारद रहते। पाठशाला की पर्णशाला सुनसान थी, पास के
श्मशान की तरह। सब दरवाजे बन्द थे। सर्दी के मौसम में भी पेड़-पौधे
सूखे-से लगते थे।

गाँव में कोई चहल-पहल न थी। लोग रात-दिन या तो ताश खेलते
नहीं तो गप्पें लगाते। एक ही बात, जो दुहरा-दुहराकर कही जा रही थी।
वह थी, रामय्या की पत्नी, कोटम्मा का विजयवाड़ा चले जाना।
कोटम्मा का मुखासेदार से बहुत दिनों से सम्बन्ध था, पर वह उसे
विजयवाड़ा ले जायगा, इसकी किसी को कल्पना भी न थी। उसकी एक
ही लड़की थी, पद्मा। वह भी बेहया थी।

रामय्या जानता था कि उसकी पत्नी रास्ते पर नहीं है। लड़ाई-
झगड़ा भी शायद उन दोनों में होता था। पर देखा यह जाता था कि
कि रामय्या हमेशा पत्नी के सामने दबा रहता। पत्नी के कारण ही उसे
जमीन मिली थी।

हम उन दिनों अच्छी तरह पढ़ने लगे थे। मैं और प्रसाद एक ही
स्कूल में पढ़ते थे। वह मुझसे दो-तीन वर्ष बड़ा था। वह स्कूल फाइनेल
पढ़ रहा था, और मैं फोर्थ फारम। हम साथ ताडंकी जाते, साथ आते।
ताडंकी बुय्युर से कोई दो मील दूर बन्दर की तरफ था। वहीं स्कूल है।

हम बुय्युर से घर आ रहे थे। रास्ते में एक कार आती दिखाई दी,
अच्छी-बड़ी कार। तेजी से चली आ रही थी। जब पास से गुजरी तो
उसमें वेन्कटेश्वर राव बैठे हुए दिखाई दिये। वे बहुत दिनों बाद इस
तरफ आये थे। न जाने उनको कैसे मालूम हो जाता था कि मामा गाँव

में नहीं हैं। हमारा यह ख्याल था कि मामा के होते वे गाँव से नहीं गुजर सकते थे।

"ये फिर आ मरे, रग्घू मामा कहां हैं प्रसाद?" मैंने पूछा। प्रसाद कुछ न बोला। पिता और चाचा की अनुपस्थिति में वह मौनी-सा रहता खिन्न, दुःखी।

रग्घू मामा थोड़े दिनों बाद गाँव आये। पुल के पास अमलतास के पेड़ के साया में वे एक झोंपड़ा तैयार करवा रहे थे। सुब्बाराव, बुय्युर से घर के लिये आवश्यक सामग्री, गाड़ियों पर लादकर ला रहा था।

लोगों में घर के बारे में कानफूसी हो रही थी। पर दो-चार दिन में उनकी यह धारणा बन गई कि रग्घू मामा किसी सार्वजनिक कार्य के लिये ही यह झोंपड़ा तैयार करवा रहे हैं, क्योंकि कुछ जमीन पंचायत की थी और कुछ नहर के महकमे वालों की। घर वगैरह बनाने की वहां मनाही थी। यह शायद रग्घू मामा भी जानते थे। पर न तो उन्हें कानून की परवाह थी, न पंचायत की ही।

गाँव के चार-पाँच परिवार उनको अच्छी तरह जानते थे—एक मल्लिखार्जुन राव का, दूसरा कर्ण का, तीसरा सुब्बाराव का और चौथा हमारा। मल्लिखार्जन राव जेल में थे, कर्ण लड़की की शादी के लिये दौड़-धूप कर रहे थे, सुब्बाराव को उनसे पूछने की हिम्मत न होती थी। हमारा परिवार तटस्थ था। रग्घू मामा को किसी को अपने इरादों के बारे में कहने की आदत न थी।

पर दो सप्ताह बाद जब वहां एक लड़की अपनी मां के साथ रहने आई तो लोगों की आंखें खुलीं। जबानें तेज हुईं। उनके भाई-बन्धु भी नाक-भौं चढ़ाने लगे। सभी मामा की बात करते। जो कोई पुल पर से गुजरता, घर दिखा कर, मामा के बारे में कुछ-न-कुछ कहता।

गाँव वाले मामा की हरकतों से परिचित थे। गाँव में और लोगों ने

भी रखैल रखी थीं। पर इतने खुल्लमखुल्ला किसी ने अपनी रखैल को न रखा था। मामा के विरुद्ध कोई कार्यवाही करना आसाम काम न था। उनके इशारे पर जी-जान देने के लिये पास ही चमारों की बस्ती थी। बहिष्कार तो वे उसका करते, जिसका समाज से कुछ सम्बन्ध हो, मामा की तो अपनी ही अलग दुनिया थी। सब बक-झकाकर चुप रह गये।

रखैल की आदत भी शराब की-सी आदत है। आज मैं यह मानता हूँ। दोनों हटाये नहीं हटतीं। पर उन दिनों मुझे भी मामा का रवैया पसन्द न था।

कई ने जाकर उनकी ब्रह्मेश्वर राव से शिकायत की। मामा की बहिन से कहा। बहिन ने उनको एक बार काटूर भी बुलाया। पर कहते हैं, इस बारे में उनकी कोई बातचीत न हुई। ब्रह्मेश्वर राव ने तो साफ कह दिया था कि वह बच्चा नहीं है कि डाँट-डपट दिया जाय। समझ-दार है। गलती करता है तो खुद फल भोगेगा। वे मामा की निजी बातों में दखल न देना चाहते थे।

एक दिन रग्घू मामा की बहिन, बीरम्मा, गाड़ी में अन्नपूर्णा मामी के पास आईं। मामी से बहुत देर तक बातचीत करती रहीं। वे पाँच-दस दिन के लिये उन्हें काटूर लिवाने आई थीं। पर मामी ने जाने से इनकार कर दिया। वह मुस्कराहट जो मामी के मुंह पर हमेशा बनी रहती थी, अब न दीखती थी। वे घर से बाहर भी न निकलतीं। नित्य-कृत्य से अंधेरे में ही निबट आतीं।

रग्घू मामा कभी भूले-भटके घर पहुँच जाते तो खटिया बाहर डल लेते और बीड़ी पर बीड़ी पीते जाते। छोटी-छोटी बात पर आग हो जाते इधर-उधर की बेहूदी गालियां सुनाते। घर का हाल-चाल भी न पूछते और जब मामी पैर दबाने बैठतीं तो मुंह सुजाकर पैर खटिया पर रख लेते। घर से खिझे-खिझे आते। हमारी तरफ भी नजर न उठाते।

मामा की रखैल, कमलवेणी, सुनते हैं, नाचना-गाना जानती थी

नूजवीड के किसी जमींदार ने उनको रख रखा था। कई घाट घूम आई थी। अब भी लड़की-सी लगती थी। शक्ल-सूरत से उम्र का अंदाजा लगाना मुश्किल था।

चाल-ढाल, शक्ल-सूरत, हाव-भाव, सबमें वह सुजाता की तरह थी। जिन्होंने दोनों को देखा था, उनका कहना था कि दोनों में असाधारण साम्य था। जुड़वें बच्चों में भी उतना सादृश्य मुश्किल था।

शादी के बाद ही मामा का कमलवेणी से परिचय हुआ था। वे किसी काम से प्रकाशराव के साथ नूजवीड गये थे। वे ही मामा को इस के पास ले गये थे। प्रकाशराव तो अपना काम-काज करके ताड़ेपल्लि गूडिम चले गये। पर मामा किसी-न-किसी बहाने नूजवीड हो आया करते।

जमींदार यद्यपि खास रईस न थे, तो भी उनकी कई रखैल थीं। वे पत्नी की उदारता पर जिन्दगी बसर कर रहे थे। जब पत्नी ने मद्रास में बसने की ठानी, तो उन्हें भी साथ मद्रास जाना पड़ा।

कमलवेणी ने रघू मामा के साथ आने की सोची। भाई के गाँव में होते वे उसको ला नहीं सकते थे। लाचार थे। और कमलवेणी को नूजवीड में भी न रखा जा सकता था। अंगलूर में उसके कोई रिश्तेदार थे। मामा ने उसको वहां जाने के लिये कहा। और वर्षों से उसका खर्च वे ही दे रहे थे।

रघू मामा का बाहर निकलना ही कम हो गया। दिन-रात कमलवेणी के घर में मस्त पड़े रहते। दिनभर ताश खेला जाता, जुए की बाजी लगती और रात को शराब का दौर। आसपास के गाँव के जुआरी जमा होते। रात को रसिकों की महफिल लगती। कई विचित्र सूरतें देखने में आतीं।

मामा गाँव में ताश न खेलते थे। एक तो उनके भाई को ताश

वगैरा खेलनी पसन्द न थी, और दूसरे उनके साथ खेलने वाले भी व
थे। पत्तों में वे पहुँचे हुए थे। बड़े-बड़े खिलाड़ी भी उनसे दाव लगा
कांपते थे। और मामा का उसूल था कि पैसे के बगैर कभी ताश नह
खेलना चाहिये। गाँव में पत्तों पर पैसे फूंकने वाले न के बराबर थे।

मामा की तूती बोल रही थी। वे मनमानी कर रहे थे। न कोई
कहने वाला, न सुनने वाला। गाँव की बदनामी हो रही थी।

चार-पाँच बजे मैं प्रसाद के यहां आया। वह घर के बाहर, तालाब
के किनारे अकेला, उदास बैठा था। रविवार था। हम दोनों का स्कूल
न था। घर बैठे कुछ सूझता न था। पुल पर जाना मां-बाप ने बन्द कर
रखा था। मैं भी उसकी बगल में बैठ गया और सड़क पर आने जाने
वालों को देखने लगा।

"आज रग्घू मामा के यहां क्या हो रहा है?" मैंने थोड़ी देर बा
प्रसाद से पूछा।

"मुझे क्या मालूम? आजकल चाचा इस तरफ आते ही नहीं।"
वह पत्थर लेकर तालाब में फेंकने लगा, जैसे किसी अप्रिय बात को भूलने
का प्रयत्न कर रहा हो। मैंने मामा के बारे में उससे और कुछ न पूछना
चाहा, पर जाने बगैर मैं रह भी न पाता था।

वीरवल्ली की तरफ से रामय्या चला आ रहा था। उसके साथ
उसकी लड़की थी—पद्मा। रंग कोयले-सा काला। मदमाती बड़ी-बड़ी
आंखें। वह बदनाम थी।

हमारे पास आकर रामय्या ने बड़े अदब से पूछा, "क्यों बाबू,
आपके चाचा घर में हैं क्या?"

"मुझे नहीं मालूम।" प्रसाद ने मुंह फेर लिया। रामय्या पुल की
तरफ चलता गया। उसके पीछे पद्मा भी मटकती जाती थी। कई
स्त्रियाँ घरों में से निकल-निकलकर उन दोनों को देख हँस रही थीं।
ऐसा लगता था, जैसे सबको मालूम हो कि वह कहाँ और क्यों जा रही
है। मेरी उत्सुकता और बढ़ी। थोड़ी देर बाद मैं भी लुका-छिपा उनके

पीछे हो लिया।

पुल के पास एक कार खड़ी थी—बड़ी लम्बी और शानदार। वेंकटेश्वर की कार से कुछ मिलती-जुलती थी। कमलवेणी के घर में एक बड़ी बत्ती जल रही थी। दो-चार दरियाँ आदि भी बिछी थीं।

प्रकाश राव पुल की मुँडेर पर बैठे मामा से हँस-हँसकर बातें कर रहे थे। यह उन्हीं की कार थी। लगता था कि इस बार दो-चार नौकर भी साथ लाए थे। कोई खास बात थी शायद।

रामय्या ने अपनी लड़की ले जाकर उनके सामने खड़ी कर दी। वह हाथ जोड़कर कुछ गिड़गिड़ाने लगा। प्रकाशराव मुस्कराते जाते थे। वे अपने बदचलन के लिए बदनाम थे। उनके सहारे कई वेश्याएँ मजे में जी रही थीं। कई तो इतने आराम में थीं कि और भी उनके पास पतंगों की तरह जाने के लिए एक-दूसरे की होड़ करतीं।

रामय्या शायद यह जानता होगा। वह न केवल कमीना, बेशर्म पति ही था, बल्कि खुदगर्ज, लालची पिता भी था। प्रकाश राव भी उसी की जाति के थे। कोई सहायता माँगने गया था। उसकी लड़की ने सहायता की बड़ी कीमत दी होगी, यह आज मैं भली-भांति अनुमान लगा सकता हूँ।

मैं घर जाने को ही था कि काटूर की तरफ से वेंकटेश्वर राव की कार को आता देखकर सहसा रुक गया। कार पुल पर आकर रुकी। प्रकाश राव और वेंकटेश्वर राव की कार में बैठे-बैठे ही नमस्ते हुई। कार तुरन्त चली गई। प्रकाश राव मुस्करा रहे थे और रघू मामा की आंखें अंगारे हो रही थीं। उनकी शक्ल से लगता था कि जैसे कोई फँसी-फँसाई चीज एकाएक सही-सलामत भाग निकली हो।

मैं तुरन्त यह न समझ पाया कि प्रकाश राव को वेंकटेश्वर राव जानते हैं। उस दिन तो वे रघू मामा के साथ कुन्देर लठैत ठीक करने गये थे और अब कैसे वेंकटेश्वर राव को देखकर मुस्करा रहे थे? ये रईस सांप की तरह चलते हैं, रुख बताना मुश्किल; बड़े टेढ़े होते हैं।

जहाँ थैली दिखाई कि नहीं, सालों की दोस्ती को नमस्ते कर देते हैं। प्रकाश राव क्या मामा के सचमुच मित्र हैं?

आखिर बात क्या है, मैंने जानना चाहा। पूछ-ताछ की। पता लगा कि वेंकटेश्वर राव का चावल का व्यापार जोरों पर था। चावल भी तो तब सोने के दाम बिकने लगा था। प्रकाश राव की चावल के बाजार में खूब चलती थी। कई मिलें थीं। इसी कारण वेंकटेश्वर राव उनको जानते होंगे। खैर···

थोड़ी देर बाद कमलवेणी नाचने लगी। ऐसा लगता था, जैसे उड़ रही हो। रेशमी कपड़े रोशनी में दूर-दूर तक चमक रहे थे। प्रकाश राव वाह-वाह करते झुक जाते थे। पन्ना ने भी चार गाने गाये।

जब रात को मैं काफी देर बाद घर पहुँचा तो पिताजी ने मेरी वह गत बनाई कि अब भी याद आने पर पीठ दुखती-सी लगती है।

कर्ण गाड़ी से क्या उतरे कि उनके चारों ओर गाँव के लोग जमा हो गये। कर्ण दो-चार दिन से गाँव में न थे। कुछ निजी काम था, कुछ गाँव का। जब कभी वे गाँव से बाहर जाते तो दसियों आदमी उनको बीसियों काम सौंप देते। और वे कर भी आते थे। भले आदमी थे।

वे कुछ चिन्तित नजर आते थे। दाढ़ी बढ़ी हुई थी। कपड़े मैले। थके-मांदे। लगता था जैसे उनको कई दिनों से नींद न आई हो। वे सड़क के बगल वाले बड़ के नीचे बैठ गये।

"मुकदमे का क्या हुआ?" सुब्बु मामा ने पूछा। कर्ण विजयवाड़ा मुकदमे के सिलसिले में गये थे।

"होना क्या था, जिसके हाथ में पैसा था वह जीत गया। कम्बख्त कानून भी पैसे वालों पर रीझता है, तवाइफ की तरह।"

"तो अब क्या किया जाय?" सुब्बु मामा ने पूछा।

"कानून का रास्ता बहुत लम्बा है, नहर-सा। एक लोक से निकले

तो दूसरे लोक में जा घुसे। अभी तो पहिला लोक ही खतम हुआ है। अपील करेंगे, जिला कोर्ट में फिर हाई कोर्ट में, फिर फैडरल कोर्ट में··· बहुत लम्बा रास्ता है।''

''हाँ, रास्ता तो बहुत लम्बा है, पर हम यहाँ पँगु बने बैठे हैं। न भाई साहब हैं, न मल्लिखार्जुन राव ही।'' मुब्बु मामा ने कहा।

सब एक-दूसरे को देखते कुछ सोचते रहे। मुकदमा ही उनके लिए एक बड़ी समस्या थी। पैसा इकट्ठा करना तो और भी बड़ी मुसीबत थी।

''गाँव में चन्दा लगा लेंगे। कटाई दो-एक महीने में हो जायगी। दो-चार पैसे हाथ में आ जायेंगे।'' वीरय्या ने कहा। वह वीरवल्ली का नौजवान किसान था। उसके पिता पिछले दिनों एकाएक मर गये थे। पहले तो मिल में काम करता था, अब बहरहाल आध एकड़ खरीद ली थी। उसकी जमीन मुखासादार की हड़पी हुई जमीन से लगती थी। बड़ा मेहनती था। अपनी खेती करता और खाली समय में मजदूरी भी करता।

''पर हाँ, चन्दे की क्या जरूरत है? जमींदार साहब ने कहा था कि मुकदमे का खर्च सारा वे ही देंगे।'' कर्ण ने कुछ याद करते हुए कहा।

''दिया तो था, अपील के लिए भी देंगे क्या?'' रामस्वामी ने पूछा। वह कडयाकोल्लु का सबसे धनी किसान था। उसके बाल-बच्चे न थे। खर्च कम था। लेन-देन का व्यापार था। कंजूस था। घर में काफी पैसे थे। नरसिंह मामा का मित्र था।

''मालूम नहीं कि नरसिंह जी की इस विषय में उनसे क्या बात-चीत हुई थी?'' कर्ण ने कहा।

''पर क्या जमींदार साहब जानते हैं कि हम मुकदमा हार गये हैं?'' रामस्वामी ने पूछा।

''वे अब जान ही गये होंगे कि मुखासादार जीत गया है। वह खुद ही जाकर कह आया होगा।''

''हममें से किसी को जाकर उनके सामने सारी बात रखनी चाहिये।

अगर पैसा दे दिया तो अच्छा है, वरना हम चन्दा लगा लेंगे।" रामस्वामी ने कहा। सब उसकी तरफ आश्चर्य से देख रहे थे, क्योंकि उसकी उन लोगों में गिनती होती थी, जो चमड़ी दे देते हैं पर दमड़ी नहीं देते।

"अपील जल्दी करनी है। और चन्दा हम तब तक न वसूल कर पायेंगे, जब तक फसल न कटेगी।" कर्णं ने कहा।

सबको नजर रामस्वामी पर थी और उनकी सब पर। थोड़ी देर बाद वे सुब्बु मामा की ओर मुड़कर बोले, "देखा जायेगा, पर इस बीच में कोई जाकर जमींदार साहब से मिल आये, शायद वे ही मदद करें।"

"किसे भेजा जाय? मैं ही चला जाता, पर मैं तो उनका नौकर हूँ। फिर हमारी सुनता ही कौन है!" कर्णं ने कहा।

"राघवैय्या को क्यों नहीं भेज देते?" रामकोटय्या ने सलाह दी। वह पटलापाडु का रहने वाला था। रग्घू मामा का हमउम्र था। पहले कभी जमीन-जायदाद थी, पर अवारागर्दी में सब खो बैठा था। भैंसों का व्यापार करने लगा था। मामा कभी-कभी उसकी मदद किया करते थे।

"पर वह कहाँ जायेगा? नशे में मस्त पड़ा रहता है, घर से निकले तब न?" रामस्वामी ने कहा। वह मामा से उम्र में बहुत बड़ा था। मामा भी उसका लिहाज करते थे।

"खैर। आप पाँच-छः आदमी क्यों नहीं चले जाते? एक वीरवल्ली से, एक कडवाकोल्लु से, एक पटलापाडु से, एक हरिजनवाड़े से, और दो-चार बड़े आसामी। रामस्वामीजी, आप भी जाइये। दो-ढाई रुपये का ही तो खर्च है।"

"दो-ढाई रुपये?" रामस्वामी ने आश्चर्य में पूछा। वह खर्च के भय से गाँव से बाहर न जाता था। सब उसको देखकर मुस्करा रहे थे।

"शाम को सोच लेंगे कि किन्हें भेजा जाय।" कर्णं कहते हुए पुल की ओर चल दिये। लोग भी तितर-बितर हो गये। कर्णं जो हमेशा प्रसन्न

रहा करते थे और जवानों की तरह चला करते थे, आज लड़खड़ाते-से लगते थे।

वे पुल से उतरकर, नहर की पटरी पर से होते हुए कमलवेणी के घर पहुँचे। रग्घू मामा बाहर बैठे तम्बाकू लपेट रहे थे।

"मुकदमे का क्या हुआ?" उन्होंने भी पूछा।

"हम हार गए हैं।"

"और मामला अधिक उलझ गया है। मुकदमेबाजी में फँसना ही बुरा है। मामला बिगाड़कर वकील अपनी फीस बना लेते हैं। एक छोटा-सा आदमी है और सारे गाँव की पूँछ ऐंठ रहा है। इतनी हिम्मत! मैं तो शुरू से ही कह रहा था कि मुकदमा दायर करना ही गलत है। फिजूल झंझट मोल लेना है।"

"शायद तुम ठीक कहते हो···मेरे सिर पर आफत आ पड़ी है।" कर्ण की आँखें डबडबा आईं।

"क्या हुआ?"

"बड़े कमीने लोग हैं ये। तुम जानते ही हो कि मैं पामरू में अपनी कौशल्या की शादी निश्चित कर रहा था।"

"हां, हां।"

"परसों वेन्कटेश्वर राव अपनी कार में गया। लड़के को और उसके घर वालों को भड़का आया। लड़की के बारे में बुरा-भला, झूठा-सच्चा सब उगल आया है। उसे दुनिया भर के लालच दिये। उसके साथ हमारा मुखासादार भी था। यह उसी की चाल है। वह लड़का बेचारा धोखे में आ गया। अब शादी करने से इनकार करता है। गरीब आदमी हूँ। उम्र भी हो गई है। कहां-कहां भागता फिरूं?"

"ये फिर शादी-सगाइयों में दखल देने लगे हैं? मैं समझ रहा था कि वे विजयवाड़ा पहुँच कर इन कामों से बाज आयेंगे।"

"ये पेशेवर बदमाश हैं, शौकिये नहीं।"

"हां, हां जानता हूँ, अभी वे ऊपर की राख से खेल रहे हैं। उनको

नहीं मालूम कि नीचे दहकती आग है। एक दिन मय व्याज के सब-कुछ वसूल कर लूंगा। हूँ ...." मामा ने लम्बी सांस खींची।

कर्णं कुछ निश्चिन्त से हो गये। जैसे अपने दिल का भार थोड़ी देर के लिये किसी और पर डाल कर सुस्ता रहे हों।

मैं जब सवेरे-सवेरे उठा तो सुब्बाराव हमारे घर के सामने से साईकल पर बुय्युर जा रहा था। अगर भैंस से टकरा कर वह गिर न पड़ता तो मैं उसे देख भी न पाता।

"कहां जा रहे हो मामा, इतनी सवेरे?" मैंने पूछा। गांव के आदमी से हमारा कोई-न-कोई रिश्ता था। बड़ों को नाम से पुकारना असमर्यादा समझी जाती थी।

"तुम्हारे रघू मामा बीमार हो गये हैं, लगातार कै कर रहे हैं। डाक्टर के लिए बुय्युर जा रहा हूँ।" सुब्बाराव कहता-कहता चला गया।

मैं अंगोछा उठाकर जल्दी-जल्दी पुल की तरफ गया। अन्नपूर्णा मामी भी वहां जा रही थीं।

मामा झोंपड़े के बाहर कै कर रहे थे। चेहरा उतरा हुआ था। आहें भरते, फिर कै करने लगते। कमलवेणी उनकी कनपटी पकड़े खड़ी थी और उसकी मां तौलिया और पानी लिये मामा की ओर ध्यान से देख रही थी। आस-पास पांच-दस आदमी इकट्ठे हो गये थे।

मामी ने जाते ही मामा का माथा पकड़ा और सहलाने लगी। कमलवेणी सहमी हुई-सी पीछे हट गई और उनकी ओर लगातार घूरने लगी। उसकी मां तो एकाएक ऐंठ-सी गई। मामा कुछ न बोले। वे बोल भी न पाते थे। मामी उनको बिठाकर अच्छी तरह कै कराने लगी।

"लगता है बुखार भी आ गया है।" मामी ने कहा।

"बुखार? तू?" मामा को उनको वहां देखकर अचम्भा हुआ। मामी की आंखें छलछला आईं। मामा के यह कहते ही कमलवेणी ने

मामी से कहा, "तुम हटो ।"

"हूँ।" मामी ने एक बार उसकी ओर घूरा, कमलवेणी पीछे हट गई। सब की नजर उस पर ही थी।

मामा को उलटी कराकर मामी ने उन्हें बिस्तरे पर लिटा दिया। कभी वह सिरहाने की ओर जाकर उनका माथा रगड़ती, कभी पैताने की तरफ जाकर उनके पैर दबाती। चादर ठीक करती, बिस्तरा ठीक करती। लोग धीमे-धीमे आते और चले जाते। मामी को उनके आने जाने की शायद खबर भी न थी।

कमलवेणी और उसकी मा प्रातः की कॉफी पीने चली गई। निवृत्त होकर कमलवेणी पिछवाड़े में बाल संवारने लगी।

मामा ने करवट बदलते हुए पुकारा, "कमलवेणी, कमलवेणी।" कमलवेणी पास आई। "बैठ यहां।" मामा ने उसको मामी की हाजरी में ही अपने बिस्तर पर बिठा लिया।

"आप जाइये, हम हैं न यहां देखने के लिये।" कमलवेणी ने कहा, पर मामी न हिलीं।

"जाओ न, वे भी तो नहीं चाहते हैं।" कमलवेणी की मां ने कहा। मामी झुलसी जाती थीं। साधारण स्त्री के लिये इतना अपमान सहना कठिन था। मामी मूर्तिवत् मामा के पैताने के पास बैठी रहीं। मामा ने अपने पैर हटा लिये, पर मामी न हिलीं। हमें ही मामा को देखकर गुस्सा आ रहा था।

डाक्टर साहब अपनी कार में आये। उन्होंने मामा की परीक्षा करके बताया, "कोई घबराने की बात नहीं, मामूली बुखार है। ज्यादा पी गये हैं, अपचन है। शाम को फिर आऊंगा।" यद्यपि वहां कमलवेणी, उसकी मां, सुब्बाराव और उसकी पत्नी वगैरह खड़े थे, तो भी डॉक्टर ने ये शब्द मामी से ही कहे। कमलवेणी और उसकी मां तो आधा सुनकर चली गई।

"खुराक ?" मामी ने पूछा।

"आज कुछ न दीजिये, कल तक ठीक हो जायेंगे।" डॉक्टर सा
ने कहा।

थोड़ी देर बाद मामा सो गये। मामी उनके पास बैठी थीं, हो
हिलते जाते थे। शायद राम-नाम जप रही थीं और अंदर कमलवेणी औ
उसकी मां सवेरे का भोजन बनाने की तैयारियां कर रही थीं।

मैं वहां से जब भोजन के लिये घर जा रहा था तो कर्ण के घर के
सामने रामस्वामी खड़े थे। उनके साथ दो-तीन आदमी थे। वे नूजवीड
से वापिस आ गये थे। बहुत प्रसन्न नजर आते थे।

"जमींदार साहब अपील के लिये सब खर्च देने के लिये मान गये हैं।
दानी महाराज हैं। यह कम्बख्त मुकदमे के बारे में उनसे पहिले ही कह
आया था। अपील में हम जीतेंगे, देखा जायगा। कर्ण जी, अब आप
अपील कीजिये। नरसिंह से मैं कह-सुन लूंगा।" रामस्वामी ने कहा।

"आप बेफिक्र रहिये," वेन्कय्या ने कर्ण को कुछ हिचकिचाता
देख कर कहा। "आपका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।"

जब धान पकता है तो लगता है जैसे सोने की खेती हो रही हो। दो
चार महीने पहिले की हरियाली सुनहली हो जाती है।

धान की कटाई शुरू हो गई थी। गांव सुनसान-सा लगता था
किसान रात-दिन खेतों-खलिहानों में ही पड़े रहते। स्त्रियाँ ही घर में
रहतीं। बच्चे भी सहायता करने खेत पहुँच जाते। न अब बड़ के नीचे
भीड़ लगती थी, न पीपल के नीचे ही।

खेतों में रंग-बिरंगी साड़ी पहने, एक तरफ गरीब स्त्रियां धान
काटतीं और दूसरी तरफ सिर पर पग्गड़ बांधे आदमी। लोकगीतों से
वातावरण गूंजता। मालूम होता कि कोई होड चल रही हो, अन्त्याक्षरी
चल रही हो।

इन दिनों गांव की आबादी भी बढ़ जाती थी। कई सरकारी नौकर

जिन्होंने खेत 'लीज़' पर दे रखे थे, अपना भाग वसूल करने के लिए गांव आ जाते। दो-चार दिन रहते, फसल का अनुमान लगाते और चले जाते। फिर दो-तीन महीने बाद अपना पैसा ले जाते। हमारे गांव में कई ऐसे व्यक्ति थे।

कभी कड़वाकोल्लु में काफी ब्राह्मण घर थे, अब एक-दो ही रह गये हैं। लगभग सभी विजयवाड़ा चले गये हैं। पौरोहित्य से जीवन निभता न था। अब उनमें से कई दुकानों में क्लर्की करते हैं। ऊपर के खर्च के लिये पैसे बना लेते हैं, खाने-पीने के लिये अब भी गांव से बहुत कुछ मिल जाता है।

गांव के मुखासादार भी वापिस आ गये थे। उनके साथ हमेशा गांव का मुन्सिफ सूरय्या रहता। रात भर उनके घर में बत्ती जलती। दो-चार आदमी जागते रहते। वे जान के लिये सदा डरते रहते।

बन्दर में मुकदमा चल रहा था।

मुखासादार ने मिन्नत करके अदालत से एक महीने की अवधि मांग ली थी। अब भी जब कभी मामा के आदमी बन्दर जाते तो वे भी अपने आदमी बन्दर दौड़ाते।

नरसिंह मामा की अनुपस्थिति में कर्ण उस टायर की तरह थे, जिसमें से हवा निकाल दी गई हो। उन तीन गांवों में पांच-दस ब्राह्मण परिवार रह गये थे। सब मुखासादार के साथ थे। कर्ण बिरादरी से करीब करीब बहिष्कृत थे। यहां तक कि गांव का मुन्सिफ भी उनको नौकरी से हटाने का प्रयत्न कर रहा था। जब तक मामा गांव में थे, मुन्सिफ की न चलती थी। अब वे भयभीत थे।

इन दिनों मुन्सिफ भी व्यस्त रहते। आज किसी लम्बाडी को पकड़ते, कल किसी और को। झूठ-मूठ उन पर आरोप लगाते और पैसे एंठते। नरसिंह मामा उनको ये काम न करने देते थे। अब मुन्सिफ मनमानी कर रहे थे। गाँव के बड़े किसानों के सामने वे भीगी बिल्ली बन जाते, गरीबों को वे सताते।

काट्टूर में वेन्कटेश्वर राव भी कटाई के लिये आ गये थे। आमद
का निश्चित, स्थिर स्रोत तो जमीन ही थी। लड़ाई-झगड़े के लिये उ
दिनों किसी को फुरसत न थी। वेन्कटेश्वर राव स्वयं छड़ी लेकर खेतों
निगरानी किया करते। जो उनको अच्छी तरह जानते थे, उनका तो य
भी कहना था कि कमर में वे हमेशा छुरी रखते थे।

रघू मामा की तबियत ठीक हो गई थी, पर वे कहीं दिखाई न देते
थे। बहुत-कुछ पूंछतांछ करने पर पता लगा कि वे श्रीकाकुलं गये हुए
हैं। श्रीकाकुलं में एक प्राचीन मन्दिर है। हमारे गाँव से वहां प्रतिवर्ष
काफी लोग जाते हैं। मामा भी कई बार हो आये थे। मामी का तिरस्कार
कर वे शायद पछता रहे थे।

मामाओं के खेत पक चुके थे। सुब्बु मामा रोज खेत जाते। कुछ कर
न पाते। मजदूर न मिलते। मजदूरी काफी बढ़ गई थी। मुखासादार एक-
दो आने ज्यादा देकर उनको उनके पास आने नहीं देते थे। मामा
धाँधली भी न कर पाते थे।

कटाई, बोना, वगैरह पहिले मामा के खेतों से शुरू होती थी, किन्तु
अब कुछ और बात थी। मामा का न होना सभी को अखर रहा था।

"कहीं कुछ पता लगा तुम्हारे चाचा का?" नरसिंह मामा की
पत्नी, नागम्मा, अपने लड़के, प्रसाद से पूछ रही थीं।

"अभी श्रीकाकुलं से नहीं आये हैं। आते होंगे।" प्रसाद ने
कहा।

"तुम्हारे पिता हमें भी किसके सहारे छोड़ गये हैं? सारा गाँव
अपना धान काट रहा है और हमारे यहां कटाई शुरू भी नहीं हुई। अगर
कहीं बारिश आ गई तो सारा धान खड़ा-खड़ा सड़ जायगा।" नागम्मा
ने कहा।

वे नाक-भौं चढ़ाती हुई सुब्बु मामा के घर गईं। वे वहां कम ही

आती-जाती थीं। सुब्बु मामा घर में न थे। वे चौबीसों घण्टे खेत की रखवाली करते, वहीं रहते। वे खौलती हुई अपने घर वापिस आगईं।

"जब तक धान घर में नहीं आ जाता, तब तक कुछ नहीं मालूम क्या होगा ? एक भाई परोपकार करके बरबाद हो रहे हैं और एक यह है कि भाई के लिये अपनी छोटी अंगुली तक नहीं उठाता। मैं भी कहां आकर फंसी।" वे साड़ी समेट कर पिछवाड़े में बर्तन मांजने लगीं।

हमारी परीक्षा समीप आ रही थी। मैं प्रसाद के घर पढ़ने चला जाता। हम बैठे पढ़ रहे थे। किसी ने किवाड़ खटखटाया। बाहर सुब्बु मामा थे और सड़क पर एक गाड़ी खड़ी थी। किवाड़ के खुलते ही सुजाता और उसकी मां, वीरम्मा गाड़ी से उतर आईं। सुजाता शायद छुट्टियों में घर आई थी। वह प्रसाद से बातें करती रही और उसकी मां नरसिंह मामा की पत्नी से।

"क्यों तुम्हारे यहां कटाई हो रही है न ?" नागम्मा ने पूछा।

"हां, हां, सब उसी काम पर लगे हुए हैं। मैं फुरसत निकाल कर चली आई हूँ।"

"हमारे यहां तो अभी शुरू ही नहीं हुई है।" मामी ने सुब्बु मामा की ओर देखते हुए कहा।

"मजदूरों का मिलना मुश्किल हो रहा है।" सुब्बु मामा ने कहा।

"जीजा के पास जो खबर भिजवा देते ?" उनकी बहन ने सुझाया।

"फिर उनको भी तो मजदूर चाहियें, भाई भी घर में नहीं है।"

"मैं घर वापिस जाते ही मजदूर भिजवा दूंगी।"

"कोई बात नहीं, काम होने पर ही भिजवा देना, ऐसी जल्दी की कोई जरूरत नहीं, मैं बता दूंगा।" मामा ने कहा।

"जल्दी कुछ नहीं है ? और लोगों ने खलिहानों में भी धान डाल दिया है, और यहां क्या बताऊं ? " नागम्मा ने कहा।

न सुब्बु मामा ही कुछ बोले न उनकी बहिन ही।

वीरम्मा और उनकी लड़की अन्नपूर्णा मामी से मिलने गईं। मामी

आंगन में एक गढा खुदवा रही थीं। वे स्वयं एक खटिया पर दीवार के सहारे बैठी थीं। नया धान साल भर के लिये एक गढ़े में भर दिया जाता था। आवश्यकता पड़ने पर निकाल लिया जाता था। मामी उनको देखते ही उठीं। उनके पैर धोने के लिये पानी दिया। सुजाता के कंधे सहलाने लगीं। सुजाता और उनकी आयु में अधिक अन्तर न था।

थोड़ी देर बाद रघू मामा झूमते-झूमते घर आये। वे हंस रहे थे उनके चेहरे पर से हंसी बहुत दिनों से गुम हो गई थी। उनको वीरवल्ली में ही किसी ने खबर दे दी थी कि उनकी बहन और सुजाता उनके घर गई हुई हैं।

यह भी सम्भव है कि उनकी बहिन उनके बारे में सब-कुछ जानकर ही सुजाता को अपने साथ लाई हों। अगर सुजाता न आती तो शायद मामा घर न आते।

"आजकल तो तुम मन्दिर वगैरह के चक्कर भी काट रहे हो, अच्छा ही है।" वीरम्मा ने कहा।

"सब इसी के कारण।" मामा ने मुस्कराते हुए मामी की ओर इशारा किया। सुजाता मामी की पीठ थपथपाने लगी।

"कितने जन्मों की तपस्या के बाद तुम्हें अन्नपूर्णा मिली है, नहीं तो तेरी करतूतों को कोई स्त्री बर्दाश्त कर सकती ... लिया कर।"

मामी साड़ी का आंचल मुख में रखकर हंसने का प्रयत्न कर रही थीं, पर आखों में आँसू डबडबा रहे थे।

"मंगाये देती हूँ।" मामी पिछवाड़े में गई और मामा 'पुप्पनादं, पुप्पनादं, (उनका नौकर) जा सुब्बाराव के घर से कॉफी ले आ। वह भी आजकल शहरी हो रहा है। जा बे जल्दी जा।' कह रहे थे। मामा को इस तरह कहता सुन हमारी हंसी और बढ़ गई।

"क्यों, तुम कॉफी नहीं पीते हो?" उनकी बहिन ने पूछा।

"ये तो उससे बड़ी चीज पीते हैं, कॉफी क्या काम आयेगी?" सुजाता ने हंसते हुए कहा।

"क्यों नहीं पीना छोड़ देते?" उनकी बहिन ने कहा।

"मैं पीता ही कब हूँ?" मामा सफेद झूठ बोल रहे थे। मामी, नागम्मा की आवाज सुनकर वे घर से बाहर चले गये।

"क्यों भाई, कटाई का काम शुरू करवाओ न।" नागम्मा ने कहा।

"सुब्बु ने नहीं कटवाया है?"

"वह तुम्हारी इंतजार कर रहा है, मजदूर नहीं मिल रहे हैं।"

"मिल जायेंगे, जल्दी ही क्या है?"

"तुझे क्या मालूम? घर में बच्चे हों तब न पता लगे।" नागम्मा ने मुस्कराने का प्रयत्न किया, पर मुंह बिगड़ कर रह गया और कृत्रिम मुस्कराहट भी न बनी।

नागम्मा गुनगुनाती चलीं गईं। मैं भी उनके साथ हो लिया। वह बड़बड़ा रही थीं, "यहाँ धान के लिये गड्ढा खोदा जा रहा है और वहाँ कटाई भी नहीं शुरू हुई है। जरूर दाल में कुछ काला है। चोर तो है ही, शायद भाई का हिस्सा भी हड़प कर गड्ढे में डाल लेना चाहता है। मैं नहीं गलने दूंगी इनकी दाल।" मामी कहती जाती थीं। उनकी जबान इतनी चलती थी कि भले ही कोई सुनने वाला हो, या न हो, वह अपना काम करती रहती थी।

आंगन में एक गढा खुदवा रही थीं। वे स्वयं एक खटिया पर दीवार के सहारे बैठी थीं। नया धान साल भर के लिये एक गढ़े में भर दिया जाता था। आवश्यकता पड़ने पर निकाल लिया जाता था। मामी उनको देख ही उठीं। उनके पैर धोने के लिये पानी दिया। सुजाता के कंधे सहलाने लगीं। सुजाता और उनकी आयु में अधिक अन्तर न था।

थोड़ी देर बाद रग्घू मामा झूमते-झूमते घर आये। वे हंस रहे थे। उनके चेहरे पर से हंसी बहुत दिनों से गुम हो गई थी। उनको वीरवल्ली में ही किसी ने खबर दे दी थी कि उनकी बहन और सुजाता उनके घर गई हुई हैं।

यह भी सम्भव है कि उनकी बहिन उनके बारे में सब-कुछ जानकर ही सुजाता को अपने साथ लाई हों। अगर सुजाता न आती तो शायद मामा घर न आते।

"आजकल तो तुम मन्दिर वगैरह के चक्कर भी काट रहे हो, अच्छा ही है।" वीरम्मा ने कहा।

"सब इसी के कारण।" मामा ने मुस्कराते हुए मामी की ओर इशारा किया। सुजाता मामी की पीठ थपथपाने लगी।

"कितने जन्मों की तपस्या के बाद तुम्हें अन्नपूर्णा मिली है, नहीं तो तेरी करतूतों को कोई स्त्री बर्दाश्त कर सकती है? तू इसकी ही पूजा कर लिया कर।"

"हां, हां, यही तो आफत है।" फिर मामा ने बात बदलते हुए कहा, "क्यों सुजाता, सब ठीक तो है?"

"आपकी मेहरबानी है।" सुजाता मुस्कराने लगी।

"थांक यू। क्या ये मान-मर्यादा शहर में सीख गई हो?" मामा ने कहा।

सुजाता हंसी और उसके साथ सब हंसने लगे।

"तुम्हें कुछ खिलाया-पिलाया भी है कि नहीं? मेम साहब को तो कॉफी पीने की आदत होगी। घर में कॉफी है क्या?" मामा ने पूछा।

सुरय्या ने बहुत दौड़-धूप की। मुखासादार को भी बुय्युर ले गया। और सुब्बम्मा की रिपोर्ट बुय्युर पुलिस स्टेशन से परे न गई। सुब्बम्मा ने शोर मचाया। वह बेशर्म थी। शोर करने में उसका कुछ न जाता था। मुखासादार ने उसे कुछ देना चाहा, उसने इसकी खबर भी गाँव में दे दी। मुन्सिफ ने धमकी दी पर उसने परवाह न की। दो-तीन दिन तक मुन्सिफ घर से न निकला, मगर जब निकला तो ऐसा ऐंठ कर निकला जैसे कुछ हुआ ही न हो।

ब्रह्मेश्वर राव खेत से सीधे काटूर चले जाते थे। आज नरसिंह मामा की पत्नी ने दोपहर को ही उनके पास खबर भिजवा दी थी कि शाम को वे उनके घर होते जायें। वायुसुता 'रजस्वला' हो गई थी। इस घटना को स्त्रियाँ बहुत महत्ता देती हैं।

भले ही पैसा न हो, नरसिंह मामा की गाँव में बड़ी हैसियत थी। वे प्रतिष्ठित थे। फिर वायुसुता उनकी सबसे बड़ी लड़की थी। माँ की लाडली। प्रकाश से एक-दो वर्ष छोटी थी।

नरसिंह मामा की पत्नी यह अवसर बड़े जोर-शोर से मनाना चाहती थीं। घर में न मामा थे, न पैसे ही। नागम्मा उत्सव मानने के लालच का संवरण भी न कर पाती थीं। दो-तीन घर उन्होंने उधार के लिये भेजा पर कुछ न मिला। उनके पास जो सोना चाँदी था, वह पहिले ही बिक चुका था। वे पशोपेश में थी।

अन्नपूर्णा मामी उनकी सहायता करने उनके घर आ गई। उनको जब मालूम हुआ कि नागम्मा पैसे की तंगी अनुभव कर रही हैं तो उन्होंने अपने गले की एक सोने की माला दे दी। बुय्युर जाकर उसको गिरवी रख पैसे भी ला दिये गये।

आस-पास के गाँवों से रिश्तेदार आ रहे थे। नरसिंह मामा के घर के आँगन में शहनाइयाँ और ढोल बज रहे थे। नहीं मालूम कि नरसिंह मामा जेल में क्या कर रहे थे? शायद उनको मालूम भी न हुआ होगा कि उनकी लड़की रजस्वला हो गई है और उनकी एक और जिम्मेवारी

खरे-खोटे

खलिहानों में धान के बड़े-बड़े ढेर इकट्ठे हो रहे थे। कई ढेर बहुत बड़े थे और कई छोटे-छोटे। बड़े-बड़े ढेर बड़े-बड़े किसानों के थे और छोटे-छोटे ढेर छोटे किसानों के। वे उनकी आर्थिक सत्ता के मापक थे।

नरसिंह मामा के खेत में अभी कटाई प्रारम्भ ही हुई थी। ब्रह्मेश्वर राव अपने मजदूर ले आये थे। वे स्वयं निगरानी कर रहे थे। सुब्बु मामा उनकी मदद कर रहे थे।

रघू मामा को ताडेपल्लि गूडिम से बुलावा आया और वे झट चले गये। पाँच-छः दिन से उनके बारे में कुछ न मालूम था। भाई की अनुपस्थिति में रघू मामा कुछ दिन ऐसे चले, जैसे सारी जिम्मेवारी उन्हीं पर हो, फिर वही पुरानी आदत। बंधा आदमी ही शायद रास्ते पर चलता है, वरना वह भी जंगली जानवर की तरह इधर-उधर निरुद्देश्य फिरता है।

जब कभी रघू मामा गाँव से बाहर जाते तो गाँव में तरह-तरह की बातें उड़तीं। कई कह रहे थे कि प्रकाश राव ने उनको वेन्कटेश्वर राव से समझौता करने के लिये बुलाया था।

उन दिनों एक और मजेदार घटना हुई। सुब्बम्मा कटाई के दिनों में पकौड़ी बेचना छोड़ खेतों में काम करने चली जाती थी। ज्यादा पैसे मिलते थे। वह एक दिन रात में घर वापिस जा रही थी, मुन्सिफ सुब्बा ने उसको मुखासादार के खेत में पकड़ना चाहा। उससे छेड़-छाड़ की। सुब्बम्मा बिगड़ गई और उसने दो-चार जमा दिये। अगले दिन जाकर ...पुर के पुलिस स्टेशन में रिपोर्ट भी लिखा दी।

न मुन्सिफ सीधा आदमी था, न सुब्बम्मा ही सीधी थी। सुब्बम्मा ...ा के प्रशंसकों में से थी। छुटपन में ही उसके पति गुजर गये थे, तब ...ाने उसने कितने पति चुने और कितने छोड़ दिये। जवानी गुजर ... थी, पर वह जवानी छोड़ न पाती थी। मुन्सिफ को वह कतई ना... ...द करती थी। दो-चार बार उसने उससे आखें लड़ाईं, पर वह ... देखे ही चली गई।

हुआ मेड पर चलने लगा। पर हमने वहाँ से न जाने की ठानी। वेंकय्या के रंग-ढंग से मालूम होता था कि जरूर वहाँ कुछ होने वाला था।

थोड़ी देर बाद एक गाड़ी बुय्युर की तरफ से आती दिखाई दी। जब वह कुएं के पास आई तो रघू मामा हमें देखकर गाड़ी से उतरे। मामा सजे-धजे थे, बाल कटवा रखे थे।

उनको गाड़ी से उतरता देख वेन्कय्या आदि उनको घेर कर खड़े हो गये। जरूर कोई गड़बड़ी थी। मामा ने प्रसाद को बुला कर कहा, "बेटा, तुम गाड़ी पर घर जाओ। बच्चों को कपड़े दे देना। फल वगैरह हैं।" गाड़ी के अन्दर एक तरफ केले थे और दूसरी तरफ़ कपड़ों का बण्डल, और भी जाने कितनी चीजें थीं।

प्रसाद के चेहरे पर खुशी के कोई चिन्ह न दिखाई दिये। वह पहिले की तरह ही खिन्न-सा था। मालूम नहीं उसे क्या बींध रहा था। वह मामा की आज्ञा पर गाड़ी पर चढ़ गया और चला गया। उसके साथ ही हमारे दो-तीन साथी भी चले गये।

मामा वेन्कय्या के साथ खेत में निकल गये।

"आप ही हमारी मदद कर सकते हैं, कल त्यौहार है। पता नहीं, हम कैसे मनायेंगे? घर में एक बोरा भी नया धान नहीं है। सारा का सारा खलिहान में ही पड़ा है। पीठ पर भी नहीं ढोया जा सकता। गाड़ी आ-जा नहीं सकती।" वेन्कय्या कह रहा था।

"क्यों?" रघू मामा ने मुखासादार के खेत को देखते हुवे पूछा।

"पहिले गाड़ियाँ इस खेत में से जाती थीं। मुकदमा खतम होने से पहिले हमने कुछ न करना चाहा। इधर-उधर से जाने की कोशिश की। सीधा रास्ता नहीं है, कीचड़ सूखा नहीं है। कहीं-कहीं तो धान खड़ा है।"

"मुकदमे का क्या हुआ?"

"चल रहा है और भगवान जाने कब तक चलता रहे।"

"हूँ, चलता रहे, पर हम फैसला देते हैं, देखा जायगा। होगा क्या

बढ़ गई है।

संक्राँति के लिये हमें दो दिन की छुट्टी दी गई। हम आराम से गप्पे लगाते घर जा रहे थे। वुय्युर में दर्जियों के पास से हम अपने नये कपड़े ला रहे थे। संक्राँति के समय बड़े-छोटे सबके लिये नये कपड़े बनते थे। नौकर-चाकरों को भी नये कपड़े दिये जाते। किसानों के लिये संक्रांति का त्यौहार विशेष महत्व का है। धान कटकर घर आ जाता है। पैसे भले ही न बनते हों, पर उस धान के भरोसे किसान इस अवसर पर काफी खर्च करते हैं।

प्रसाद खाली हाथ जा रहा था। उसके हाथ में सिवाय पुस्तकों के बस्ते के कुछ न था। उसके घर में संक्राँति नहीं मनाई जा रही थी। किसी के लिये भी नये कपड़े नहीं बन रहे थे। एक तो पैसे की तंगी थी, और मामा भी घर में न थे।

वीरवल्ली कुएं के पास पहुँचे तो वेन्कय्या वगैरह तम्बाकू पीते हुए मेढ पर निराश बैठे थे। हम भी कुंएं के पास बैठ गये। हमें कुछ समझ में न आ रहा था।

कुएं के पास ही वह जमीन थी, जो मुखासादार ने हड़प ली थी। वहाँ पका धान अब भी खड़ा था। एक तो वहाँ धान बाद में बोया गया था। फिर लोगों ने धमकी दे रखी दी कि अगर कोई मजदूर उस धान को काटने गया तो उसकी खैरियत न होगी।

नतीजा यह हुआ कि उस खेत में धान कहीं थोड़ा-बहुत जैसे-तैसे कटा भी, तो बाकी सब जगह वैसे ही खड़ा था। बहुत अच्छी फसल हुई थी। बड़ी-बड़ी धान की कंडियाँ लटक रही थीं। मुखासादार के दूसरे खेत पूरे कट चुके थे, वे गाँव में थे। वे इस जमीन के बारे में चिन्तित थे।

"क्यों, क्या बात है?" मैंने वेन्कय्या से पूछा।

"कुछ नहीं, तुम घर जाओ।" वह धोती समेट कर, धुंआ उगलता

हुआ मेड पर चलने लगा। पर हमने वहाँ से न जाने की ठानी। वेंकय्या के रंग-ढंग से मालूम होता था कि जरूर वहाँ कुछ होने वाला था।

थोड़ी देर बाद एक गाड़ी पुप्पुर की तरफ से आती दिखाई दी। जब वह कुएं के पास आई तो रग्घू मामा हमें देखकर गाड़ी से उतरे। मामा सजे-धजे थे, बाल कटवा रखे थे।

उनको गाड़ी से उतरता देख वेन्कय्या आदि उनको घेर कर खड़े हो गये। जरूर कोई गड़बड़ी थी। मामा ने प्रसाद को बुला कर कहा, "बेटा, तुम गाड़ी पर घर जाओ। बच्चों को कपड़े दे देना। फल वगैरह हैं।" गाड़ी के अन्दर एक तरफ केले थे और दूसरी तरफ़ कपड़ों का बण्डल, और भी जाने कितनी चीजें थीं।

प्रसाद के चेहरे पर खुशी के कोई चिन्ह न दिखाई दिये। वह पहिले की तरह ही खिन्न-सा था। मालूम नहीं उसे क्या बींध रहा था। वह मामा की आज्ञा पर गाड़ी पर चढ़ गया और चला गया। उसके साथ ही हमारे दो-तीन साथी भी चले गये।

मामा वेन्कय्या के साथ खेत में निकल गये।

"आप ही हमारी मदद कर सकते हैं, कल त्यौहार है। पता नहीं, हम कैसे मनायेंगे? घर में एक बोरा भी नया धान नहीं है। सारा का सारा खलिहान में ही पड़ा है। पीठ पर भी नहीं ढोया जा सकता। गाड़ी आ-जा नहीं सकती।" वेन्कय्या कह रहा था।

"क्यों?" रग्घू मामा ने मुखासादार के खेत को देखते हुये पूछा।

"पहिले गाड़ियाँ इस खेत में से जाती थीं। मुकदमा खतम होने से पहिले हमने कुछ न करना चाहा। इधर-उधर से जाने की कोशिश की। सीधा रास्ता नहीं है, कीचड़ सूखा नहीं है। कहीं-कहीं तो धान खड़ा है।"

"मुकदमे का क्या हुआ?"

"चल रहा है और भगवान जाने कब तक चलता रहे।"

"हूँ, चलता रहे, पर हम फैसला देते हैं, देखा जायगा। होगा क्या

खाक ? हाँक लाओ अपनी गाड़ियाँ। खेत में से हाँको। गाँव की ही तो जमीन है। मैं यहाँ बैठता हूँ। देख लूंगा।"

वेन्कय्या आदि थोड़ी देर तो हिचके; फिर हिम्मत कर, गाँव से गाड़ियाँ हाँक लाये। सारा-का.सारा वीरवल्ली वहाँ धीमे-धीमे जमा हो रहा था। कड़वाकोल्लु और पटलापाड्ड के लोग भी आ रहे थे। मुखासादार के आदमी भी वहाँ मौजूद थे। पर उनकी गिनती अधिक न थी।

मुन्सिफ भीड़ से बचता-बचता मेडों पर चक्कर काट रहा था।

रामस्वामी ने मामा को एक तरफ लेजाकर कहा, "कल त्यौहार है, क्यों ख्वाहम-ख्वाह झगड़ा मोल लेते हो?"

"इसमें झगड़ा क्या है? गाँव की जमीन है, गाँव वाले इस्तेमाल कर रहे हैं।" मामा ने कहा।

"अगर लाठियाँ चल पड़ीं तो......?"

"नहीं चलेंगी, है किसकी हिम्मत? रिपोर्ट होगी, मुकदमा होगा, होता रहे। एक आदमी है और सारे गाँव की नाक में दम कर रखा है।"

देखते-देखते मेड के साथ गाड़ी का रास्ता बन गया। गाड़ियाँ आने-जाने लगीं। किसी ने कुछ न कहा। मुखासादार जल-भुन कर रह गये। पर उनका वहाँ आने का साहस न हुआ। मामा जब मारते थे, तो उन की चोट लुहार की होती थी। बहुत दिन धैर्य रखा और आज उन्होंने अपने ढंग से फैसला कर दिया।

रात भर लालटेन लेकर वहीं बैठ रहे। उनके साथ उनके साथी भी थे। गाड़ियाँ चलती जाती थीं। सवेरा होते-होते खलिहानों से सारा धान घर पहुँच गया। सब प्रसन्न थे। रामस्वामी और कर्ण जरूर घबराये हुए थे।

पुल के पास अमलतास के पेड़ों के नीचे हर साल संक्राँति के मौके पर मेला लगता था। कुन्देर, काट्टूर, वीरवल्ली, पटलापाड्ड, कड़वाकोल्लु

आदि आस-पास गाँवों से नौजवान शौकिये अच्छे-अच्छे कपड़े पहन कर इकट्ठे होते। मेढे और मुर्गे लड़ाये जाते। सैकड़ों रुपये जुए में लगाये जाते।

अमलतास के पेड़ों के नीचे मुर्गे लड़ाये जा रहे थे। कई लहू-लुहान थे। लोग उनकी भिड़न्त के दाव-पैंतरे के साथ-साथ चिल्ला रह थे। रघू मामा मेले के अध्यक्ष से मालूम होते थे।

मामा को इनका बड़ा शौक था। चाहे कहीं भी वे हों, संक्राँति के दिन जरूरी तौर पर गाँव आ जाते थे। पहिले कभी वे अच्छे-अच्छे मुर्गे पालते थे। पर आज-कल उनके घर कई मुर्गियाँ जरूर थीं, पर लड़ाने लायक एक भी मुर्गा न था। मेढे भी न थे। उनका साथी सुब्बाराव अब भी उनका शौकीन था। उसी के मुर्गों को वे लड़ा रहे थे।

अभी दस-ग्यारह का समय होगा कि कई मुर्गों और मेढों का फैसला हो गया। यह साल मामा के लिये अच्छा नहीं समझा जा रहा था। उन्होंने तीन मुर्गे लड़ाये और तीनों हार गये। उनके दो मेढों की भी यही हालत थी।

मामा जब कभी मुर्गे लड़ाते तो वे प्रायः जीतते। मुर्गे और जुए के खेल से न मालूम वे कैसे अपने भविष्य का अनुमान कर लेते थे। जब कभी वे किसी द्विधा में होते तो ताश निकालते, उन्हें फैला देते और एक पत्ता चुन लेते। इस तरह अपना निश्चय कर लेते। हमें यह देखकर आश्चर्य होता था।

"अच्छा भाई, काम को देखें। किसके बैल जीतते हैं?" मामा ने जोर से कहा। सब तालियाँ पीटने लगे। पता नहीं कि वे मामा का परिहास कर रहे थे या अपना उत्साह प्रदर्शित कर रहे थे। मामा नीचे मुँह कर कमलवेणी के झोंपड़े में चले गये। जाते-जाते उन्होंने सुब्बाराव को आज्ञा दी कि काद्रूर जाकर महेश्वर राव के यहाँ से एक जोड़ी अच्छे बैल ले आये। वे फिर यथापूर्व कमलेवेणी के घर ही रहने लगे थे।

इधर मामी के घर अपना नया धान न आया था। पर उन्होंने

उधार ले लिया था। सवेरे-सवेरे दो-चार ब्राह्मणों को वस्त्र भी दान दिये थे। कई चमार उन से दान ले गये थे। अब उनके आँगन में दो-तीन पंक्तियाँ गरीबों की बैठी थीं, सुब्बाराव की पत्नी और दो-चार स्त्रियाँ उनको भोजन परोस रही थीं।

मामी हर संक्रांति पर गरीबों को यथाशक्ति दान देती थीं। उन्होंने यह मामा की इच्छा पर ही शुरू किया था। जरूरी खर्च भी वे ही देते थे। वे स्वयं ऐसे अवसरों पर उपस्थित होते थे। इस वर्ष भी अन्न के लिये कह गये थे, पर कमलवेणी के घर जा बैठे।

मामा ने कमलवेणी के घर अपने दोस्तों को न्योता दे रखा था। अगर ये दोस्त न होते तो शायद मुखासादार के आदमी कुछ गड़बड़ी करते। हो सकता है कि मामा को भी इसकी आशंका थी।

हमारे गाँव के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता था। नरसिंह मामा, मल्लिखार्जुन राव दोनों जेल में थे। कभी भी कुछ हो सकता था। मिनटों आँधी आ सकती थी, बलवा हो सकता था। कल मामा ने जो काम कर दिखाया था, उस पर गाँव वालों को अचरज हो रहा था। यद्यपि वे संक्राति के क्रीड़ा-कलाप में मग्न थे, तो भी डर था कि कहीं कुछ हो न जाये।

मामा और उनके साथी खा पीकर शराब की बोतलें खाली करने लगे। नरसिंर मामा जब गाँव में होते थे तो वे छुप-छुपाकर पी लेते थे और दूसरों को पिलाते थे।

उनको वहाँ बैठा देख लम्बाडियों का छोटा-मोटा झुंड लग गया। उन्होंने गाँव के बनिये को आवाज लगाई, "ए, इन सब को तम्बाकू दो, मेरे हिसाब में डाल देना, समझे।"

सुब्बाराव बैल और गाड़ी ले आया। बैल बड़े सुडौल थे। सफेद, कद्दे। बड़े-बड़े पुट्ठे। झूम-झूम कर चलते थे। गले में घंटियों की माला बाँधी गई थी। माथे पर टीका लगा हुआ था। कई ...
... थे।

दौड़ पुल से काहूर के पुल तक होती थी। दो मील का फासला था, दोनों तरफ भीड़ खड़ी थी। सड़क अधिक चौड़ी न थी। बैलों की जोड़ी को देख कर निश्चय कर लिया जाता था कि दौड़ में हिस्सा लिया जाय कि नहीं। फिर पंचायतदार तीन जोड़ी बैल चुनते। वे सड़क पर खड़े कर दिये जाते। मामा का जोड़ा भी चुना गया। वे खुद हाँक रहे थे। दूसरा कुन्देर का था, तीसरा पटलापाडू का।

पहिले-पहल पटलापाडू का जोड़ा आगे बढ़ा। मामा बीच में थे। पर तालाब तक पहुँचते-पहुँचते मामा का जोड़ा सबसे आगे था और पटलापाडू का सबसे पीछे। काहूर का पुल कोई आधा मील दूर होगा कि कुन्देर का जोड़ा मामा के जोड़े से आगे बढ़ गया। पर पुल के पास पहुँचते ही मामा का जोड़ा घोड़ों की तरह दौड़ा। परिचित रास्ता था। उनका जोड़ा ही जीता। उन्होंने कुन्देर वाले जोड़े को हाँकने वाले को गले लगा लिया। वह उनका सम्बन्धी था।

मामा बच्चों की तरह खुशियाँ मनाने लगे। वे अपने मुर्गों और मेढों की हार भूल गये। वे फिर सीना तानकर चलने लगे।

कर्णं के मकान के सामने, कर्णं, रामस्वामी, वेन्कय्या और दो-चार आदमी बैठे बातें कर रहे थे। रामस्वामी ने हाल ही में गाँव की बातों में दिलचस्पी लेनी शुरू की थी।

वेन्कय्या कभी कन्धे पर पड़ा अंगोछा ठीक करता, कभी लाठी से रोड़े तोड़ता, कभी रोड़े इधर-उधर फेंकता। वह किसी समस्या में उलझा हुआ लगता था।

"भाई, पानी में रहते मगर से बैर मोल लेना अक्लमन्दी का काम नहीं है। राघवैय्या का क्या रखा है? न उसको घर की फिक्र, न घर-बार की। बरबाद हो जायगा।" कर्णं कह रहे थे। वेन्कय्या सिर हिला रहा था।

"राघवैय्या का क्या कहना ? आँधी की तरह आता है और पान की तरह चला जाता है। भुगतना तो उनको पड़ता है जो पीछे रह जाते हैं। तुम खुद सोच लो।" रामस्वामी ने समझाया। वेन्कय्या चुप हो सिर हिलाता जाता था। वह कोई निश्चय न कर पाता था।

"अब नरसिंह भाई भी नहीं हैं, मुखासादार की ही चल रही है। वेंकटेश्वर राव और इसका साझा है। मनमानी कर रहे हैं। पुलिस भी इनकी मदद कर रही है। जो चाहें कर सकते हैं।" कर्ण ने कहा।

"अभी तुम खेती पर लगे हो और अभी उखाड़ दिये गए तो कहीं के भी न रहोगे। सोच लो। मुखासादार और वेंकटेश्वर राव ने इशारा किया तो शुगर मिल में भी कोई नौकरी न दीखी। साँपों से खेलना अच्छा नहीं है।" कर्ण वेन्कय्या को सावधान कर रहे थे।

"अब खेतों में भी काम नहीं रहेगा। थोड़ी-सी चिंगारी हुई तो वही पलक मारते ही लपट हो जायेगी और सारा गाँव तबाह हो जाएगा। तुम जवान हो, गरम खून है। हम उम्र वाले हैं। दुनिया देखी है। इस लिए समझा रहा है। मान जाओ।" रामस्वामी ने वेन्कया की पीठ थप-थपाते हुये धीमे से कहा।

"ये फौजदारी के मुकदमे काँटों के झाड़-से हैं, सही-सलामत बाहर निकलना बहुत मुश्किल है। पुलिस का मामला है और उनसे निपटना टेढ़ी खीर है। जहाँ इसने पुलिस में शिकायत की नहीं कि पुलिस वाले यहाँ डेरा डाल देंगे। अगर इससे लोहा लेना चाहते हो तो और भी मौके आयेंगे। इन रावों की आदतें जल्दी नहीं सुधरती हैं। अभी हमारा अच्छा समय नहीं है।" कर्ण ने अपना मुंह अंगोछे से पोंछते हुए कहा।

"तो आप मुझे क्या करने के लिये कहते हैं ? आखिर हमने ऐसा कौनसा गुनाह किया है ? गाँव की जमीन थी, हमने अपनी गाड़ियाँ हाँक दीं। इतना ही तो ? बताइये, क्या करूं ?" वेन्कय्या ने पूछा।

"तुम भूलते हो कि मुखासादार ने अदालत में मुकदमा जीता था।

कानूनी तौर पर तुम उसकी जमीन में नहीं घुस सकते।" कर्ण ने कहा।

"तो आप बताइये कि हम करें क्या?" वेन्कय्या के माथे की झुर्रियाँ फूल आई थीं।

"तुम पाँच-दस आदमी आपस में कुछ धान इकट्ठा कर लो, यानि *जितना नुकसान हुआ है, और मुखासादार को दे दो। थोड़ा-बहुत ही* तो नुकसान हुआ है। तब वह कुछ न कर पायेगा।" कर्ण ने सलाह दी।

"हो सकता है कि वह ले भी न। तुम्हारा धान तुम्हारे ही पास रहे।" रामस्वामी ने बताया।

"अगर यह राघवैय्या जी को मंजूर हो तो हमें भी मंजूर है। उस ब्राह्मण के सामने हम कैसे जाकर झुकें?" वेन्कय्या ने आपत्ति की।

"फिर वही राघवैय्या की बात? उसी की बदौलत तो यह सब हो रहा है, उसको तुम जानते ही हो, वह न हमारी सुनेगा न तुम्हारी ही। जिनकी वह सुनता था, वे अब जेल में हैं। उसका क्या जाता है?" रामस्वामी ने कहा।

"पर हम उनके पास कैसे जायें? अगर जाना ही होता तो गाड़ियाँ ही क्यों हाँकते?" वेन्कय्या ने पूछा।

"तुम्हें जाने के लिए कहता ही कौन है? मैं हो आऊंगा। तुम बाद में धान दे आना। तुम मेरे साथ चले चलो, बस, काफी है।" रामस्वामी ने कहा। न वेन्कय्या ने कोई आपत्ति की न उसके साथियों ने ही।

ब्राह्मणों में रामस्वामी पैसे वाले थे। काम पड़ने पर मुखासादार उन से लेन-देन कर लेते थे। रामस्वामी अगर नरसिंह मामा के मित्र थे, तो मुखासादार के भी अच्छे परिचित थे। जब कभी पुलिस वाले आते या तो वे मुखासादार के यहाँ धरना देते, या उनके यहाँ। रामस्वामी शायद यह आफत मोल लेना न चाहते थे। उनके बारे में कहना कठिन था, पैसे वाले थे।

वे वीरवल्ली में मुखासादार से मिलने चले। उनके पीछे वेन्कय्या और उसके साथी भी लड़खड़ाते जाते थे।

"राघवैय्या का क्या कहना ? आँधी की तरह आता है और पा
की तरह चला जाता है। भुगतना तो उनको पड़ता है जो पीछे रह जा
हैं। तुम खुद सोच लो।" रामस्वामी ने समझाया। वेन्कय्या चुप हो सि
हिलाता जाता था। वह कोई निश्चय न कर पाता था।

"अब नरसिंह भाई भी नहीं हैं, मुखासादार की ही चल रही है
वेंकटेश्वर राव और इसका साझा है। मनमानी कर रहे हैं। पुलिस भी
इनकी मदद कर रही है। जो चाहें कर सकते हैं।" कर्णं ने कहा।

"अभी तुम खेती पर लगे हो और अभी उखाड़ दिये गए तो कहीं
के भी न रहोगे। सोच लो। मुखासादार और वेंकटेश्वर राव ने इशारा
किया तो शुगर मिल में भी कोई नौकरी न दीखी। साँपों से खेलना
अच्छा नहीं है।" कर्णं वेन्कय्या को सावधान कर रहे थे।

"अब खेतों में भी काम नहीं रहेगा। थोड़ी-सी चिंगारी हुई तो वही
पलक मारते ही लपट हो जायेगी और सारा गाँव तबाह हो जाएगा।
तुम जवान हो, गरम खून है। हम उम्र वाले हैं। दुनिया देखी है। इस
लिए समझा रहा है। मान जाओ।" रामस्वामी ने वेन्कया की पीठ थप-
थपाते हुये धीमे से कहा।

"ये फौजदारी के मुकदमे काँटों के झाड़-से हैं, सही-सलामत बाह
निकलना बहुत मुश्किल है। पुलिस का मामला है और उनसे निपटना
टेढ़ी खीर है। जहाँ इसने पुलिस में शिकायत की नहीं कि पुलिस वाले
यहाँ डेरा डाल देंगे। अगर इससे लोहा लेना चाहते हो तो और भी मौके
आयेंगे। इन बाघों की आदतें जल्दी नहीं सुधरती हैं। अभी हमारा
अच्छा समय नहीं है।" कर्णं ने अपना मुंह अंगोछे से पोंछते हुए
कहा।

"तो आप मुझे क्या करने के लिये कहते हैं ? आखिर हमने ऐसा
कौनसा गुनाह किया है ? गाँव की जमीन थी, हमने अपनी गाड़ियाँ हाँक
दीं। इतना ही तो ? बताइये, क्या करूं ?" वेन्कय्या ने पूछा।

"तुम भूलते हो कि मुखासादार ने अदालत में मुकदमा जीता था।

कानूनी तौर पर तुम उसकी जमीन में नहीं घुस सकते।" कर्णं ने कहा।

"तो आप बताइये कि हम करें क्या?" वेन्कय्या के माथे की झुर्रियाँ फूल आई थीं।

"तुम पाँच-दस आदमी आपस में कुछ धान इकठा कर लो, यानि जितना नुकसान हुआ है, और मुखासादार को दे दो। थोड़ा-बहुत ही तो नुकसान हुआ है। तब वह कुछ न कर पायेगा।" कर्णं ने सलाह दी।

"हो सकता है कि वह ले भी न। तुम्हारा धान तुम्हारे ही पास रहे।" रामस्वामी ने बताया।

"अगर यह राघवैय्या जी को मंजूर हो तो हमें भी मंजूर है। उस ब्राह्मण के सामने हम कैसे जाकर झुकें?" वेन्कय्या ने आपत्ति की।

"फिर वही राघवैय्या की बात? उसी की बदौलत तो यह सब हो रहा है, उसको तुम जानते ही हो, वह न हमारी सुनेगा न तुम्हारी ही। जिनकी वह सुनता था, वे अब जेल में हैं। उसका क्या जाता है?" रामस्वामी ने कहा।

"पर हम उनके पास कैसे जायें? अगर जाना ही होता तो गाड़ियाँ ही क्यों हाँकते?" वेन्कय्या ने पूछा।

"तुम्हें जाने के लिए कहता ही कौन है? मैं हो आऊंगा। तुम बाद में धान दे आना। तुम मेरे साथ चले चलो, बस, काफी है।" रामस्वामी ने कहा। न वेन्कय्या ने कोई आपत्ति की न उसके साथियों ने ही।

ब्राह्मणों में रामस्वामी पैसे वाले थे। काम पड़ने पर मुखासादार उन से लेन-देन कर लेते थे। रामस्वामी अगर नरसिंह मामा के मित्र थे, तो मुखासादार के भी अच्छे परिचित थे। जब कभी पुलिस वाले आते या तो वे मुखासादार के यहाँ धरना देते, या उनके यहाँ। रामस्वामी शायद यह आफत मोल लेना न चाहते थे। उनके बारे में कहना कठिन था, पैसे वाले थे।

वे वीरवल्ली में मुखासादार से मिलने चले। उनके पीछे वेन्कय्या और उसके साथी भी लड़खड़ाते जाते थे।

मुखासादार अपने घर के आँगन में थे। एक तरफ मुन्सिफ था और दूसरी तरफ रामय्या। कोई सलाह मशवरा हो रहा था। सूरय्या की सलाह थी कि शिकायत न की जाय। सारा गाँव बिगड़ उठेगा। संक्रांति के मौके पर शिकायत की जाती तो हमें कहीं पानी भी न मिलता। इसीलिये मैंने शिकायत न की थी। इधर-उधर भागते रहने में हमें भी कहाँ चैन है?"

मुखासादार कुछ सोचते-सोचते सिर हिलाते जाते थे। रामस्वामी को घर का फाटक खोलता देख उन्होंने कहा, "आओ, बैठो। बहुत दिन बाद मिले।"

रामस्वामी एक चटाई पर बैठ गये। वेन्कय्या फाटक के पास खड़ा था। साधारणतः किसान फाटक के पास ही खड़े हो जाते थे। यद्यपि मुन्सिफ उनका अंतरंग मित्र था तो भी वह उनके घर में न जा सकता था। जात-पात की पाबन्दियाँ अब भी गाँव में सख्ती से बरती जाती थीं।

"कहो भाई, क्या बात है?" मुखासादार ने पूछा।

"ये लोग महसूस कर रहे हैं कि इन्होंने अच्छा नहीं किया कि आप के खेत में से अपनी गाड़ियाँ हाँक दीं। हरजाना देने के लिये तैयार हैं।" रामस्वामी कह रहे थे और वेन्कय्या वगैरह एक-दूसरे को घूर रहे थे।

"हरजाना देने की कोई जरूरत नहीं। आखिर इन लोगों को भी तो त्यौहार मनाना था। कहीं न कहीं से तो गाड़ियाँ जानी ही थीं। खैर कोई बात नहीं, आओ वेन्कय्या।" वेन्कय्या वहीं खड़ा रहा और मुन्सिफ की तरफ देखने लगे।

"आजाओ, कोई हर्ज नहीं है; अपना ही घर है।" ये वाक्य खासादार के मुख से पहिले कभी न निकले थे।

वेन्कय्या आँगन में गया और पेड़ के सहारे खड़ा हो गया। फिर उस कहा, "मुझे जरा काम है; जाना है।" वेन्कय्या सिर नीचे किये हुए ला गया, जैसे कोई बड़ी भारी गलती कर बैठा हो।

रामस्वामी और कर्ण रघू म
में थे। कानों-कान उन तक भी
मुखासादार से चिकनी-चुपड़ी क
गया तो मामा ने उसे वह डाँट
नहीं पाया।

ते खेतों-खेत वीरवल्ली
सिर फूटेगा।
कमल-

मामा मुर्गियों को दाना डा
उनको निहार रही थी। शाम क

"अरे भाई, हम तुमसे बहुत
रामस्वामी ने कहा। मामा प्रा
आसन दिया करते थे, पर उन्होंने तब मुँह तक न फेरा। कर्ण धानष्ठता क
कारण उनकी खटिया पर बैठ गये। मामा दाना खिलाते जाते थे। थोड़ी
देर बाद कर्ण भी नाक-भौं सिकोड़ते हुये, नाक पर अंगोछा रख, पीछे की
ओर खड़े हो गये। मामा ने शायद शराब पी रखी थी।

"हमने मुखासादार से सारी बात तय कर ली है, तुम्हारे भाई यहाँ नहीं हैं; इसको चिढ़ाना अच्छा नहीं है। बड़ा बुरा आदमी है।" रामस्वामी कह रहे थे।

"कर आये पुरोहित की पूजा?" मामा ने रूखे ढंग से कहा।

रामस्वामी कुछ झेंपे, पर इस तरह कहते गये जैसे कुछ उन्हें समझ में ही न आया हो। "एक मुकदमा सिर पर है ही, फौजदारी भी कर देता।"

"कर देता, चला है बड़ा अफसर, चापलूसी कर कराके पाँच-दस को क्या जान लेते हैं कि गाँव वालों पर अपना रौब दिखाते हैं। भाई साहब नहीं हैं, इसलिये तुम दोनों मनमानी कर रहे हो। अगर इतने बुज़दिल थे तो उससे मैदान ही क्यों लिया था? एक चोट लगी कि छटपटा कर घाव चाटने लगे।" मामा का मतलब कर्ण की हाल की गतिविधि से था।

"भाई साहब भी यही करते जो आज हम कर रहे हैं।" कर्ण ने रामस्वामी को जाने का इशारा करते हुए कहा।

मुखासादार आती हमेशा अपना उल्लू सीधा करने की पड़ी रहती दूसरी तरफ रामन्ं नीयत बुरी होती है। न इज्जत का ख्याल, न हैसियत थी कि शिकधी देखी तो मुख से लार टपका दी। दुम हिलाने लगे। पर शिन्भकाश राव का भी दिमाग बिगड़ रहा है। यह कादूर का चोर शि पास जाकर गिड़गिड़ाया होगा, व्यापार का लालच दिया होगा। ,ह नहीं जानते कि नेवले और साँप की मौत के बाद भी नहीं बनती।" रग्घू मामा जौ के दाने लेने के लिये झुके और कर्णं मुस्कराते हुए राम-स्वामी से कह रहे थे। "मैंने कहा था न ?" कर्णं ने इसका अनुमान जैसे पहिले ही कर लिया हो।

"हंसते काहे को हो ?" मामा सदा कर्णं से आदरपूर्वक बोला करते थे, पर आज बहुत गरमाये हुए थे। "तुम इन बातों में दखल न दो। अपने लेन-देन का व्यवहार ही करते रहो। तुम्हारी आंखें सिर्फ अपना ही फायदा देखती हैं। छोटा दिमाग, छोटी बातें। खबरदार, जो किसी के सामने जाकर गिड़गिड़ाये। गाड़ियाँ मैंने हंकवाई थीं। जब निबटने के लिये मैं यहाँ बैठा हूँ तो तुम्हें उसके पास जाने की क्या जरूरत थी ? जंगल में शेर न हो तो हर लोमड़ी शेर बनने की सोचती है। दो-चार पैसे क्या हैं कि गाँव की मुखियागिरी संभालने लगे हैं।"

कर्णं और रामस्वामी उल्टे पाँव चले गये। मामा रामस्वामी से कभी ी इस तरह पेश न आये थे। वे उनसे बात भी न करते थे। बिरादरी के ो, इस लिये कभी-कभी राम-राम हो जाती थी, बस।

"बुरा न मानो, यह सब चलती है। जब गुटबन्दी में फंसे हो तो ऱ्री है कि चिकने घड़े भी बनो, वरना हर बात काँटे की तरह चुभेगी। ार उसने तो पी रखी है।" कर्णं रामस्वामी को समझाने लगे।

"उम्र हो गई है और अभी तक अवारागर्दी नहीं गई। खैर, हमें क्या ा है ? जो उसकी मर्जी है वह करे।" सुब्बाराव को सामने से आता ा कर रामस्वामी ने झट अपनी बातों का रुख बदल दिया।

सुब्बाराव जब कमलवेणी के घर पहुँचा तो रग्घू मामा चप्पल पहन

कर अपना डंडा लिये, तम्बाखू पीते, मेड़ के रास्ते खेतों-खेत वीरवल्ली की तरफ जा रहे थे ।

"तुम जल्दी जाओ……इधर से गये हैं । किसी का सिर फूटेगा । जाओ, जल्दी जाओ । शायद वीरवल्ली जा रहे हैं, भागो ।" कमल-वेणी ने खेतों की तरफ घबराते हुए इशारा किया ।

वे सीधे मुखासादार के घर गये । फाटक खोला । उनके पीछे मुब्बा-राव था । किवाड़ खटखटाया । मामा ने उनके घर में कभी पैर न रखा था । यह सारा गाँव जानता था । उनको वहाँ देख दो-चार आदमी फाटक के पास जमा हो गये ।

मुखासादार ने स्वयं किवाड़ खोला । मामा को वहाँ खड़ा देख वे काठ हो गये । मुख से बात न निकली । पैर काँपने लगे । अधखुले किवाड़ के सहारे खड़े रहे ।

"सुना है तुमने वेन्कय्या से हरजाना लिया है ? कहो कि लिया है कि नहीं ?" मामा ने जोर से पूछा । मुखासादार के होश-हवाश उड़ गये ।

"नहीं तो ।" मुखासादार ने कुछ कहना चाहा । पर बात न निकली । वे चिल्ला भी न पाते थे । इधर मामा भी सुनी-सुनाई बात पर आ गये थे । किसी को उन्होंने पूरी बात सुनाने भी न दी थी ।

"एक-एक दाना वापिस कर दो……"

"मैंने लिया ही नहीं है ।"

"पुलिस में शिकायत की तो जिन्दा भी न रहोगे । मैं मुकदमेबाज नहीं समझता हूँ, तुरन्त फैसला कर दूँगा ।" मामा ने डंडा पटक क कहा । कहते ही वे तुरंत फाटक की ओर मुड़े । "खबरदार किये दे हूँ ।" मामा जल्दी-जल्दी फाटक से बाहर निकल गये । सड़क से कम वेणी के घर जा पहुँचे ।

सारा वीरवल्ली आधी रात तक मामा के बारे में चर्चा करता र

अन्नपूर्णा मामी आँगन में तुलसी की परिक्रमा कर रही थीं। कुछ जपती भी जाती थीं।

उनके घर में धान आया और चला भी गया। आँगन में खोदे-गढ़े खाली ही रहे। एक तो फसल ही कम हुई थी। देर में काटा गया था, इस लिए बहुत-सा धान खेत में ही झड़ गया था। मामी ने इतनी दान-दक्षिणा भी दी कि धान काफी चला गया। उन्हीं के यहाँ से कमलवेणी के यहाँ भी धान गया था।

मामी को स्वयं इस बारे में कोई चिन्ता न थी। पर गाँव वाले उनपर प्रायः तरस खाते। उनके बारे में यदा-कदा बातचीत होती। यह सुना गया कि वे तिरुपति और तीर्थ घूम आईं पर सन्तान न पाई। सन्तान क्या पूजा पाठ करने से होती है? देवताओं को रिझाने से क्या फायदा अगर पति ही रूठे हुए हों?

मामी की आर्थिक स्थिति के बारे में कादूर खबर भी पहुँची। मा-- की बहिन अपने भाई को खूब जानती थीं। अर्सा हो गया था मामा को घर पैसा लाये। जो इधर-उधर से लाते भी, उसे वे रंडी पर फूँक देते। आजकल तो वे बेहद शराब भी पीने लगे थे।

पिछले दिनों उनकी बहिन ने ही मामा के घर गाड़ी भर धान भिजवाया था। नरसिंह मामा के घर भी वायुसुता के रजस्वला होने पर दस-ग्यारह बोरे गाँव के भोज के लिये भेजा गया था। वे प्रायः कडवा-कोल्लु आकर भाइयों का परिवार देख आती थीं।

रघु मामा के बारे में कोई फिक्र न थी। उनके घर में कोई कमी न थी। सब ससुराल वाले भेज देते थे। उनकी स्त्री अपने घर की इकलौती थी। उनके एक बच्चा भी हुआ था। वे फिर तिरुपति जाने की सोच रहे थे।

सवेरे-सवेरे ही वीरम्मा कडवाकोल्लु आईं। रघु मामा ने मुखासा-र को कैसे डांटा-डपटा था, यह भी वे जान गई थीं। तब से गाँव में गर्मा-गरमी बढ़ रही थी। रामस्वामी और कई भी मामा से बिगड़े हुए

थे। कर्ण ने ही पुराने परिचय के कारण ब्रह्मेश्वर राव के पास खबर भिजवाई थी।

वीरम्मा नरसिंह मामा की पत्नी से बात-चीत कर रंगू मामा के घर गई। मामा को खबर भिजवाई।

थोड़ी देर बाद मुख में दातुन रखे, बिना मुँह धोये मामा घर में आये। यद्यपि सूर्य काफी चढ़ चुका था, तो भी ऐसा लगता था जैसे अभी उठे हों। आँखें लाल थीं। शराब की खुमारी अब भी चेहरे और चाल में नजर आती थी।

"तू अपने स्वास्थ्य का ख्याल रखा कर; देख कैसा दुबला हो गया है।" उनकी बहिन ने रुँधी हुई आवाज में कहा।

"ठीक तो हूँ।"

"लगता है तू अपना वादा भूल गया है। इस बेचारी को कब तक यों तड़पाएगा?"

मामा मुस्कराने लगे। उन्होंने अपनी बहिन को वचन दिया था कि घर में ही सोया करेंगे। वे अपनी पत्नी की ओर देख रहे थे और पत्नी किवाड़ की ओट में से बाहर तुलसी को देख रही थीं।

"सच पूछा जाय तो तू इसके लायक नहीं है······यह न समझना कि इसने कोई शिकायत की है।"

"करती तो अच्छा होता। फिर भी मैं कौन-सा लूला-लंगड़ा, अंधा-काना हूँ, हाँ-हाँ।" मामा ने मुस्कराते हुए कहा और उनकी बहिन अपने आँसू पोंछने लगी।

"तुम वचन पूरा करोगे कि नहीं?"

"जरूर करूँगा।" मामा ने जोर से सिर हिला कर कहा।

"नहीं तो मैं भाई के पास खबर भिजवा दूँगी। तुम्हारे जीजा सरकार से चिट्ठी-पत्री कर रहे हैं। उन्हें भाई के देखने की इजाजत मिल गई है। अगले महीने जायेंगे।"

"नहीं, नहीं, भाई साहब से कुछ मत कहना, तुम सच मानो। मैं

अपना वचन न मुकरूँगा, तुम बड़ी अच्छी हो।" मामा अपनी बहिन को बच्चों की तरह मनाने लगे। "तो क्या भाई साहब को मिला जा सकता है? मुझे किसी ने बताया नहीं। ये कम्बख्त कानून की बघारते हैं, इतना भी नहीं जानते। मैं भी जीजा के साथ जाऊँगा। क्या मैं भी चिट्ठी लिख सकता हूँ?" रघू मामा ने पूछा।

"मुझे क्या मालूम?" उनकी बहिन ने कहा। "अपने जीजा से पूछो।"

मामा दातुन चबाते-चबाते उठकर तुरन्त कादूर की ओर चल पड़े।

मल्लिखार्जन राव का लड़का इमली के पेड़ पर से गिर पड़ा था। उसका दाहिना हाथ टूट गया था और दो-तीन दिन से वह घर में पड़ा कराह रहा था।

मल्लिखार्जन राव यद्यपि गाँव के कल्याण के लिये जी-जान से काम करते थे, तो भी उनकी और उनके परिवार की सहायता करने वाला सिवाय मामा के कुटुम्ब के कोई न था। कई दो-चार बातें करते और अपने मन को खामोश कर देते। दया और दान का साथ उन्हें पसन्द न था।

गाँव आते ही, गाड़ी बंधवाकर, मामा लड़के को ले गये। लड़के की माँ भी साथ थीं। वुय्युर में हस्पताल तो था पर वह औरतों के लिये ही था, इसलिए मामा ने लड़के को विजयवाड़ा ले जाने की ठानी।

कमलवेणी को किसी ने बताया कि मामा की मल्लिखार्जन राव की त्नी, चन्द्रम्मा से घनिष्ठता थी। चन्द्रम्मा अच्छे चाल-चलन की नहीं मझी जाती थी। मामा के उनके घर आने-जाने के कारण कई अफवायें ड़ी हुई थीं। मामा को तो लोग बिगड़ा हुआ जानते ही थे।

कमलवेणी मामी के घर कभी न जाती थी, अगर कभी मिलती भी ऐसे मिलती, जैसे जन्म-जन्म की वैरी हो। वह मामी के पास जाकर ा के बारे में बुरा-भला कहने लगी। चन्द्रम्मा के बारे में भी कहा।

मामी को विवश हो उसको घर से निकालना पड़ा। वह बड़-बड़ाती और दो-चार के पास गई। गाँव फिर चन्द्रम्मा और मामा के विषय में काना-फूसी करने लगा। उनको लड़के का भी ख्याल न रहा।

मामा जब घर में न होते तो मामी घर में दिन-भर अकेली ही रहतीं। रात को नरसिंह मामा के बच्चे या नौकर सोने के लिये आ जाते। सुब्बा-राव घर के पास वाले छप्पर में ही सोया करता। कभी-कभी उसकी पत्नी भी मामी का साथ देने के लिये आ जाती, अन्यथा घर खाली रहता।

चन्द्रम्मा के घर सिवाय बच्चों के कोई न था। मामा ने सुब्बाराव को उन्हें बुलाने के लिये भेजा, क्योंकि वे भूखे-प्यासे पड़े हुए थे। अंधेरी रात थी, सुब्बाराव ने पहिले जाने में आनाकानी की। पर मामी के मनाने पर चला गया।

सुब्बाराव के चले जाने के बाद, खाना तैयार करने के लिये मामी पिछवाड़े में ईंधन लेने गईं। वहाँ उनको बापय्या का लड़का दीवार के पास दिखाई दिया। वह दियासलाई जला रहा था। मामी को देखते ही वह दीवार फाँद कर रफूचक्कर हो गया। मामी को वहाँ मिट्टी के तेल से भीगा कपड़ा दिखाई दिया। वक्त पर न आतीं तो उनका घर राख हो गया होता। वह जानती थीं कि बापय्या मुल्लामादर का तावेदार था।

मामी ने किसी से कुछ नहीं कहा। वे गाँव की गुटबन्दी से अपरि-चित न थीं। उनका ख्याल था कि शोर-शराबा करने से बिगड़ती परि-स्थिति और भी बिगड़ जाती।

मल्लिखार्जुन राव के बच्चों को खिला-पिलाकर मामी ने उन्हें अपने घर ही सुला दिया। सुब्बाराव भी अपनी खटिया पर सोया हुआ था। मामी दरवाजा खोलकर जागती रहीं। रह-रहकर लालटेन लेकर घर का चक्कर लगा आतीं।

आजकल प्रसाद से हमारी अधिक बात-चीत न होती। हम उसके

साथ स्कूल जाते और आते, पर वह अपने ध्यान में मग्न रहता। परीक्षायें शुरू होने वाली थीं, वह तैयारी कर रहा था।

हम स्कूल जा रहे थे। बीरवल्ली पार करने के बाद प्रसाद थैले में से चिरवड़ा निकाल-निकालकर हमें बाँटने लगा। गुड़ की डलियाँ भी ले आया था। वह खुश नजर आ रहा था और बातें कर रहा था।

"मामी ने चिरवड़े दिये हैं, खाओ।" प्रसाद कह रहा था। "आफत ल गई, नहीं तो घर में धुनाई होती। कल मैं घर से पैसे ले गया। स देनी थी। स्कूल में मैंने या तो रुपये खो दिये नहीं तो किसी ने कहीं जेब काट दी। मैं घबराया। किसी से कुछ कह भी न पाता था। मैं बताता तो माँ पीट-पीटकर भुरता बना देती। मैं इसी फिक्र में सो न पाया। आज सवेरे उठकर चाची के पास गया, उनको सारी नी सुनाई। उनके पास सौभाग्यवश बीस रुपये थे। उन्होंने तुरन्त दे और ये चिरवड़े भी दिये।" प्रसाद कहता-कहता हमसे दो-तीन आगे बढ़ गया।

हम कुएं के पास पहुँचे। वेन्कय्या भी हमसे आ मिला। उसके कपड़े धुले हुए थे। जेब में दो तीन कागज थे।

"मामा, कहाँ जा रहे हो?" मैंने वेन्कय्या से पूछा।

"जरा बन्दर जाना है, मुकदमे की आज सुनवाई है। और कोई लिये तैयार न हुआ।"

"क्यों?......" मैंने पूछना चाहा।

"बेचारे शिकंजे में हैं।"

"मस्वामी?"

"उनकी धोती ढीली पड़ गई है। ये पैसे वाले दो-चार मिनट की तरह जलते हैं और फिर बैठ जाते हैं। जब वे बिना काम के तो फिजूल गाँव की जल्लत क्यों पालें?" वेन्कय्या ने कहा।

दिन मामा ने दो-चार बातें सीधे ढंग से क्या कहीं कि उन्होंने से कान पकड़ लिये थे। "मुखासादार के आदमी क्या नहीं

जा रहे हैं, ?" मैंने पूछा।

"वे सब तो पहिले ही जा चुके हैं, हूँ।" कहता-कहता, वेन्कय्या आगे बढ़ा और प्रसाद से जा मिला।

"तुम्हारे पिताजी कब आ रहे हैं ?" वेन्कय्या ने पूछा। प्रसाद ने एक तरफ मुँह करके कहा, "शायद अगले महीने, मुझे नहीं मालूम।" प्रसाद जल्दी-जल्दी आगे चलने लगा। उसका प्रसन्न चेहरा एकाएक उतर गया।

हम चुप-चाप चलते जाते थे। जब पुय्युर पहुँचे तो सड़क पर एक जलूस चला आ रहा था। लाल-लाल झंडे लोगों ने पकड़ रखे थे। साम्यवाद के नारे लगाये जा रहे थे। किसी साम्यवादी नेता का पुय्युर में भाषण होने वाला था।

जलूस टाउन्शी की ओर ही जा रहा था। हम भी उसके साथ हो लिए। इस तरह का जलूस उससे पहिले मैंने कभी न देखा था।

मामा जब विजयवाड़ा से लौटे तो उनके साथ सुशीला भी थी। वह छुट्टी लेकर चली आई थी। चन्द्रम्मा अपने लड़के के साथ हस्पताल में ही थी।

सुशीला बन-ठनकर गांव आई थी। सुनते थे कि मामा ने ही उसे एक सुन्दर साड़ी खरीद कर दी थी। गहने भी पहिन रखे थे। खूब साज-शृंगार करके आई थी।

यूँ तो जब से मामा विजयवाड़ा गये हुए थे, कमलवेणी जल-सी रही थी, पर जब उसको यह मालूम हुआ कि मामा के साथ सुशीला भी आई है तो वह और आग होगई। मामा कमलवेणी के घर गये। वह उनका स्वागत करने के लिये उठी भी नहीं, उसकी मां भी आँखें घुमाती अन्दर चली गई।

"क्यों, क्या किसी ने बहका दिया है ?" मामा ने पूछा।

"बहकाने की क्या जरूरत है ? मैंने खुद अपनी आँखों से देखा

है।" कमलवेणी ने कहा।

"तुम्हारे भरोसे हम यहां आये हैं। चार दिन हो गये हैं, न बेटी ने खाया ही है, न पिया ही। अगर......" कमलवेणी की मां कहती कहती रुक गई।

"यह अगर-मगर क्या लगा रखी है?" एकाएक मामा का पार चढ़ने लगा।

"अब हम पर गुस्सा ही तो दिखाओगे।" कमलवेणी की मां यह कहती हुई उसको पिछवाड़े में ले गई।

"यहां महीनों से कपड़े मांग रही हूँ। एक साड़ी नहीं, और इन चमरिनों को सजाने में पैसे फूँके जा रहे हैं। चन्द्रम्मा को......" कमलवेणी जाती जाती कह रही थी।

"कमलवेणी?" मामा ने आँखें दिखाईं। वे अपना तौलिया उठा कर चल दिये। कर्ण के घर गांव की खबरें जानने गये।

दो पंचायत अफसर बंदर से हमारे गांव आये थे। लोगों का अन्दाज था कि मुखसादार की शिकायत पर ही वे आये थे। उन्होंने कमलवेणी की झोंपड़ी देखी। किसी से कुछ न कहा। नक्शे की मदद से उन्होंने सब-कुछ जान लिया। कमलवेणी की झोंपड़ी कुछ पंचायत ोर्ड की जमीन पर थी और कुछ नहर वालों की।

उन अफसरों ने कर्ण को डांट भी बताई थी, क्योंकि उसने सरकार ो वक्त पर इस दखली की सूचना न दी थी। कर्ण ने यह बात घबरा- र में बड़े बूढ़ों को बतादी।

"तुम्हारी बदौलत मेरे सिर पर आ पड़ी है।" कर्ण ने मामा के ते ही कहा। "जगह जल्दी खाली करदो वरना पुलिस वाले आकर ी करवा देंगे। दो दिन पहिले पंचायत वाले आये थे।"

"कोई बात नहीं, देखा जायेगा। मैं उनसे निबट लूंगा। तुम क्यों ते हो? मुकदमे का क्या हुआ?" मामा ने पूछा।

"मुझे क्या मालूम, वेन्कय्या गया था। अभी तक वापिस नहीं

आया है। रामस्वामी गये नहीं, वे इन बातों में नहीं फंसना चाहते।"

"मुरासादार और मुन्सिफ बन्दर में हैं न?"

"मुझे नहीं मालूम।"

इस पूछ-तलब के बाद मामा घर चले गये।

घर में मामी खटिया पर बैठी हुई थीं। एक छोटा सा-डंडा भी पास रखा था। मामा के अचानक आते ही वे हड़बड़ाती हुई उठीं। मामा की प्रतीक्षा वे नहीं कर रही थीं।

न मामी ने कुछ पूछा न मामा ने कुछ बताया। सिर्फ इतना ही मामा ने जानना चाहा, "मुत्यालराव आया है कि नहीं?"

"आया है, बाहर छप्पर के नीचे सो रहा है।"

मल्लिकार्जुन राव के बच्चों को वहां सोता न देखते तो मामा शायद कुछ कहते-सुनते। उनको वहां देख उनका मूड एकाएक बदल गया। चेहरे का तनाव ढीला पड़ गया। वे मामी को मन-ही-मन शायद प्रशंसा कर रहे थे।

खाना खाकर, बीड़ी सुलगाकर, मामा खटिया पर बैठ गये। काफी रात हो चुकी थी। "पर यह जागरण किस लिये? पहरा दे रही हो क्या?" मामा ने पूछा।

"हां।" मामी ने सारी घटना सुनादी।

"इन अवारों की इतनी हिम्मत! चींटी के पंख लग रहे हैं। मैं सब देख लूँगा, तुम बेफिक्र रहो। सो जाओ।"

थोड़ी देर बाद मामा नाक बजाने लगे और मामी जागती रहीं।

जगह-जगह झोंपड़ों पर रातों-रात लाल झंडे फहराने लगे। झण्डे वीरवल्ली में थे, कड्वाकोल्लु में थे और पटलापाडु में भी। पर हरिजन-वाड़ा में सबसे अधिक थे। यहां तक कि रंगू मामा के इमली के पेड़ पर भी कोई झण्डा बांध गया था।

हमारे घर में भी गरमागरम बातें हो रही थीं। पिताजी हमेशा झुँझलाये रहते। उनकी चचेरी बहिन का लड़का, लक्ष्मय्या जेल से छूट कर आया था।

छुटपन में कभी मैंने उनकी शकल देखी थी......ठीक तरह याद नहीं। अब उनका चेहरा चौड़ा-सा, चौकोर-सा था। काला रंग, घनी भौंहें। मोटा चश्मा, रूखे-घुंघराले बाल। होठों में हमेशा सिगरेट। उनकी आखें बहुत दूर देखती लगती थीं। वे अच्छा पढ़े-लिखे थे, इण्टरमीडियेट। वे पढ़ते-पढ़ते ही कम्यूनिस्ट पार्टी में दाखिल हो गये थे। पिता जी उनकी पढाई वगैरह का कुछ खर्च देते थे। पर जब वे राजनीति में उतरे तो पिताजी ने उनसे किनारा कर लिया।

पर पिताजी हमेशा उन्हीं के बारे में कुछ न कुछ कहते। नहीं तो सोचते रहते। कभी याद करते हुए-से, कभी गुस्से में।

लक्ष्मय्या का गांव हमारे गांव के पास ही था। गन्डिगुन्टा। पर उसने अब आकर वीरवल्ली में झण्डा गाड़ दिया था। फिलहाल वे वेन्कय्या के घर ठहरे हुए थे। उनके आते ही गांव में एक प्रकार की सनसनी पैदा हो गई। गांव का मुन्सिफ भी उनके पास मंडराता रहता। वह लक्ष्मय्या से मेल जोलकर कांग्रेसी नरसिंह मामा को चोट लगाना चाहता था। सब उसकी यह चाल समझते थे। लक्ष्मय्या भी इस बाबत बेखबर न थे। जब से आये थे मधुमक्खी की तरह व्यस्त थे।

रघू मामा शायद बापय्या के लड़के को खुले आम पकड़कर धुन देते। वे उसको अपने ही ढंग से सजा देते बावजूद इसके कि उनके घर पर दो लाल झण्डे फहरा रहे थे। मामी के बहुत कहने-सुनने पर वे अपने को थामे हुए थे।

दो-तीन दिन मामा कमलवेणी के घर न गये। कड़वाकोल्लु तक ...लकर दो-चार बार आए। वहीं उन्हें मालूम हुआ कि सरकार कम्यूनिस्टों ...ो छोड़ रही है। पी-पा कर पड़े रहते। हरिजनवाड़ा में सुशीला को भी ...लने न गये।

शाम को वे कर्ण के घर के सामने बैठे थे। उनके साथ एक-दो गाँव के बड़े बुजुर्ग भी थे, वेंकय्या भी था। वह दो दिन पहिले बन्दर से वापिस आया था। आते ही उसने चारपाई पकड़ ली थी। आज ही मुश्किल से कड़वाकोल्लु तक चल पाया था।

"क्यों, क्या हुआ बन्दर में?" कर्ण ने पूछा।

"मैंने आपकी चिट्ठी वकील साहब को दे दी थी। उन्होंने बड़ी दौड़-धूप की। मुखासादार ने भी बहुत जोर लगाया। अदालत ने आखिर मुकदमा मुल्तवी कर दिया। बीस दिन की मोहलत दी है। जज ने कहा है कि इस बीच में सब ठीक कर लो, फिर समय न दिया जा सकेगा।"

"कर्ण, आप तो हैं ही, केस देख लेना, जब तक भाई साहब नहीं आते हैं।" मामा ने कहा।

"अरे भाई, मुझे फुर्सत नहीं है। लड़की की शादी तय कर दी है। इस साल गर्मियों में करने का इरादा है। एक बार जल चुका हूँ, फूँक-फूँक कर चलने में ही अक्लमन्दी है। मैंने कान पकड़ लिए हैं।" कर्ण ने कहा।

"कान ही पकड़ने थे तो भाई साहब को इस मुकदमेबाजी के झमेले में क्यों धकेला था? बेकार में तिल का ताड़ बना रखा है।" रग्घू मामा की त्यौरियाँ चढ़ती देख सब लोग इधर-उधर देखने लगे। खामोशी छा गई।

थोड़ी देर में लक्ष्मय्या एक हाथ में लालटेन और दूसरे में कई सारी लाठियाँ और झंडे लेकर पुल की ओर जाता दिखाई दिया। स्कूल के अहाते के पास शाम को सभा थी। स्कूल का झोंपड़ा अब भी था, पर उसको कोई देखने-भालने वाला न था। पेड़-पत्ते सूख गये थे। किवाड़ों पर दीमक लग गई थी। आँधी-पानी के थपेड़ों को सहता वह किसी स्वप्न का स्मरण चिह्न-सा लगता था।

"आज लगता है कि इन लोगों की सभा है।" एक ने कहा।

"हाँ-हाँ।" वेंकय्या ने बताया।

"इन लोगों ने रातों-रात गाँव में झंडे इस तरह लगा दिये हैं जैसे अभी गाँव का पता लगा हो।" कर्ण ने कहा।

"नया जोश है।" किसी और ने चुटकी ली।

"सरकार आज इनके साथ है, जो चाहें सो करें। कोई कुछ नहीं कह सकता।" कड़वाकोल्लु के एक वृद्ध ब्राह्मण ने कहा।

"इनकी पार्टी पहाड़ी नाले की तरह है, किसको क्या मालूम कब किधर वह पड़े और कब बाढ़ आ जाये। रूस के पिछलग्गू हैं अपने देश की फिक्र नहीं और रूस की मदद करने चले हैं। रूस भी तो बेठिकाने का है। कभी हिटलर की बाँह पकड़ने के लिये उतावला हो रहा था और अब अंग्रेजों का आँचल पकड़े हुए है।" कर्ण ने कहा।

"ये लोग तो बेपेंदे के लगते हैं। जिस तरफ रूस ने शक्ल मोड़ी कि उस तरफ ये साष्टाँग करने लगते हैं। अब तक अंग्रेजों की, सरमायादारों की धूल उड़ा रहे थे, तो अब उनकी पद-धूलि सिर पर लगाते हैं। क्या भरोसा इन लोगों का? गुलाम तो यही चाहता है कि मालिक के पैर में भी जन्जीरें पड़ें। ये लोग इतना भी नहीं समझते।" उस वृद्ध ब्राह्मण ने कहा।

घूमते-घामते मामा पुल के पास आ पहुँचे। लक्ष्मय्या का भाषण अंत तक उन्होंने सुना। कुछ न बोले। अंधेरा होने के बाद चुप-चाप घर चले गये। कमलवेणी के घर के टिमटिमाते दिये की तरफ देखा तक नहीं।

प्रसाद की परीक्षायें हो चुकी थीं और हर वर्ष की तरह वह सम्बन्धियों के यहाँ भी हो आया था। वह कभी-कभी मन बहलाने के लिए पुल पर चला जाता, हम भी उसके साथ जाते, यद्यपि हमारी परीक्षायें समीप थीं।

कमलवेणी रोनी-सी शक्ल बनाए अपने घर से निकली। उसकी आँखों से लगता था जैसे रातों न सोई हो। उसके साथ उसकी माँ थी। उसके चेहरे पर भी हवाइयाँ उड़ रही थीं। हम भी उनके पीछे चलने

लगे। प्रसाद पुल पर ही बैठा रहा।

यह हम जानते थे कि मामा से रूठ जाना खतरे से खाली न था। वे आदमी नहीं, ज्वालामुखी थे। फिर मच्छी कब तक मगर को आँखें दिखाती! अगर मामा अपनी नजर फेर लेते तो उस गाँव में उनको कोई पानी भी न देता।

कमलवेणी, बाद में मालूम हुआ, सुब्बाराव के सामने बहुत रोई-धोई। वह अपनी गलती महसूस कर रही थी। मामा चाहे किसी के साथ रहें उसका चुप रहना ही अच्छा था। जब पत्नी ही आँखें मूंदकर, जबान बन्द कर सब सह लेती है, तो एक खैल के लिए तो कठपुतली बनकर रहने में ही भला था।

सुब्बाराव ने मामा से यह कह दिया था। कमलवेणी उसी के घर जा रही थी। मामा वहीं इंतजार कर रहे थे और कोई होती तो मामा उसको गाँव से बाहर कर देते, पर वे जाने क्यों कमलवेणी पर जान देते थे। उससे दूर रहकर उनका मन भी न लग रहा था।

मामा को देखते ही कमलवेणी घुटने टेक कर बैठ गई। आँसू बहाने लगी। उसकी माँ भी गिड़गिड़ाने लगी। उसकी आवाज में रोना था, पर आँखों में तरी न थी। मामा कमलवेणी को रोती देख पिघल-से पड़े। वे झट उनके साथ इस तरह चले, जैसे इस दिन की प्रतीक्षा कर रहे हों। थोड़ी देर बाद वे खेतों के रास्ते कमलवेणी के घर चले गये।

मैं आज जानता हूँ कि स्त्रियाँ आवेश में कुछ-का-कुछ कह बैठती हैं। फिर आँसू बहाने लगती हैं। यही भावुक स्वभाव उनका आकर्षण है और उनके कष्टों का स्रोत भी।

रामय्या खेत से वापिस आ रहा था। वह रोज खेत जाता, काम करता। उसके खेत में हर समय कुछ-न-कुछ लगा रहता। युद्ध का काल था। हर चीज़ के दाम चढ़े हुए थे। वह मुखासादार को भी पैसे देने लगा था। पर जो कुछ वह देता था, उसकी पत्नी उसका बहुत-सा भाग मुखासादार को फुसलाकर वापिस ले लेती थी। रामय्या के पैर जम रहे थे।

शाम को मामा, नये कपड़े पहन, नया दुपट्टा कन्धे पर डाल कमल वेणी के घर से निकले। हमें पुल के पास बैठा देखकर, मामा भी हमा साथ मुंडेर पर बैठ गये। बहुत दिनों बाद हमें उनके साथ बैठने क मौका मिला था।

"मामा, तुम्हें तो आजकल फुर्सत ही नहीं मिलती है ?" मैंने पूछा

मामा मुस्कराए, पीठ थपथपाकर कहने लगे, "हैं, अब तो तुम लोग बड़े हो गए हो।"

"पर उम्र का फर्क तो आप में और हमारे में उतना ही है, जितना पहिले था......" मैं अभी कह ही रहा था कि मामा ने कहा, "लगता है बहुत पढ़-लिख गए हो ?" मैं शर्माता खड़ा रहा।

"मामा, कहाँ जा रहे हो ?" मैंने थोड़ी देर बाद पूछा।

"अरे अपशकुन हो गया, कहीं जाते समय किसी से यह नहीं पूछा करते कि कहाँ जा रहे हो। प्रसाद, कुछ कहना है पिताजी से ?"

"कब आयेंगे पिताजी ?" प्रसाद ने पूछा।

"शायद पाँच-दस दिन में, फूफा उनसे कल मिलने जा रहे हैं। मैं भी साथ जा रहा हूँ। मुझे सरकार ने मिलने की इजाज़त नहीं दी। राजमंद्री जाकर फिर कोशिश करूँगा। जुगत लगी तो पिताजी को देख लूँगा। घर में भी यही कह देना।" मामा ने प्रसाद का कन्धा सहलाते हुए कहा।

मामा सीना तान कर चल दिये। मामा से बदला लेने के लिये कितने ही मौके की तलाश में थे, यह हम जानते थे। पर वे ऐसे बेधड़क निकल जाते, जैसे उनकी रक्षा करने के लिये दस अंगरक्षक आगे-पीछे जा रहे हों। हमें आश्चर्य होता।

:

रामय्या के घर में त्यौहार-सा था। बाजे-गाजे भी शायद बजते अगर कोई सुनने वाला आता। गरीबों को वह मिठाई बंटवा रहा था, पर

लेने वाले कम ही आये थे। उसके परिवार की इतनी बदनामी थी कि सिवाय दो चार मनचलों के उसके घर कोई न आता।

रामय्या ने एक जोड़ी बैल खरीदे थे, थोड़ा पैसा मुखासादार ने दिया और थोड़ा प्रकाश राव ने। उसने अब थोड़ा बहुत कमा भी लिया था। अब पद्मा भी एक तरह से बाजार में थी। गरीब के लिये सम्भवतः इस संसार में परिश्रम करके सम्पत्ति जमा कर लेना असम्भव है—बिना बेईमानी, धोखेबाजी, ठगाई के।

रामस्वामी तो यह भी कहते थे कि जब सारा परिवार बैलों की तरह जुता है, वह एक जोड़ी बैल नहीं, पांच छः साल में पांच-दस जोड़ी खरीदेगा। पत्नी कमाती है, लड़की कमाती है, बेशर्म है। पैसे के पीछे जो पागल होते हैं, उनको अच्छे-बुरे की तमीज़ नहीं होती। रामस्वामी की यह बात सुन लोग उन्हीं की हँसी उड़ाने लगे। उन्होंने खुद हजारों रुपया, लेन-देन में, दलाली में, अच्छे-बुरे तरीकों से कमाया था। अब वे हज की बिल्ली बनते थे। लोगों का तो यह भी कहना था कि वे छुप-छुपकर रामय्या से राम राम भी कर लेते थे।

रघू मामा की अनुपस्थिति में एक और घटना घटी। उनके बारे में गांव में कानाफूसी हो रही थी। सुना कि कोई कुन्देर से अँधेरा होने के बाद आया और सारी रात कमलवेणी के घर रहा और सवेरे मुँह पर कपड़ा डाल कर चला गया। न जाने यह बात कहाँ तक सच थी। कईयों ने इस बात को बड़ी महत्ता दी और कई ने इसको 'रंडियों की आँख-मिचौनी' कहकर अनसुना कर दिया।

ज्यों-ज्यों नरसिंह मामा के रिहाई के दिन पास आते जाते थे लोग कमलवेणी के बारे में भी गुफ्तगू करने लगे थे। "भाई के आने के बाद राघवैय्या अपनी रखैल गाँव में रख सकेंगे? क्या वे पहिले की तरह ही उसका इन्तजाम करेंगे? क्या कमलवेणी गांव छोड़ने को मानेगी? क्या नरसिंह जी उसको पंचायत की जमीन पर रहने देंगे?" ये प्रश्न पूछे तो जाते, पर उनके उत्तर प्रायः नहीं दिये जाते थे।

ब्रह्मेश्वर राव राजमन्द्री से वापिस लौटते हुए मामा के यहाँ एक रात ठहरे। उन्होंने बताया कि मामा की हालत अच्छी ही थी। रघू मामा के बारे में पूछने पर उन्होंने बताया, "वह मेरे साथ राजमन्द्री आया, बहुत कोशिश की, पर उसको देखने की इजाज़त न मिली। अफसरों की जेबें गरम कीं, पर कोई फायदा न हुआ। वह ताडेपल्लि गूडिम उतर गया था। फिर राजमन्द्री जायेगा, नरसिंह जी को लिवा लायेगा। चार पाँच दिन में आजायेंगे......मुझे लोगों ने पहिले नहीं बताया कि कैदियों से मिला जा सकता था, नहीं तो मैं कभी का चिट्ठी-पत्री करके उनसे मिल आता, खैर।"

हम सब नरसिंह मामा की रिहाई की प्रतीक्षा कर रहे थे।

द्वितीय परिच्छेद

मल्लिखार्जुन राव का परिवार, रग्घू मामा की पत्नी, सुब्बु मामा की पत्नी, वीरम्मा, और गांव के बहुत से लोग बुय्युर में एकत्रित थे। नरसिंह मामा और मल्लिखार्जुन राव की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे रिहा कर दिये गये थे।

युद्ध का काल था। बसें कभी समय पर आतीं तो कभी न आतीं, कारों का भी कोई ठिकाना न था। कई बसें गुजर गईं, पर नरसिंह मामा न आये।

उन दिनों सत्याग्रह लगभग समाप्त हो चुका था। यद्यपि कई नेता जेलों में थे। कांग्रेस का काम चौपट था। स्वयं गांधीजी चुप थे। जेल जाने वाले सत्याग्रहियों की संख्या न के बराबर थी। वातावरण में निरुत्साह और स्तब्धता थी।

मित्र-राष्ट्र बहुत हाथ-पैर पटक रहे थे, पर उनकी हार पर हार हो रही थी। यूरुप पर जर्मनी का अधिकार था। वह रूस की तरफ बढ़ रहा था। इधर जापान भी आगे बढ़ता जा रहा था। सर्वत्र अंग्रेजों को नीचा देखना पड़ रहा था।

सब चीज़ों के दाम बढ़ गये थे। अनाज भी अच्छे दाम पर बिक रहा था। किसानों के पास पैसा था। पर बाजार में खरीदने को चीजें न थीं। रुपया जमा हो रहा था। कई अपनी पुरानी मुरादें पूरी कर रहे थे, शादी-सगाई की योजनायें बना रहे थे।

बुय्युर की सड़क की नुक्कड़ पर मोटर की ध्वनि सुनाई पड़ी। सब

चौकन्ने खड़े होगये। उत्सुकता से मोड़ की ओर देखने लगे। क्लौ
आउट था, कुछ न दिखाई देता था।

मोड़ पर से एक के बाद एक मोटर आने लगीं। लोग उचक-उच
कर देखने लगे। पर जब वे पास से गुजरीं तो उन्होंने लम्बी सांस खींचीं
वे फौजी लारियां थीं, बन्दर की ओर जा रही थीं।

सुनते थे कि उन दिनों बन्दर में काफी फौज जमा थी। फौजी
लारियाँ दिन-रात बन्दर और विजयवाड़ा घूमतीं, खाकी वर्दी वाले फौजी
हमेशा दिखाई देते। फौजी भिन्न-भिन्न देशों के थे। गोरे, हिन्दुस्तानी,
अफ्रीकी, आदि-आदि।

हमारे गांव के कई सारे चमार फौज में भरती हो गये थे। जिनके घ
एक जून भी हंडा न चढ़ता था, अब वे दोनों समय भर पेट खा रहे थे
खेती के लिये मजदूर मिलने मुश्किल हो गये थे। और जो मिलते भी, वे
दुगनी मजदूरी मांगते। गांव के अच्छी जात के लोग भी शहरों में काम
करने जा रहे थे। हमारे दो-चार रिश्तेदार भी गन्नावरं में लगे हुए थे।
वहां एक हवाई अड्डा बन रहा था।

साढ़े आठ बजे के करीब, आखिरी बस में नरसिंह मामा और
मल्लिखार्जुन राव उतरे। साथ रघू मामा और सुब्बु मामा भी थे।
कर्णं तो थे ही। उनके उतरते ही, उनको पुष्पमालायें पहिनाई गई
नरसिंह मामा के माथे पर उनकी बहिन ने टीका लगाया। मामा प्रसाद
ी पीठ थपथपाने लगे। और जाने क्यों वह रोता जाता था। वायुसुता
ी बिलख रही थी। नरसिंह मामा की पत्नी की आँखें भी भर आई थीं।

यही हालत मल्लिखार्जुन राव के परिवार की थी। उनके लड़के का
थ अब भी पट्टियों में था। हाथ बेकार-सा हो गया था। मल्लिखार्जुन
 उसके हाथ को बारबार छूकर देख रहे थे।

हम सबको वहाँ देखकर नरसिंह मामा की छाती फूली। वे एका
लम्बी-लम्बी सांसें लेने लगे। आंसू टपकने लगे। वे इधर-उधर देख-
सीधे कड्वाकोल्लु की ओर चल दिये। वे मौन थे। शायद वे कुछ

न बोल पाते थे। चेहरे पर गम्भीरता थी, खिन्नता-सी बढ़ी दाढ़ी, सूखा-सा चेहरा, माथे पर शिकनें, चाल में शिथिलता। ऐसा मालूम होता था, जैसे कोई ऐंठी हुई रस्सी खुल गई हो। बहुत दुबले होगये थे। अच्छा हट्टा कट्टा शरीर था, अब हड्डियों के मचान से लगते थे।

मल्लिकार्जुन राव जी का किस्सा ठीक उलटा था। उनका भार बढ़ गया था, चेहरे पर भी रौनक थी। स्वभाव से वे हँस-मुख थे। अब वे पाँच छः वर्ष छोटे भी लगते थे। मानो किसी हास्पिटल से पूर्ण स्वस्थ होने पर डिस्चार्ज किये गये हों।

नरसिंह मामा गांव की ओर चलते जाते थे। रघू मामा बन्दर-विजयवाड़ा की सड़क पर ही खड़े थे। मैं भी उनके साथ था। नरसिंह मामा विजयवाड़ा सवेरे ही आगये थे। कांग्रेस के दफ्तर में लोगों से बातचीत करते-करते काफी देर हो गई थी। उन्होंने कार से आना भी इनकार कर दिया। यद्यपि ब्रह्मेश्वर राव किसी मित्र की कार ले गये थे। नरसिंह मामा यह न चाहते थे कि उनको लिवा लाने के लिये लोग बुय्युर आयें। इसीलिये उन्होंने आखिरी बस से आना उचित समझा।

थोड़ी देर बाद कार आई। कार में श्री ब्रह्मेश्वर राव और उनके दो-चार मित्र बैठे थे। कार को पहले आना चाहिये था। पर टायर कहीं बिगड़ गया, मरम्मत कर-कराकर अब पहुँचे थे।

कार के आने तक नरसिंह मामा बुय्युर के पुल तक पहुँच चुके थे। मामा बहुत कहने-सुनने पर भी कार में न बैठे, क्योंकि कार में सबके लिये जगह न थी। कार में स्त्री-बच्चों को भेज दिया गया।

जब हम गांव पहुँचे तो गांव निःशब्द था। मुखासादार की खिड़कियों में से रोशनी आ रही थी। नरसिंह मामा के घर में तब भी काफी लोग एकत्रित थे, यद्यपि दस बज रहे थे।

सवेरे हाथ में लोटा लिये नरसिंह मामा नहर के पुल की ओर निकले।

चौकन्ने खड़े होगये। उत्सुकता से मोड़ की ओर देखने लगे। ब्लैक-आउट था, कुछ न दिखाई देता था।

मोड़ पर से एक के बाद एक मोटर आने लगीं। लोग उचक-उचक कर देखने लगे। पर जब वे पास से गुजरीं तो उन्होंने लम्बी सांस खींची। वे फौजी लारियां थीं, बन्दर की ओर जा रही थीं।

सुनते थे कि उन दिनों बन्दर में काफी फौज जमा थी। फौजी लारियाँ दिन-रात बन्दर और विजयवाड़ा घूमतीं, खाकी वर्दी वाले फौजी हमेशा दिखाई देते। फौजी भिन्न-भिन्न देशों के थे। गोरे, हिन्दुस्तानी, अफ्रीकी, आदि-आदि।

हमारे गांव के कई सारे चमार फौज में भरती हो गये थे। जिनके घर एक जून भी हंडा न चढ़ता था, अब वे दोनों समय भर पेट खा रहे थे। खेती के लिये मजदूर मिलने मुश्किल हो गये थे। और जो मिलते भी, वे दुगनी मजदूरी मांगते। गांव के अच्छी जात के लोग भी शहरों में काम करने जा रहे थे। हमारे दो-चार रिश्तेदार भी गन्नावरं में लगे हुए थे। वहां एक हवाई अड्डा बन रहा था।

साढ़े आठ बजे के करीब, आखिरी बस में नरसिंह मामा और मल्लिखार्जुन राव उतरे। साथ रघू मामा और सुब्बु मामा भी थे। कर्णं तो थे ही। उनके उतरते ही, उनको पुष्पमालायें पहिनाई गईं। नरसिंह मामा के माथे पर उनकी बहिन ने टीका लगाया। मामा प्रसाद की पीठ थपथपाने लगे। और जाने क्यों वह रोता जाता था। वायुसुता भी बिलख रही थी। नरसिंह मामा की पत्नी की आँखें भी भर आई थीं।

यही हालत मल्लिखार्जुन राव के परिवार की थी। उनके लड़के का हाथ अब भी पट्टियों में था। हाथ बेकार-सा हो गया था। मल्लिखार्जुन राव उसके हाथ को बारबार छूकर देख रहे थे।

हम सबको वहाँ देखकर नरसिंह मामा की छाती फूली। वे एका-एक लम्बी-लम्बी सांसें लेने लगे। आंसू टपकने लगे। वे इधर-उधर देख-कर सीधे कम्माकोल्लु की ओर चल दिये। वे मौन थे। शायद वे कुछ

न बोल पाते थे। चेहरे पर गम्भीरता थी, खिचड़ी-सी बढ़ी दाढ़ी, दुबला-सा चेहरा, माथे पर सिकुड़नें, चाल में शिथिलता। ऐसा मालूम होता था, जैसे कोई ऐंठी हुई रस्सी खुल गई हो। बहुत दुबले हो गये थे। अच्छा हट्टा कट्टा शरीर था, अब हड्डियों के मचान से लगते थे।

मल्लिकार्जुन राव जी का किस्सा ठीक उलटा था। उनका भार बढ़ गया था, चेहरे पर भी रौनक थी। स्वभाव से वे हँसमुख थे। अब वे साल छः वर्ष छोटे भी लगते थे। मानो किसी हॉस्पिटल से पूर्ण स्वस्थ होने पर डिस्चार्ज किये गये हों।

नरसिंह मामा गांव की ओर चलते जाते थे। रघु मामा चन्द्र-विजयवाड़ा की सड़क पर ही खड़े थे। मैं भी उनके साथ था। नरसिंह मामा विजयवाड़ा सवेरे ही आ गये थे। कांग्रेस के दफ्तर में लोगों से बातचीत करते-करते काफ़ी देर हो गई थी। उन्होंने कार से आना भी इनकार कर दिया। यद्यपि अखिलेश्वर राव किसी मित्र की कार ले आये थे। नरसिंह मामा यह न चाहते थे कि उनको लिवा लाने के लिये लोग बुस्पुर आयें। इसीलिये उन्होंने आखिरी बस से आना उचित समझा।

थोड़ी देर बाद कार आई। कार में श्री अखिलेश्वर राव और उनके दो-चार मित्र बैठे थे। कार को पहले आना चाहिये था। पर टायर कहीं बिगड़ गया, मरम्मत कर-कराकर अब पहुँचे थे।

कार के आने तक नरसिंह मामा बुस्पुर के पुल तक पहुँच चुके थे। मामा बहुत कहने-सुनने पर भी कार में न बैठे, क्योंकि कार में उनके लिये जगह न थी। कार में स्त्री-बच्चों को भेज दिया गया।

जब हम गांव पहुँचे तो गांव निःशब्द था। कुत्ताबादार की खिड़कियों में से रोशनी आ रही थी। नरसिंह मामा के घर में तब भी काफी लोग एकत्रित थे, यद्यपि दस बज रहे थे।

सवेरे हाथ में लोटा लिये नरसिंह मामा नहर के पुल की ओर निकले।

स्त्रियाँ अपना अपना काम छोड़कर उनकी ओर देखने लगीं। कोई भैंस को खोलती खड़ी हो गई, कोई दूध दुहती, कोई झाड़ू देती, कोई पानी छलकाती। प्रायः नरसिंह मामा को देखकर स्त्रियाँ परदा कर लेत थीं, पर आज वे उनको देख रही थीं।

गांव अभी जाग रहा था। उनके सामने बात करने की गांव के युवकों की हिम्मत न होती थी। वे नमस्ते करके रास्ते के एक तरफ खड़े होजाते थे। मामा उसी गांव में पैदा हुए थे। वहीं पाले पोसे गये थे। उनकी हम-उम्र उस गांव में कितने ही थे, पर वे अलग धरातल पर थे।

नित्य कृत्य से निवृत्त हो, वे पुल पर आकर खड़े हुए, सूरज निकल रहा था। नहर की रेती पर सूर्य की किरणें चमक-चमक कर लाल हो रही थीं।

पुल के पार नहर के किनारे, वृक्षों की पंक्ति के पीछे स्कूल का छप्पर था। छप्पर पर दो तीन गिद्ध बैठे थे। उन्हें देखकर नरसिंह मामा ने आँखें मूँद लीं। वे धीमे-धीमे स्कूल की ओर चले। रास्ता खराब था। स्कूल का फाटक लगभग टूट चुका था। चपरासी कहीं सो रहा था। बगीचे की क्यारियां सूखी पड़ी थीं। भूमि में भी तरी न थी। दीमक ने छप्पर के खम्भों को खोखला कर दिया था। छत भी कहीं-कहीं गिर चुकी थी। कोई आदमी न था।

नरसिंह मामा ने क्यारियों से मिट्टी उठाई, खाली कमरों की ओर नजर दौड़ाई, मिट्टी हाथ में मसल कर गिरादी। मेहनत से आदमी रेत में से कोई-न-कोई अच्छी फसल कर लेता है, पर देखने वाला न हो तो खड़ी फसल भी रेत हो जाती है, शायद वे यही सोच रहे थे। वे खम्भे के सहारे बैठ गये।

यह स्कूल, जिसे उन्होंने प्राणों से अधिक माना था, जिसके लिये इतनी दौड़-धूप की थी—परिवार की भी परवाह न की थी, आज गिद्धों का आसन बन गया था। वह क्यारी जिसे उन्होंने अपने रक्त से सींचा था, कंकर-कंकर उठाकर उनको मारती-सी लगती थी।

शिक्षा पकार उन्होंने पुनर्जन्म पाया था। वे शिक्षा द्वारा औरों को पुनर्जन्म देना चाहते थे......जो खुद न पा सके, औरों को देना चाहते थे, पर लेने वाले ही न आये। दाता मुँह मसोस कर रह गये। पियाऊ भी किस काम की, अगर कोई प्यासा पास न आये?

स्कूल के निर्माण के साथ उन्होंने अपने जीवन का निर्माण किया था। अगर नरसिंह मामा जिले में कुछ थे, तो उस स्कूल के बूते पर। अगर मामा असाधारण थे, तो वह भी उस स्कूल के आधार पर। अब उनका वह आधार ही ढह गया था।

नरसिंह मामा को सारा जिला जानता था। वे अपनी धुन के पक्के थे। चाहे सारा संसार शत्रु हो जाय, पर जो वे करना चाहते थे, वे करते जाते थे। वे अपनी शक्ति जानते थे और उसकी सीमायें भी। उनकी उनमें अभिलाषायें कम थीं और जो थीं वे भी लगाम में थीं। वे कर्तव्य-परायण थे, और कर्तव्यपरायण के लिए असफलता का कोई विशेष अर्थ नहीं होता। तो क्या स्कूल फिर चलेगा? क्यारियाँ फिर हरी-भरी होंगी? खाली कमरों में पाठ गूंजेंगे? वे अपने से पूछते-से लगते थे।

वे उठे और पैर घसीटते-घसीटते घर की ओर चले। घर में आस-पास के गाँव वाले उनके दर्शन करने जमा हो गए थे। कादूर से ही पाँच-दस आदमी आये थे। पटलापाडु के तो बहुत से थे। गाँव के धोबी, नाई सब वहाँ हाथ जोड़े खड़े थे।

मामा किवाड़ के पास, घर के बाहर ही, चटाई पर बैठ गये। उन्होंने हरएक से अलग-अलग उनका हाल-चाल पूछा। लोगों ने भी उनसे कई प्रश्न किये, वे उत्तर देते और गम्भीर बैठ जाते। वे कुछ खोए-खोए से लगते थे।

थोड़ी देर बाद वे पेड़ के नीचे हजामत बनाने लगे। वे बड़े-बड़े केश कट रहे थे। लम्बी दाढ़ी भी कट गई थी। वे एक बौद्ध भिक्षु-से लगते थे, गम्भीर—प्रभावशाली। ऐसा लगता था, जैसे जीवन के किसी नये अध्याय में वे प्रवेश कर रहे हों।

साथ उसके विचार भी बदलते हैं, तरक्की का चक्कर है। आदम के ज़माने में किसी ने कभी पूँजीवाद के बारे में सोचा था? या साम्यवाद के बारे में? समय के साथ, नई-नई परिस्थितियों के साथ नये-नये विचार पैदा होते ही हैं। पता नहीं कि वे ठीक हैं कि नहीं, खैर।"

"यानि कि आपको भी लाल रंग लग गया है?"

"रंग की बात नहीं, मैं सोच रहा हूँ शायद मैं गलत हूँ। अगर ये साम्यवादी हर साँस के साथ रूस की दुहाई न लें तो इनमें क्या खराबी है?"

"आप पूछते हैं कि क्या खराबी है? मैं पूछता हूँ कि अच्छाई क्या है? ये लोग देवी-देवताओं को दुत्कारते हैं, जात-पात को नहीं मानते कुली-मालिक को बराबर समझते हैं। कहीं पाँचों अंगुलियाँ समान हुई हैं?"

"पर तुम यह क्यों समझते हो कि कुली और मालिक का रिश्ता अंगुली-अंगुली का सा है। यह क्यों नहीं कहते कि आँख-आँख का है। दोनों आँखें बराबर हैं न? जाने दो, हर किसी का सोचने का अपना-अपना ढंग है। और सुनाओ।"

"आप भी पाले बदलते से लगते हैं। आप ही सुनाइये। कहा न गाँव भँवर है, वही बातें, वही आदमी।"

"अरे भाई, गाँव कम-से-कम भँवर तो है। जेल तो सड़ा पानी है, सड़ान है, आदमी भी सड़ते हैं। पर सड़ान में भी चीजें पैदा होती हैं। आदमी को सोचने का मौका मिलता है, नये ख्याल पैदा होते हैं। बड़े-बड़े आदमियों को नजदीक से देखने का अवसर मिलता है।"

"मतलब यह कि आपके ये नये विचार हैं?"

"मैं अभी सोच रहा हूँ, चौरास्ते पर हूँ। कुछ सोच नहीं पाता हूँ, र मेरा विचार इतना जरूर पक्का हो गया है कि जेल न जाता तो न्छा होता। दूर के ढोल दूर ही भले। मेरी यह भी राय है कि काँग्रे-यों को शासन की बागडोर नहीं संभालनी चाहिये थी। नतीजा यह आ कि अब हर काँग्रेसी अपने को मुगल जमाने का सुलतान माने बैठा

है। सिवाय मन्त्री और अध्यक्ष होने के वे कुछ और सोच ही नहीं पाते। नाम सेवा का है और सींचते अपने स्वार्थ को हैं। अरे भाई, सेवा ऊपर चढ़ने के लिए सीढ़ी नहीं है। उन लोगों के हाथ में सेवा एक जाली सिक्का-सा है, जो कमाल यह कि चलता है।"

"आप यह क्या कह रहे हैं?"

"आँखों देखी। इन लोगों में अभी से गुट बन गये हैं। इस सपने में हैं कि अंग्रेजों से कोई समझौता होगा ही, फिर शासन-सत्ता हाथ आयेगी तब कैसे मन्त्री और उपमन्त्री बना जाए। ये उस बेचारे बूढ़े गांधी को धोखा दे रहे हैं। हो सकता है कि उन्हें भी यह मालूम हो। तभी तो उन्होंने कहा था कि शासन की घूँस मत लो। किसी ने उनकी न सुनी। काँग्रेस को पद का घुन लग रहा है। वह भी शायद एक दिन ऐसे ही ढह जाएगी, जैसे दीपक लगा यह फाटक ढह रहा है। यह मेरा ख्याल है।"

"तब..........?" कर्ण न उनका विरोध ही कर पाते थे, न उन से सहमत ही हो पाते थे।

"किसी व्यक्ति का उद्देश्य अगर सेवा हो, तो उसके लिए यह जरूरी नहीं है कि वह किसी पार्टी का सदस्य हो, चाहे काँग्रेस हो या कम्यूनिस्ट। मैं मानता हूँ कि कई ऐसी सेवायें हैं जो पार्टी के बगैर नहीं हो सकतीं। उनकी बात अलग है। हमारे अभागे देश में सेवा के बहुत क्षेत्र हैं और बहुत से व्यक्ति अपने ढँग से बिना किसी पार्टी के सहारे अपना कार्य करते जा रहे हैं। उनको कोई पहिचाने या न पहिचाने, पर उनको यह तसल्ली होती है कि वे मनचाहा कार्य कर रहे हैं। अगर आदमी को यह सन्तोष न हो तो मन्त्री भी बन जाय, तब भी क्या बना? इसलिए मैं सोच रहा हूँ कि काँग्रेस के काम को फिलहाल छोड़ दूँ। बिना काँग्रेस की मदद के मैं अपना स्कूल चलाता था। लोगों में शिक्षा का प्रचार करना ही मेरा उद्देश्य है। काँग्रेस में भी तो शिक्षित अशिक्षितों को इस तरह देखते हैं, जैसे कोई अछूत हों। भगवान् ने बुद्धि सबको दी है, भले

ही अँग्रेज़ी शिक्षा न दी हो। महत्ता बुद्धि की है, शिक्षा की नहीं
अशिक्षितों में भी बुद्धि होती है। शिक्षा के होने से बुद्धि को विकास का
मार्ग मिलता है, पर उसके कारण कोई ऊँचा-नीचा नहीं बनता। काँग्रेस
में भी धनी की ही चलती है; कर्तव्य परायण की नहीं। मैं इस ख्याल में
था कि गांधी जी की संस्था में सिवाय सेवा के और कोई सिक्का न
चलता होगा। गांधीजी असली हालत से अनभिज्ञ हों, ऐसी बात नहीं।
इसलिए तो शायद वे काँग्रेस के चार आना मेम्बर भी नहीं हैं। नाम
उनका है और काम ये अपना करते हैं।"

"न जाने आप भी कैसे सोचने लगे हैं? कुछ समझ में नहीं आता।"

"जाने दो, मैं सोच रहा हूँ कि क्यों न स्कूल फिर चलाऊँ?"

"मगर......"

"मैं इसी काम में लगना चाहता हूँ, चाहे पैसा मिले या न मिले।
पढ़ने वाले भी आयेंगे और पैसे वाले भी। लक्ष्मय्या गाँव में है क्या?"

"मालूम नहीं।" कर्ण कहते-कहते फाटक के पास गये। नरसिंह
मामा भी उनके साथ आये। उनकी नजर नहर के पार अमलतास के
पेड़ों के नीचे वाली झोंपड़ी की ओर गई। "वह झोंपड़ी किसकी है?"
मामा ने पूछा।

"राघवैय्या की कह-कहाकर मैं भाई-भाई के बीच में क्यों भला
फाल्तू बुरा बनूँ? घर में पूछ लीजिए।" कर्ण ने कहा।

सवेरे-सवेरे नरसिंह मामा रग्घू मामा के घर गये। घर में मामा न थे
नरसिंह मामा को थोड़ी देर बाहर प्रतीक्षा करनी पड़ी। मामी तुलसी की
प्रदक्षिणा कर रही थीं। पूजा से निवृत्त होकर मामी किवाड़ के पीछे
खड़ी हो गईं। वे मामा के सामने न आती थीं।

"रग्घू कहाँ है?" मामा ने पूछा।

"आते ही होंगे।"

"वह क्या यहाँ नहीं सोया था ?"

मामी कुछ न बोलीं।

"कुछ घर का काम-काज भी करता है कि दिन-रात नशे में मस्त पड़ा रहता है ? मुझे सब मालूम है।"

"उनके कारण मुझे कोई कष्ट नहीं है।" मामी सिसकने लगीं।

"मैं सब जानता हूँ। आये तो घर भेज देना।"

नरसिंह मामा वहाँ से सुब्बु मामा के घर गये। वहाँ उन्हें सुब्बु मामा की सास ने बताया कि यदि ब्रह्मेश्वर राव खेती में दिलचस्पी न लेते तो फ़सल अब भी खेत में सड़ रही होती।

" तो वह कर क्या रहा था इतने दिनों ?" मामा ने झुँझलाकर पूछा।

सुब्बु मामा चक्की के दो पाटों में फँसे हुए थे। उन्होंने थोड़ी देर सोचने के बाद कहा, "वही जो हमेशा करते आये थे।"

नरसिंह मामा वहाँ भी अधिक देर न रह सके। सिर खुजाते-खुजाते वे निकले। वे कभी इधर देखते, कभी उधर। गाँव वैसा ही था जैसा कि वे छोड़कर गए थे।

घूम-घाम कर, तालाब के किनारे, पीपल के पेड़ के नीचे, वे जा बैठे। उनको वहाँ बैठा देख, सामने के हरिजनवाड़े से कुछ चमार भी आ गए। पर उनकी मुख मुद्रा देखकर वे चले गए। गाँव का नाई पुल की ओर जा रहा था, "जरा राघवैय्या को भेज देना।" मामा ने उससे कहा।

मामा आराम से बैठ भी न पाते थे। वे उठकर तालाब के किनारे चहलकदमी करने लगे। वे यह जानते थे कि उनका लिहाज कर गाँव वाले अपनी जबान जब्त किये बैठे हैं। मामा पंचायत बोर्ड के अध्यक्ष थे। और पंचायत बोर्ड की जमीन पर रघू मामा ने, बिना इजाज़त के, अपनी मर्ज़ी से झोंपड़ा बनवा लिया था। नरसिंह मामा को अपना कर्तव्य मालूम था।

पर समस्या यह न थी। वे उस समस्या की चिन्ता में थे जो उ
भाई के उनकी आज्ञा न मानने पर पैदा होगी। वे कुटुम्ब-कलह करा
न चाहते थे। वे यह भी जानते थे कि वेश्याओं के पीछे लोग घर-बा
भाई-बन्धु सब भूल जाते हैं। आज्ञाकारी भी आज्ञा का उल्लंघन करा
लगते हैं।

उनकी पत्नी ने उनको सारा किस्सा बता दिया था। उनको यह भी
मालूम हो गया था कि मुखासादार के कहने-सुनने पर सरकार ने इंस्पेक्टर
भेजे थे।

"बेचारी घरवाली इतनी भोली है। उसकी दिन-रात पूजा करती है
पर इसकी यह वाहियात आदत नहीं जाती। सख्ती बरतनी ही होगी।
मुझे पहिले ही उसे टोक देना चाहिये था। कभी-न-कभी तो कहना ही
होगा। अभी क्यों न कहा जाय?" मामा सोचते-से लगते थे। वे फिर
बैठ गये।

नाई वापिस आया। "जी, वे हैं नहीं।" उसने कहा।

"कहाँ गये हैं?"

नाई चुप रहा।

"बोलते क्यों नहीं हो?"

"जी, मालूम नहीं। वे शायद काटूर गये हैं।" नाई ने डरते-डरते
कहा।

"कहाँ? इतने सवेरे?" मामा ने ऊँचे स्वर में पूछा।

"माफ करें, मुझे नहीं मालूम।" नाई हँकलाने लगा।

नरसिंह मामा अपने घर चले गये। वे क्रुद्ध थे। कभी ओंठ मींचते-
खोलते, कभी मुट्ठियाँ बाँधते-खोलते। उनके मन में ज्वाला जल
रही थी।

वे जानते थे कि रघू मामा ने नाई को डरा-धमका कर झूठ कहल
भेजा है। वे यह भी जानते थे कि इससे पहिले कि वे एक और
आदमी भेजें, उनके भाई काटूर तक भी पहुँच जायेंगे। वे किसी को

भेज ही सकते थे। स्वयं कैसे जाते ?

रग्घू मामा के काट्टूर जाने के बाद उनकी बहिन नरसिंह मामा को देखने कड़याकोल्लु आई। वे अपने भाई को देखते ही सिसक-सिसक कर रोने लगी। मामा मुस्कराते बैठे रहे। उनकी मुस्कराहट कृत्रिम थी। वे किसी बात को छुपाते-से लगते थे।

"क्यों रग्घू काट्टूर आया था ?" मामा ने पूछा।

"हाँ।"

"कुछ उसने कहा ?"

"नहीं तो, क्यों क्या बात है ?" उनकी बहिन ने स्वाभाविक उत्सुकता से पूछा।

"क्या बताऊँ तुमसे ? सहने की भी हद होती है। उसने मुझे पसोपेश में डाल दिया है। अगर कुछ नहीं करता हूँ तो एक इल्लत, अगर करता हूँ तो दूसरी इल्लत। तुम नहीं जानती हो ? अच्छी-भली औरत मिली है और वह उसकी छाती पर दाल पीस रहा है।"

"आखिर मामला क्या है ?"

"रखैल के लिये पंचायत की जमीन पर झोंपड़ा डाल रखा है। कुछ तो अक्ल दिखाई होती। अब मुझे झोंपड़ा हटवाना है। वह इधर-उधर के बहाने बनाकर काट्टूर गया हुआ है। वापिस आ गया है क्या ?"

"मेरे साथ नहीं आया था, शायद शाम को आये। तुम क्यों इस झमेले में पड़ते हो भैय्या ?"

"तुम भी क्या पूछ रही हो ? इस गाँव में जो कुछ होता है, उसके लिये दुनिया मुझे जिम्मेवार समझती है। गल्ती करने वालों को दण्ड दिलवाता हूँ, फिर अपने भाई को कैसे छोड़ दूँ ?"

"मैं उससे कह दूँगी। तुम कहो और वह कहीं जिद पकड़ ले। भाई-

भाई में ख्वाहम-ख्वाह तू-तू मैं-मैं हो। मैं यह नहीं चाहती। मैं उसे समझा दूँगी। तुम अपनी सुनाओ।"

"क्या सुनाऊँ? जेल में सब ठीक था, दो बार खाना मिल जाता था। आराम से पड़ा रहता। जिन्दा हूँ, यही काफी है। बच्चे ठीक हैं न? सुजाता का क्या हाल है?"

"सब ठीक है, अगले महीने छुट्टियों में आ रही है।"

"तुम अपनी भाभी से बातचीत करो, मैं अभी आया।" नरसिंह मामा यह कहकर कर्ण के यहाँ चले गये।

होने को तो नरसिंह मामा पंचायत बोर्ड के अध्यक्ष थे, पर चिट्ठी-पत्री का काम-काज कर्ण करते थे। इससे पहिले कि रघू मामा के बारे में गाँव का और कोई व्यक्ति उनसे कुछ कहता, नरसिंह मामा चुपचाप खुद ही फैसला कर देना चाहते थे।

कर्ण के पास उस झोंपड़े के बारे में काफी बड़ा चिट्ठा तैयार हो गया था। चिट्ठी पर चिट्ठियाँ आ रही थीं। और कर्ण उनके उत्तर नहीं दे पाते थे। रघू मामा का मामला था। होशियारी से काम करना था और वे कुछ न करने में ही अपनी होशियारी समझते थे।

नरसिंह मामा ने एक नोटिस लिखवाई और कहा कि रघू मामा के पास वह अगले दिन पहुँचा दी जाये। जब वे नोटिस पर हस्ताक्षर कर रहे थे, उनके हाथ काँप रहे थे, पर चहरे पर एक प्रकार का सन्तोष दीख पड़ता था। जैसे कर्तव्य की कड़ी परीक्षा में वे उत्तीर्ण हो गये हों।

वे अकेले ही तब खेतों में निकल गये। दुपहरी ढल चुकी थी। ...ाली खेतों में ताड़ के पेड़ों की लम्बी-लम्बी छाया पड़ रही थी। मामा ...डों पर चलते जाते और दूर दूर तक देखते, लम्बी-लम्बी सांसें लेते।

शाम को जब वे घर की ओर चले तो पुल के पास, नहर की पटरी ..., रघू मामा लड़खड़ाते हुए दिखाई दिये। रघू मामा ने अपने सिर ... दुपट्टा ओढ़ रखा था। हो सकता था कि उन्होंने अपने भाई को देख ...ा हो और नजर बचाकर जा रहे हों।

रघू मामा ने शराब पी रखी थी। वे कई बार गिरते-गिरते बचे। वे अपने घर की ओर जा रहे थे।

घर पहुँच कर उन्होंने एक मोटी रस्सी ली। पिछवाड़े में गये। वहाँ अन्नपूर्णा मामी कोई काम कर रही थीं। वे उठ भी न पाई थीं कि मामा रस्सी लेकर उनकी पीठ पर मारने लगे। मामी के मुख तक चीख आती और मुख में ही रह जाती। आँसू बहातीं जातीं। उन्होंने मामा की चोटों से भी बचने का प्रयत्न न किया।

मामा असभ्य भाषा में जोर-जोर से चिल्लाते जाते थे, "भाई साहब से तूने शिकायत क्यों की? चमड़ी उधेड़ दूँगा। तेरी इतनी हिम्मत कि भाई साहब से चुगली करे। जो मेरी मरजी मैं करूँगा, तू कौन है?" मामा को चिल्लाता देख आस-पास के घरों की स्त्रियाँ इकट्ठी होगई। मामी सरक-सरक कर अन्दर चली गई और उन्होंने अन्दर से किवाड़ बन्द कर लिये।

"कहेगी और?.........तू होती कौन है? मैं उनसे भी भुगत लूँगा, भुगत लूँगा, देखती रह।" मामा ने पीटते-पीटते मामी को बेहोश कर दिया। खुद हाँफते-हाँफते खटिया पर जा लेटे।

इस घटना के बावजूद, रातों-रात, कमलवेणी और उसकी माँ मामी के घर आगई। सुब्बाराव ने झोंपड़े का सामान गाड़ियों पर लदवा कर मामी के घर भेज दिया था। लोग अन्नपूर्णा मामी पर तरस खाते और चुप रह जाते।

मामा का घर बड़ा न था। अठारह-बीस फीट का एक झोंपड़ा था, जिसमें वे स्वयं रहते थे। उसके अगल-बगल में उतने ही बड़े दो और झोंपड़े थे। एक में खाना आदि पकता था और गाय-भैंस बँधती थीं, दूसरे में, मामी एक तरफ पूजा-पाठ करती थीं, और दूसरी तरफ मामा कभी-कभी बैठते थे। वह एक चौपाल-सी थी। उसके पीछे एक कुआँ

था और उसके बाद इमली का पेड़।

कमलवेणी और उसकी माँ ने खास घर में आकर धरना जमा दिया मामी किवाड़ की आड़ में पड़ी कराहती रहीं। उन्होंने कुछ न कहा न मना ही किया, न आवभगत ही की।

सवेरे हर जगह यही बात चल रही थी। वीरवल्ली तक भी खबर पहुँची। मुन्सिफ ही शायद एक ऐसा व्यक्ति था जो यह सुन खुश नजर आता था। मामा के परिवार के किले में दरारें पड़तीं देख वह सन्तुष्ट हो रहा था। नरसिंह मामा यदि विशाल वृक्ष थे, तो वह उनकी छाया में एक कँटीली झाड़ी की तरह था। वह उनके प्रभाव को देख सदा जलता रहता था।

मुखासादार गाँव में न थे। वे बन्दर में थे। मुकदमे के बारे में घूम-फिर रहे थे। रामय्या की पत्नी और उसकी लड़की भी उनके साथ थी। रामय्या का कहना था कि वह आँखों का इलाज कराने गई थी। पर वेन्कय्या आदि का कहना था कि मुखासादार की उस पर भी नजर थी।

हम दौड़े-दौड़े मामा के घर पहुँचे। कई स्त्रियाँ अन्नपूर्णा मामी को दिलासा दे रही थीं। मामी मूर्तिवत् चुप थीं। उनके माथे पर दो-तीन जगह से खून निकल-निकलकर सूख चुका था। बाँहें सूजी हुई थीं। पीठ पर भी चोट लगी थी। मामी को शायद स्त्रियों की पूछ-ताछ पसन्द न थी।

कमलवेणी और उसकी माँ चौपाल में बैठी थीं। स्त्रियाँ आतीं, उनको गौर से देखतीं, अँगुली उठा-उठाकर उनको दुत्कारती चली जातीं। और वे दोनों बेशर्म लगातार पान चबाती जाती थीं।

कोई कहती, "बदजात औरतें हैं। इस जाति में शर्म हो तब न?"

कोई और कहती, "मर्द को तो बिगाड़ा ही, अब उसके घर में सेंध लगाने आई हैं।"

रघू मामा वहाँ न थे। उनकी खटिया खाली पड़ी थी। मोटा डंडा और चिकनी रस्सी अब भी देहली पर पड़ी थी। आस-पास के घर वालों

से पता लगा कि वे पौ फटने से पहिले ही कहीं चले गये थे। जितने मुँह उतनी बातें। कोई कहता कि काट्रूर गये हैं। कोई कहता कि श्रीकाकुलं गये हैं, नहीं तो ताडेपल्लि गूडिम। ठीक तरह कुछ नहीं मालूम हुआ।

थोड़ी देर बाद नरसिंह मामा अपनी बहिन को लेकर आये। तब तक गाँव की स्त्रियाँ जा चुकी थीं। सवेरे का समय था। सबको अपना-अपना काम था। केवल सुब्बाराव की पत्नी ही मामी के पास रह गई।

मामी को देखते ही वीरम्मा बिलखने लगीं। नरसिंह मामा उनको देख कर, मुँह मसोस कर बाहर चले गये। वे उन्हें देख न पाते थे। वे अपनी कमजोरी भी नहीं दिखा सकते थे। शायद उनको यह भी डर था कि मामी कुछ बुरा-भला कहें। उनको आता देख मामी यथा रीति किवाड़ की आड़ में खड़ी हो गई थीं। उन्होंने कुछ न कहा।

"भाई कहाँ हैं?" वीरम्मा ने पूछा।

मामी चुप रहीं। सुब्बाराव की पत्नी ने संकेत से बताया कि वे कहीं चले गये हैं।

आँसू पोंछते हुए वीरम्मा ने कहा, "आओ हमारे घर चलो।"

मामी तब भी चुप रहीं। जब कभी मामी दिक्कत में रहतीं, वीरम्मा उनको हमेशा अपने घर निमन्त्रित करतीं और मामी सविनय उनका निमन्त्रण अस्वीकार कर देतीं।

हताश वीरम्मा रोती-रोती थोड़ी देर वहाँ बैठ कर चली गईं। वे नरसिंह मामा के घर भी अधिक देर न रह सकीं। गाड़ी में काट्रूर चली गईं।

नरसिंह मामा का दस्तखत किया हुआ नोटिस रघू मामा तक पहुँचा ही नहीं। वह दफ्तर में ही पड़ा रहा। अब शायद नोटिस की जरूरत ही न थी।

शाम को नरसिंह मामा पुल के पास बैठे हुए थे। वह कभी कमलवेणी की झोंपड़ी की ओर देखते और कभी अपनी पाठशाला की ओर। कमलवेणी की झोंपड़ी मामा की आज्ञा पर दो-तीन चमार तोड़ रहे थे।

था और उसके बाद इमली का पेड़।

कमलवेणी और उसकी माँ ने खास घर में आकर धरना जमा दिया। मामी किवाड़ की आड़ में पड़ी कराहती रहीं। उन्होंने कुछ न कहा, न मना ही किया, न आवभगत ही की।

सवेरे हर जगह वही बात चल रही थी। वीरवल्ली तक भी खबर पहुँची। मुन्सिफ ही शायद एक ऐसा व्यक्ति था जो यह सुन खुश नजर आता था। मामा के परिवार के किले में दरारें पड़तीं देख वह सन्तुष्ट हो रहा था। नरसिंह मामा यदि विशाल वृक्ष थे, तो वह उनकी छाया में एक कँटीली झाड़ी की तरह था। वह उनके प्रभाव को देख सदा जलता रहता था।

मुखासादार गाँव में न थे। वे बन्दर में थे। मुकदमे के बारे में घूम-फिर रहे थे। रामय्या की पत्नी और उसकी लड़की भी उनके साथ थी। रामय्या का कहना था कि वह आँखों का इलाज कराने गई थी। पर वेन्कय्या आदि का कहना था कि मुखासादार की उस पर भी नजर थी।

हम दौड़े-दौड़े मामा के घर पहुँचे। कई स्त्रियाँ अन्नपूर्णा मामी को दिलासा दे रही थीं। मामी मूर्तिवत् चुप थीं। उनके माथे पर दो-तीन जगह से खून निकल-निकलकर सूख चुका था। बाँहें सूजी हुई थीं। पीठ पर भी चोट लगी थी। मामी को शायद स्त्रियों की पूछ-ताछ पसन्द न थी।

कमलवेणी और उसकी माँ चौपाल में बैठी थीं। स्त्रियाँ आतीं, उनको गौर से देखतीं, अँगुली उठा-उठाकर उनको दुत्कारती चली जातीं। और वे दोनों बेशर्म लगातार पान चबाती जाती थीं।

कोई कहती, "बदजात औरतें हैं। इस जाति में शर्म हो तब न?"

कोई और कहती, "मर्द को तो बिगाड़ा ही, अब उसके घर में सेंध लगाने आई हैं।"

रग्घू मामा वहाँ न थे। उनकी खटिया खाली पड़ी थी। मोटा डंडा और चिकनी रस्सी अब भी देहली पर पड़ी थी। आस-पास के घर वालों

से पता लगा कि वे पौ फटने से पहिले ही कहीं चले गये थे। जितने मुँह उतनी बातें। कोई कहता कि काटूर गये हैं। कोई कहता कि श्रीकाकुलं गये हैं, नहीं तो ताडेपल्लि गूडिम। ठीक तरह कुछ नहीं मालूम हुआ।

थोड़ी देर बाद नरसिंह मामा अपनी बहिन को लेकर आये। तब तक गाँव की स्त्रियाँ जा चुकी थीं। सवेरे का समय था। सबको अपना-अपना काम था। केवल सुब्बाराव की पत्नी ही मामी के पास रह गई।

मामी को देखते ही वीरम्मा बिलखने लगीं। नरसिंह मामा उनको देख कर, मुँह मसोस कर बाहर चले गये। वे उन्हें देख न पाते थे। वे अपनी कमजोरी भी नहीं दिखा सकते थे। शायद उनको यह भी डर था कि मामी कुछ बुरा-भला कहें। उनको आता देख मामी यथा रीति किवाड़ की आड़ में खड़ी हो गई थीं। उन्होंने कुछ न कहा।

"भाई कहाँ हैं?" वीरम्मा ने पूछा।

मामी चुप रहीं। सुब्बाराव की पत्नी ने संकेत से बताया कि वे कहीं चले गये हैं।

आँसू पोंछते हुए वीरम्मा ने कहा, "आओ हमारे घर चलो।"

मामी तब भी चुप रहीं। जब कभी मामी दिक्कत में रहतीं, वीरम्मा उनको हमेशा अपने घर निमन्त्रित करतीं और मामी सविनय उनका निमन्त्रण अस्वीकार कर देतीं।

हताश वीरम्मा रोती-रोती थोड़ी देर वहाँ बैठ कर चली गई। वे नरसिंह मामा के घर भी अधिक देर न रह सकीं। गाड़ी में काटूर चली गई।

नरसिंह मामा का दस्तखत किया हुआ नोटिस रग्घू मामा तक पहुँचा ही नहीं। वह दफ्तर में ही पड़ा रहा। अब शायद नोटिस की जरूरत ही न थी।

शाम को नरसिंह मामा पुल के पास बैठे हुए थे। वह कभी कमलवेणी की झोंपड़ी की ओर देखते और कभी अपनी पाठशाला की ओर। कमलवेणी की झोंपड़ी मामा की आज्ञा पर दो-तीन चमार तोड़ रहे थे।

छप्पर फेंक दिया गया था। बाँस एक जगह रख दिये गये थे। गं
दीवारें आसमान से शिकायत करती-सी लगतीं।

अँधेरा हो चला था। बुय्युर से दो सिपाही आये। वे नरसिंह माम
से मिले। काफी देर तक बातचीत होती रही। वे उनको रग्घू मामा के
घर ले गये। वहाँ उन्होंने दो चार चीज़ें उलट-पलटकर देखीं। फिर
वापिस चले गये। उनके जाने के बाद नरसिंह मामा भी काट्टूर गये।
गाँव में नाना प्रकार की अफवाहें उड़ने लगीं।

नरसिंह मामा काट्टूर में थे और हमारे गाँव में रग्घू मामा के बारे में
बे-सिर-पैर की उड़ रही थी। अनुमान लगाया गया कि मुखासादार ने
उनकी शिकायत की होगी। और इसलिये पुलिस उनकी खोज में थी।

किसी और का कहना था कि ताडेपल्लि गूडिम में कुछ गड़बड़ी
हो गई थी और पुलिस रग्घू मामा के गुट का पता लगा रही थी।

"राघवैय्या शौकिया रौड़ी थोड़े ही है। कितने ही गुनाह कर रखे
हैं। किसी-न-किसी दिन हाथों में हथकड़ी लगेगी ही। भाई जेल देख
ही आये हैं, अब इसका नम्बर है।" मुन्सिफ किसी से कह रहा था
कि सुब्बम्मा ने सुन लिया। और उसने सुनी-सुनायी लोगों में बढ़ा-चढ़ा-
चढ़ा कर सुनादी। मुन्सिफ़ किसी बहाने बुय्युर खिसक गया। वह गाँव
में रहने की हिम्मत न कर सका।

अगले दिन नरसिंह मामा आये। मालूम हुआ कि पुलिस नहर के
किनारे पर बना रग्घू मामा का झोंपड़ा उखाड़ फेंकने के लिये आई थी।
र कई ऐसे भी थे, जो नरसिंह मामा की बात पर विश्वास नहीं कर रहे
। उन्हें सारे मामले में कुछ और ही बू आ रही थी। गप्पें चलीं,
ती रहीं और चलती-चलती ठंडी पड़ गईं।

प्रसाद वगैरह मामी को जैसे-तैसे कर अपने घर ले आये। मामी
मग ठीक हो गई थीं। चेहरे पर दाग जरूर रह गये थे। पड़ोसियों से

यह भी पता लगा कि वे उस हालत में भी कमलवेणी और उसकी माँ को बिठाकर सब काम स्वयं कर रही थीं।

नरसिंह मामा की स्त्री में सहानुभूति का सद्‌गुण न था। स्वयं कष्ट सहते हुए भी उन्होंने दूसरों के प्रति उनके कष्टों में हमदर्दी दिखाना न सीखा था। जबान ऐसी थी कि सिवाय मिर्चों के कुछ उगलती न थी। सुना गया कि उन्होंने मामी की उपस्थिति में कहा, "अगर स्त्री ठीक हो तो भला मर्द कभी किसी के पास जायेगा! मजाल है कि इन्होंने कभी किसी औरत पर नजर उठाई हो। हैं तो दोनों भाई ही।" मामी ने सुना, मुस्कराकर उनकी कड़वी बात को भुलाना चाहा। बड़े-बड़े घाव भर जाते हैं, पर कड़वी बात भुलाये भी नहीं भूलती। थोड़ी देर बाद प्रसाद के बहुत रोकने पर भी अन्नपूर्णा मामी अपने घर चली गई।

प्रसाद हमेशा घर में ही रहता। उसकी परीक्षाओं का अभी परिणाम नहीं निकला था। परन्तु मामा ने निश्चय कर लिया था कि कुछ भी हो प्रसाद को कॉलेज की पढ़ाई के लिये मद्रास अवश्य भेजेंगे, भले ही अधिक खर्च हो। उनकी मद्रास भेजने की पहिले इच्छा न थी पर जेल से छूटने के बाद उन्होंने अपना इरादा बदल लिया था।

कर्ण से उन्होंने एक बार कहा भी था, "कांग्रेस में भी उनकी ही पूछ होती है, जो अच्छे पढ़े-लिखे हैं, बैरिस्टर हैं, प्रोफेसर हैं, जैसे देश की सेवा करने के लिये बैरिस्टरी पास करना जरूरी हो। दुनिया में शायद उन्हीं का मान है, जो गलती करके सावधान होते हैं। जो हमेशा सावधान रहते हैं, उनको कोई नहीं पूछता। जब तक हम अंग्रेज़ी में गिचपिच न करेंगे, कोई न सुनेगा। प्रसाद अंग्रेज़ी सीखेगा।"

प्रसाद की माँ को वायुसुता की चिन्ता सता रही थी। उन्होंने अपने मायके यलमरू खबर भिजवाई। दौड़-धूप हो रही थी। यलमरू कड़वा-कोलनु से चार-एक कोस दूर है। नहर के किनारे ही बसा है।

मामा शायद पाठशाला के बारे में ही अधिक सोच रहे थे।

मुकदमे की तिथि समीप थी। मामा नूजवीड जाकर बन्दर जाने

को नोच रहे थे। वन्दर में डिस्ट्रिक्ट एज्युकेशन आफिसर का दफ्तर भ
था। उनसे अनुमति लेनी थी, पर जाने के लिये घर में पैसे न थे
उन्होंने हरिजनवाड़े के पादरी के पास खबर भिजवाई। वे भी कहीं वाहर
गये हुए थे।

हरिजनवाड़ा का पादरी काफी पैसे वाला था। पाँच-छः एकड़
जमीन भी उसके पास थी। फीजी में मजदूरी करके उसने रुपया कमाया
था। उसके लड़के जमशेदपुर के लोहे के कारखाने में नौकरी करते थे।
वे भी उसे हर महीने रुपया भेजते। नरसिंह मामा को वह प्रायः विना
व्याज के उधार देता।

मामा तालाव के किनारे धीमे-धीमे चलते जाते थे। तालाव के परे
हरिजनवाड़ा था। हरिजनवाड़ा से आते-जाते लोगों को ध्यान से देखते।
पर पादरी न दिखाई दिया। मामा चहलकदमी करते जाते थे।

पर रात-रात में गाँव में एकाएक इतनी गड़बड़ी मच गई कि नर-
सिंह मामा का वाहर जाना मुश्किल हो गया। पैसे की भी दिक्कत थी।

पिछले दिन सुब्बम्मा गाँव में न थी। वह गाँव-गाँव फिरा करती थी,
दूर-दूर तक बदनाम थी। कोममूरू जाकर शाम को वह घर वापिस आ
रही थी। कोममूरू बुच्युर के पास एक गाँव है। वहीं सुब्बम्मा की किसी
किसान से दोस्ती हो गई थी।

अंधेरा हो गया था। सुब्बम्मा बगल में टोकरा रख चली आ रही
थी। रास्ते में थोड़ा बहुत ईन्धन इकट्ठा कर उसने टोकरे में डाल लिया
था। टोकरे में दो-चार जाकेटों के लिये कपड़े भी थे।

सुब्बम्मा साथ टोकरा उसी तरह ले जाती, जिस तरह शहरी युवतियाँ
हैंड-बैग ले जाती हैं। टोकरे से वह बहुत काम निकाल लेती। धूप-पानी
से अपने को बचाती। इधर-उधर की चीजें उसमें रख लेती। अगर किसी
की नजर बचानी होती तो उसको आड़ में रख लेती।

सुव्वम्मा आयु में काफी बड़ी हो चली थी, पर तब भी खूब स्वस्थ और आकर्षक थी। चेहरे पर एक शिकन न पड़ी थी। भले ही खाने के लिए तेल न हो पर वह बाक़ायदा बालों को तेल लगाती थी। विधवा थी, पर खूबसूरती के लिये वह माथे पर बड़ा टीका लगाती थी। गोरा रंग था। जब वह मुस्कराती थी तो कितने ही मनचलों के सिर झूम जाते थे। मटकती-मटकती हथिनी की तरह चलती।

वह वीरवल्ली के पास, कुएं के किनारे सुस्ताने के लिये बैठ गई। चाँदनी रात थी। हवा भी ठँडी हो गई थी।

थोड़ी देर बाद, मुन्सिफ शराब के नशे में उस तरफ आया। सुव्वम्मा पर उसकी नजर कई दिनों से थी। सुव्वम्मा बदचलन तो थी ही, उसके कितने ही दोस्त थे, पैसे के लिए भी पाप करती थी। पर जाने उसको मुन्सिफ से क्या चिढ़ थी कि उसके कई बार, कई तरह से कोशिश करने पर भी वह अभी तक उसके फन्दे में न फँसी थी।

उसको अकेला देख मुन्सिफ का अपने मन पर काबू न रहा। उस ने उसको वे फूल देने चाहे जो वह अपनी पत्नी के लिए ले जा रहा था, पर सुव्वम्मा उठकर चल दी। मुन्सिफ ने हाथ पकड़ कर उसको बिठाया रुपया दिखाया, पर सुव्वम्मा ने मुँह दूसरी तरफ करके उसको दुत्कार दिया। कमर पकड़कर उसको पास खींचा। वह छुड़ाकर कुएं के परली तरफ खड़ी हो गई। वह रास्ता रोककर खड़ा हो गया और ज्यों ही सुव्वम्मा ने लपक कर अपनी टोकरी उठानी चाही तो उसने उसे पकड़ लिया। सुव्वम्मा चिल्लाई। मुन्सिफ ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया, उसकी जाकेट पर हाथ फेरा। सुव्वम्मा ने उसके हाथ पर काटा। हाथ से खून निकलने लगा। सुव्वम्मा चिल्ला-चिल्लाकर उसका मुँह नोंचने लगी। पर अब भी वह उसको न छोड़ता था। वह उसको काटती और चिल्लाती जाती थी।

सौभाग्यवश उस तरफ से उसी समय लक्ष्मय्या गुजरे। वे गांडि-गुन्टा से चले आ रहे थे। मुन्सिफ ने उनको देखते ही अपनी पकड़ ढीली

करदी। सुब्बम्मा चीखती-चीखती उनकी तरफ भागी। मुन्सिफ बाल्टी लेकर अपना मुँह धोने लगा। लक्ष्मय्या सारी बात जान गये।

इतने में मल्लिखार्जुन राव भी बुय्युर की ओर से आये। वे रोज किसी न किसी काम पर बुय्युर हो आते थे। सवेरे जाते और अन्धेरा होने पर आते। वे जेल से छूटने के बाद खेती करने की सोच रहे थे। उनके एक धनी मित्र ने उनको पाँच एकड़ खेती करने के लिये दे दिये थे, जमीन सड़क के किनारे थी, हमारे गाँव के पास ही थी। गन्ना बोना चाहते थे। शुगर मिल से कर्ज और खाद वगैरह लेने की कोशिश कर रहे थे। इसी सिलसिले में उनका बुय्युर रोज आना-जाना होता था।

सुब्बम्मा उनको देखते ही उनकी तरफ भी रोती हुई भागी। सारी घटना उनको सुनाई। मुन्सिफ अब भी बड़बड़ा रहा था।

सुब्बम्मा के बहुत कहने पर लक्ष्मय्या उसको लेकर नरसिंह मामा के पास सवेरे-सवेरे पहुँचे। मुन्सिफ की शिकायत की गई। गवाहों की कमी न थी। गाँव के और लोग भी इकट्ठे हो गये। सुब्बम्मा रो-रोकर अपनी कहानी सुनाती जाती थी। लक्ष्मय्या और वेन्कय्या तो इतने तिलमिला रहे थे कि उन्होंने मुन्सिफ को तुरन्त सबक सिखाना चाहा। नरसिंह मामा के समझाने पर वे रुके।

आखिर यह तय हुआ कि कलेक्टर साहब से मुन्सिफ की लिखित शिकायत की जाय। उसको एक बार पहिले ही चेतावनी दी जा चुकी थी। मामा जानते थे कि इससे गाँव में तनातनी और बढ़ेगी, पर गाँव के मुखिया के नाते उनको अपनी जिम्मेदारी भी निभानी थी।

मामा का अब बन्दर जाना और भी आवश्यक हो गया। बन्दर में ही कलेक्टर का दफ्तर था।

जब वे मल्लिखार्जुन राव, लक्ष्मय्या, वेन्कय्या आदि के साथ वीरपल्ली के नुक्कड़ पर पहुँचे तो सुब्बम्मा भी आँखों में तरी लिये, बगल में कपड़ा रख उनके पीछे होली। मल्लिखार्जुन राव जी ने कहा भी कि उसके आने की कोई जरूरत न थी, फिर भी वह जिद करके उनके साथ

साथ अन्दर गई।

दो दिन बाद रग्घू मामा एक बड़ी कीमती खूबसूरत कार में आये। प्रकाशराव उनके साथ थे। कार उन्हीं की थी। वे बहुत दिनों से हमारे गाँव न आये थे। मामा को प्रकाशराव के साथ आता देख लोगों को अचरज हुआ क्योंकि गाँव में यह अफवाह फैली हुई थी कि उन दोनों में कुछ अनबन हो गई थी।

प्रकाश राव कमलवेणी को देखकर सिर हिलाकर मुस्कराये। मामा इमली के पेड़ के नीचे खटिया पर बैठ गये। प्रकाश राव अंदर कमलवेणी से बात करने लगे।

सुब्बाराव ने मामा के कान में कुछ कहा। वे एकाएक गरम हो उठे, फिर धीमे-धीमे चारपाई के पाये को सहलाने लगे जैसे कुछ प्रण कर लिया हो।

प्रकाश राव को घर में छोड़ कर वे अकेले अपना डंडा लेकर चल दिये। सुब्बाराव भी उनके साथ था। हमें उनके साथ जाना अखरा। हम वहीं कार के आस-पास घूमते रहे। फिर घर के पिछवाड़े में पहुँचे। वहाँ काम करती-करती मामी आँसू बहाती जा रही थीं। पास के झोंपड़े में से कमलवेणी का अट्टहास सुनाई पड़ता था।

कुछ समझ में न आया। हम रजभाह के किनारे-किनारे अपने गाँव की तरफ चल दिए। तीसरी पहर थी। लूएँ बन्द हो चुकी थीं। एकाएक बदली छा गई थी। मामा पीपल के पेड़ के नीचे बैठे सुशीला से बात चीत कर रहे थे। जाने वह कब आ गई थी। उससे दिन-दहाड़े मामा बातचीत करेंगे, यह किसी ने कल्पना भी न की थी। वे शायद दिखाना चाहते थे कि उनको बड़े भाई का डर न था।

शाम को नरसिंह मामा पन्दर से वापिस आए। मल्लिखार्जुनराव भी उनके साथ थे। तालाब के किनारे बूढ़ों की चौकड़ी लगी हुई थी।

कर्ण भी उनमें थे। सब सूरय्या मुन्सिफ के बारे में सुनने को उत्सुक थे और मामा स्कूल के बारे में कहते जाते थे।

मामा निराश मालूम होते थे। वे कह रहे थे कि सरकार को युद्ध के दिनों में पाठशालाओं की फिक्र न थी। बन्दर में अफसर ने बताया था कि टेक्निकल स्कूल की गुँजाइश थी, पर मामा को उस तरह के स्कूल में कोई दिलचस्पी न थी। "अब मुझे ही कुछ करना होगा। सरकार मदद दे या न दे, भगवान् तो देंगे। अच्छा काम है, करना ही होगा।" मामा ने गला साफ करके गम्भीर आवाज में इधर-उधर देखते हुए कहा।

"मगर-मगर···" कर्ण ने नाक में सुँघनी डालते हुए कहा। "अब आप पहिले यह तो बताइये कि मुन्सिफ का क्या हुआ?"

"शिकायत करदी है। तहकीकात होगी। सरकारी मामला है। एक-दो दिन में थोड़ा ही निबटता है?"

कर्ण का चेहरा लम्बा होगया। उनकी और मुन्सिफ की न बनती थी। वे उसके अधीन थे, पर वे उसको कतई नालायक समझते थे। रोजी का मामला था वरना नौकरी को कभी लात मार देते।

"मुकदमे का क्या हुआ?" वेन्कय्या ने सब को चुप पा पूछा।

"मुकदमा शुरू तो हुआ पर मजिस्ट्रेट की तबीयत खराब होने के कारण स्थगित कर दिया गया। चल रहा है।" नरसिंह मामा ने कहा।

नरसिंह मामा घर जाने के लिए सड़क पर गए थे कि उनकी नजर रघू मामा और प्रकाश राव पर पड़ी। मामा एक क्षण तो सहमे, फिर सिर खुजलाते घर में चले गए। लोगों की भीड़ भी तितर-बितर हो गई।

अगले दिन नरसिंह मामा ने नित्य-कृत्य से निवृत्त होकर रघूमामा के पास प्रसाद द्वारा खबर भिजवाई। मामा खुशी-खुशी कमलवेणी से बातें कर रहे थे। प्रसाद को देखकर न वे मुस्कराये न कुछ बोले ही। वह अन्नपूर्णा मामी से कहकर चला गया।

नरसिंह मामा उनकी प्रतीक्षा करते-करते तालाब के किनारे, पीठ पीछे हाथ बाँधे धीमे-धीमे चहलकदमी कर रहे थे। वीरवल्ली का नाई उन्हें इधर-उधर की खबरें सुना रहा था।

"क्यों हुजूर, हमें इस साल दाल-भात कब दिलवायेंगे? माई जी कह रही थीं......" नाई हिचक-हिचक कर कुछ कहने की कोशिश कर रहा था।

"देखो, तुम जाकर कर्ण और राघवय्या को भेज देना।" नरसिंह मामा ने गम्भीरता से कहा।

काफी देर हो गई। कर्ण तो आगये, पर रघू मामा न आये। पाठशाला की छत के लिये फूस का इन्तजाम करने के लिए कर्ण को कहा गया। वे तुरन्त चले गये।

नाई रघू मामा से कहकर वीरवल्ली जा रहा था। दिन काफी चढ़ चुका था और नरसिंह मामा धूप में ही चहल कदमी करते जाते थे। फिर थोड़ी देर बाद वे चलते-चलते एकाएक रुके और अपने भाई के घर चले गये।

रघू मामा चारपाई पर बैठे बीड़ी पी रहे थे। उनके पास उनका लंगोटिया यार सुब्बाराव बैठा था। नरसिंह मामा को देखकर रघू मामा चारपाई पर से न उठे, सुब्बाराव ही खड़ा हुआ। जब मामा ने कुछ पूछा तो रघू मामा डंडा पटक कर, ऐंठ कर बैठ गये। तब भी वे सिर ऊँचा करके अपने भाई को न देख सके। नरसिंह मामा मामी से कुछ कहने अन्दर गये। पर उनको वहाँ सिसकती पा, वे कुछ न कह सके।

नरसिंह मामा घर वापिस गये तो पत्नी की तरफ के रिश्तेदार आये हुए थे। वे उनसे ठीक तरह बातचीत न कर पाये। वे वायुसुता की शादी के बारे में सलाह-मशवरा करने आये थे। रिश्तेदार, नरसिंह मामा को चुप पा, नाराज हो गये थे। मामा की पत्नी भी उन पर बुरी तरह बिगड़ीं। पर मामा किसी और बात में उलझे हुए थे।

"मैं ही दो-चार दिन में यलमरू आऊँगा, तब सारी बात तय कर लेंगे।" नरसिंह मामा ने आये हुए रिश्तेदारों से कहा। तौलिया लेकर वे पाठशाला की ओर तपती धूप में चले गये और वहीं साँझ तक अकेले बैठे रहे। दुनिया के थपेड़े खा-खाकर लोग आराम के लिये घर जाते हैं, पर घर जाकर भी उनको थपेड़ें खानी पड़ती थीं।

उसी दिन एक और घटना घटी। रामस्वामी जो वर्षों से मामा के साथ था, सहसा उनका शत्रु हो गया। रेवेन्यू इन्स्पेक्टर दो-चार आदमियों के साथ मुन्सिफ के बारे में तहकीकात करने आया। कई लोगों ने गवाही दी। सुब्बम्मा ने खुद आकर अपना दुखड़ा रोया। मुन्सिफ भी हाजिर किया गया। वह शर्म के कारण हाथ मलता खड़ा रहा।

अगर रेवेन्यू इन्सपेक्टर इतने से ही अपना काम खतम कर देता तो शायद गाँव में उस दिन कई घरों में दीवाली मनाई जाती। पर उसने 'वार-बॉन्ड्स' खरीदने के लिए कहा, जैसे मुन्सिफ के मामले में तहकीकात करके सरकार कोई एहसान कर रही हो और एहसान के लिए गाँव वालों के लिए कीमत देना आवश्यक हो।

इन्स्पेक्टर ने नरसिंह मामा से कुछ नाम पूछे। मामा ने कहा, "जो ज्यादा कर सरकार को दे रहे हों, वे ही बॉन्ड्स खरीद सकते हैं। बाकी का तो मुश्किल से ही गुजारा होता है।"

यद्यपि नरसिंह मामा ने स्पष्ट कुछ न कहा था तो भी रामस्वामी ने समझा कि उनका इशारा उनसे था। वे खीझ गये। लाचार हो उनको बांड्स भी खरीदने पड़े। बाद में उन्होंने मामा को खूब गालियाँ दीं।

दो पत्नियों वाला पति सदैव शिकंजे में रहता है। परन्तु अगर एक तरफ पत्नी हो और दूसरी तरफ रखैल, तो पत्नी ही प्रायः पिसती है। न जाने किस मुहूर्त में अन्नपूर्णा मामी का विवाह हुआ था कि

उनके पति उनकी लाख कोशिश करने पर भी खिमे-से रहते।

रघू मामा की हरकतें अच्छी-से-अच्छी स्त्री भी सहन न कर सकती थी। मामी उनको मनमानी करता देख कभी कुछ न कहतीं। घर की आवश्यकताएँ जैसे-तैसे पूरा कर लेतीं। मामा वक्त-बेवक्त खाने को आ जाते और चले जाते। मामी पर क्या गुजर रही थी, उन्होंने यह जानने की कभी गल्ती न की।

घर में कमलवेणी को आये कई दिन हो गये थे। उन्होंने भूल कर भी मामी के काम में कभी हाथ न बँटाया। और तो और उनकी हमेशा नुक्ताचीनी करती रहतीं। कमलवेणी को मामा की गैरहाजरी में सुब्बाराव से मनबहलाव करता देखकर भी मामी आँख मूँदकर चली जाती थीं।

पहिले सुब्बाराव का भाई घर में पास के कुएँ से पानी दे जाता था; पर जब से कमलवेणी घर में आई थी, मामी ने उसका आना भी बन्द कर दिया। उसकी उभरती जवानी थी······लो को सामने देख कर पतंगा जल ही उठता है।

स्त्रियों ने आना भी कम कर दिया था। गाँव की दो-चार अधेड़ स्त्रियाँ आतीं। उनका काम ही एक घर की बात दूसरे घर पहुँचाना था। मामी गाँव की गप्पों का ईंधन न होना चाहती थीं। वे प्रायः उनसे न बोलतीं। बोलने की फुर्सत भी न थी।

मामी स्वयं कुएँ से पानी लातीं, झाड़ू देतीं, रसोई करतीं, कूटतीं, पीसतीं। दिन भर कुछ-न-कुछ करती रहतीं। काम में शायद वे अपने को भूल जाना चाहती थीं। पर उनकी दशा उस आग की तरह लगती थी जो भुस के ढेर में अपने से भागने की कोशिश कर रही हो।

मामी कभी कमलवेणी से बात न करतीं। गुस्सा भी न दिखातीं। फिर भी जाने क्यों कमलवेणी उनपर हमेशा जलती-भुनती रहती। एक दिन मामा कहीं से आये ही थे कि कमलवेणी ने उनके कान भर दिये। मामा खौलने लगे। बात मामूली थी।

कमलवेणी ने मामी के पास मुर्गी के शोरबे के बारे में खबर भिजवाई।

मामी ने तैयार न किया। उन्होंने कुछ न कहा होगा, पर कमलवेणी ने अपनी तरफ से उनका उत्तर घड़ दिया। उसने मामा से शिकायत की कि मामी कह रही थीं कि घर में खाने-पीने के लिये दो दाने नहीं हैं। अपने को बेचती फिरती हैं और चाहिए मुर्गा का शोरबा। उनको शर्म नहीं है तो क्या मेरी भी शर्म मारी गई है। "मैं आपके लिये ही शोरबा बनवाना चाहती थी।"

"बड़ी तेज चल रही है जबान। जो कुछ मन में आता है, कह देती है। हम ही गई गुजरी हैं, कहिये कि जबान······" कमलवेणी की माँ कह रही थी कि मामा ने कहा, "चुप रहो।"

"आपकी गैरहाजरी में हम पर क्या गुजरती है, हम ही जानती हैं। हर किसी से हमें गाली दिलवाती रहती है, आपको भी नहीं छोड़ती।" कमलवेणी की माँ ने सुपारी चबाते हुए पोपले मुँह से कहा।

मामा तिलमिला कर रह गये। उन्होंने तब मामी से कुछ न कहा, उठकर सीधे शराब की दुकान पर चले गये। काफी पी-पाकर, बोतल लेकर अमलताल के पेड़ के नीचे जा बैठे। यूँ तो उनसे बातें करने वाले ही कम थे और तब और भी कम हो गये थे। मामा मौजी जीव थे शराब पीकर अकेले में ही बड़बड़ाते रहते।

उनके भाई ने फिर खबर भिजवाई, पर वे न गये। अपने छोटे भाई के घर की ओर भी न गये।

जब वे घर पहुँचे तो कमलवेणी ने दो-चार शिकायतें तैयार कर रखी थीं। "ये चाहे जो कहें, मैं बर्दाश्त कर सकती हूँ, पर मैं यह न सह सकूँगी कि आपको भी वे बुरा-भला कहें। कह रही थीं अंजम्मा से ······ कैसे आदमी हैं, उधर भाइयों से किनारा कर लिया और अब इस पाजिन के फंदे में पड़े हुए हैं। कुछ शर्म होनी चाहिए। मैं हूँ वरना—क्या कहूँ ?"

"वरना······मुझे धमकी देती है ?" बात छोटी थी, झूठी थी, पर खुले तेजाब के लिये चिंगारी ही काफी होती है। वे जल उठे। रस्सी ली, लड़खड़ाते हुए मामी के पास पहुँचे और पीठ पर दो-तीन जमा दीं

"मुझे धमकी देती है ? भाई के पास जाता नहीं हूँ तो मेरी मर्जी। तू कौन होती है ?" मामी कुछ न बोलीं। मामा दो-तीन बार और मारकर बाहर जा खटिया पर बैठ गये।

काटूर के तालाब के परे, सड़क के पास ऊँची-ऊँची आग की लपटें आकाश को चूमने लगीं। धुआँ भँवर खाता-खाता उड़ रहा था। हवा चल रही थी। शाम का समय था।

कड़वाकोल्लु से लोग जल्दी-जल्दी भागे। जो जिस खेत में जहाँ था, वह वहीं से दौड़ा। उन दिनों इस तरह एकाएक पुआल के ढेरों में आग लगा देना मामूली बात थी। कभी-कभी आग फैल भी जाती थी। दसियों झोंपड़े राख हो जाते थे।

पिछले साल पटलापाडु में एक बदचलन औरत को लेकर दो भाइयों में फूट पड़ गई। दोनों ने एक-दूसरे के अनाज के ढेर को खुले खेत में आग दिखा दी। साल भर की खून-पसीने की कमाई आग के हवाले करदी। बारहों महीने कर्ज पर गुजारा करना पड़ा। नुक्सान भी हुआ और भाईचारा भी जाता रहा।

लोग भागते जाते थे। हम भी भीड़ में शामिल हो गये। हमारे साथ सुब्बु मामा थे और उनके साथ उनके नौकर-चाकर। वे बेतहाशा भाग रहे थे, जैसे उनका बदन ही भुन रहा हो। रग्घू मामा गाँव में न थे। वे काटूर से न लौटे थे।

नरसिंह मामा भी गाँव में न थे। वे यलमरू गये हुए थे। वायुसुता की शादी के बारे में बातचीत चल रही थी।

हम ज्यों-ही पुल के पास पहुँचे तो मालूम हुआ कि ब्रह्मेश्वर राव के पुआल के ढेर को किसीने आग लगादी है। वह खतम हो चुका था। आस-पास के हरे इमली के पेड़ के पत्ते भी झुलस गये थे। यहाँ तक कि ताड़ के पत्तों तक भी आग पहुँच रही थी।

पास के रजभाह में पानी अधिक न था। लोग दलदल और मिट्टी आग में फेंक रहे थे। गाँव फलाँग भर दूर था। वहाँ से एक पंक्ति लग गई थी, मटके पर मटके पानी के उड़ेले जा रहे थे। तब भी आग मुश्किल से काबू में आ रही थी।

पुल के बाद, सड़क के किनारे-किनारे पुआल के ढेर थे। सब बड़े-बड़े किसानों के थे। वेंकटेश्वर राव के ढेर गाँव की दूसरी तरफ कलवा-पावला की सड़क पर थे। सारा काटूर वहाँ मौजूद था। वेंकटेश्वर राव भी छड़ी लिये एक ताड़ के नीचे थोड़ी देर बैठे रहे। फिर एकाएक बिना किसी से कुछ कहे चले गये। वे पिछले दिन ही हमारे गाँव से कार में गुजरे थे।

ब्रह्मेश्वर राव, रग्घू मामा आदि आग से लड़ रहे थे। और सब भी इसी काम में लगे हुए थे। अगर हवा न होती, और रजभाह में पानी होता तो शायद अधिक नुक्सान न होता। फिर भी पुआल के पाँच-छः ढेरों को आग निगल चुकी थी। काटूर के झोंपड़ों तक भी आग पहुँचती अगर रास्ते में पीपल का हरा, विशाल पेड़ न होता। कुन्देर और काटूर की सड़क भी बीच में पड़ती थी। आग का बढ़ना रुक गया नहीं तो काटूर के कई घर वाले बेकार हो जाते, हाहाकार मचता।

तनातनी के वातावरण में पहिले यह आशंका की गई कि खेत-खेत में अनाज के ढेर जलेंगे। पर गनीमत हुई कि कोई न जला। सबको इस पर तसल्ली थी। पर अब मामला गाँव वालों को बदलता-सा लगता था। सभी के यहाँ अच्छी फसल हुई थी। धान अच्छे दाम पर बिका था। गाँव में सन्तोष था, पर अब आसार अच्छे मालूम न होते थे।

पुआल के जल जाने पर किसान का कुछ न बिगड़ता था, पर गाय-भैंस दाने-दाने के लिये मोहताज हो जाते। वह किसान भी क्या जो उनको भूखा रखकर अपना पेट भरे···वे भी तो किसान के कुटुम्ब के पूरे हिस्सेदार सदस्य होते हैं···उनके बिना वह पंगु है।

आग बुझाकर ब्रह्मेश्वर राव और उनके साथी पीपल के नीचे चुप

बैठे थे। आग जल-जलकर यद्यपि राख हो चुकी थी, तो भी लोग पानी के घड़े उड़ेल रहे थे। सिवाय दस-पन्द्रह परिवारों के सारा गाँव पीपल के नीचे जमा था। रग्घू मामा भी धोती ठीक करते हुए वहाँ आ पहुँचे। उनकी लाल आँखें और भी लाल हो गई थीं। नथने धौंकनी हो रहे थे। वे भी पेड़ के तने से पीठ लगाकर सुस्ताने लगे। रग्घू मामा को काटूर के लोग भी मानते थे। उनके दोस्त काटूर में ही अधिक थे।

"यह किसी की करतूत है।" किसी ने कहा।

"हाँ, हाँ, इसमें शंका ही क्या है? मामला एकदम साफ है, पेड़ों से अंगारे नहीं गिरते।" मामा कहते-कहते उठे और तौलिया झाड़ते हुए चले गए। उनके साथ उनके दो तीन साथी भी थे।

जब हम अपने गाँव पहुँचे तो काफी अन्धेरा होगया था। हम रास्ते में पीछे मुड़-मुड़ कर देखते। किन्तु पेड़ों के झुरमुट के सिवाय कुछ न दिखाई देता। एक आग काबू में आगई थी, पर ऐसा लगता था जैसे दूसरी कहीं सुलग रही हो।

हमारी आयु बढ़ती जाती थी। बढ़ती आयु का उल्लेख माँ-बाप अपनी डाँट-डपट में प्रायः किया करते। आयु के नाम पर हमें चुल्लू भर पानी में मरने के लिए दुहाई दी जाती। पर हम अपनी बढ़ती आयु के बारे में बेखबर थे।

सुक्खु मामा जीजा के घर गाड़ी में पुआल ढो रहे थे। एक गाड़ी भर पुआल काटूर छोड़ भी आये थे। सुक्खु मामा ने कभी इस प्रकार का काम न किया था। वे एक ही चक्कर में थक गये।

हमने उनसे यह काम ले लिया। तीनों भाइयों के यहाँ बैल कम थे और पुआल अधिक। बरसों से काफी बड़ा ढेर जमा हो गया था। प्रसाद भी हमारे साथ था। उसका नतीजा निकल चुका था। वह उत्तीर्ण हो गया था। खुश था। डंडा लिये कीकर के नीचे खड़ा था।

पुराने पुआल के ढेरों में साँप बसेरा कर लेते हैं। वह साँपों से बचने के लिये डंडा लिये हुए था।

हम गाड़ी लाद कर चले। प्रसाद गाड़ी हाँक रहा था। वह गाड़ी प्रायः न हाँकता था। ब्रह्मेश्वर राव के पुआल के ढेर के जलाये जाने पर वह भी जल रहा था। उसमें उत्साह आ गया था।

"इस कम्बख्त वेन्कटेश्वर राव को फिर पर लग रहे हैं। मामा अपने झमेले में हैं, इसलिये इसकी धाँधली चल रही है।" मैंने कहा।

"तो क्या यह वेन्कटेश्वर राव के आदमियों की ही करतूत है? वह फिर वहाँ क्यों आया?" प्रसाद ने पूछा।

"तो और किसकी है? कड़ी दुपहरी में बीड़ी पीने वाले राहगीर भी नहीं गुजरते। कुत्ते की दुम भले ही न सीधी होती हो, कटती जरूर है। मामा अगर दुम काट दें तो बीमारी भी जाये और दवा की भी जरूरत न हो। जाने मामा भी क्या सोच रहे हैं?" मैंने कहा।

हमारे काटूर पहुँचते-पहुँचते सूरज ठीक सिर पर आ गया था। आँगन में नौकर-चाकर गाड़ी का इन्तजार कर रहे थे। रग्घू मामा भी वहाँ खड़े थे। हमें देखते ही वे पास आये और घर भोजन के लिये बुला ले गये। नौकर पुआल उतारने लगे। पास, नाद के समीप चार जोड़ी बैल जुगाली कर रहे थे।

घर में नरसिंह मामा की आवाज सुनाई पड़ रही थी। बलमरू तक भी खबर पहुँच गई थी। वे सुनते ही सीधे काटूर चले आये थे। ब्रह्मेश्वर राव जी से बातचीत कर रहे थे।

"हमें समझ में नहीं आता कि यह व्यक्ति हर छोटी बात में क्यों अपनी नाक अड़ाता है? वहाँ मुखासादार की मदद कर रहा है, मुकदमे में पानी की तरह रुपया खर्च कर रहा है। न जाने......" वे कह ही रहे थे कि रग्घू मामा किवाड़ की आड़ में से हमें लेकर गुजरे, वे चुप हो गये। उनकी नजर उन पर पड़ी, पर रग्घू मामा नीचे देखते हुए आगे चले गये।

"रग्घू!" नरसिंह मामा ने पुकारा। पर रग्घू मामा अनसुनी करके हमें अन्दर ले गये।

भोजन करके हम पिछवाड़े में पहुँचे तो गाड़ी खाली खड़ी थी। हम गाड़ी पर चढ़ गये। गाड़ी चली ही थी कि रग्घू मामा भी बिना किसी को कहे गाड़ी में चढ़े और खुद हाँकने लगे। मोड़ पार करते ही गाड़ी हवा से बात करने लगी। काटूर का बड़ा गाँव धूल के बादलों में छुप-सा गया।

ब्रह्मेश्वर राव के यहाँ एक-दो बैल तो थे नहीं, कई जोड़ियाँ थीं। कम-से-कम साल भर के लिए पुआल इकट्ठा करना था। हम इसी में खुश थे कि हमें काम मिल गया था। गाड़ी की मुफ्त सवारी मिल रही थी।

अगले दिन जब मामा गाड़ी हाँकने बैठे तो उनके पास से शराब की बू आ रही थी। वे सवेरे प्रायः न पीते थे। शराब की दुकान भी बन्द रहती थी। जाने वे कहाँ से पी आये थे, पान चबा रहे थे। कुछ बोल नहीं रहे थे।

दोपहर होते-होते हम काटूर का दो बार चक्कर लगा आए। मामा काटूर में न रुके। उन्होंने वहाँ किसी से बात भी न की। सम्भवतः वे किसी को यह जताना न चाहते थे कि उन्होंने पी रखी है। हमने मामा के घर ही खाना खाया।

"आपकी भाभी आई थीं।" मामी ने भोजन परोसते हुए कहा।

"भाई?" उन्होंने आश्चर्य से पूछा और जल्दी-जल्दी कौर निगलने लगे।

"उन्होंने भी दो बार खबर भिजवाई थी। वे मुकदमे के लिये बन्दर गये हुए हैं। सुना है वायुसुता की शादी हो रही है।"

"शादी?" मामा के चेहरे की नसें ढीली पड़ीं। हमें थपथपाकर

कहने लगे, "खूब खाओ, इन्हें और परोसो। अरे तुम प्रसाद को क
नहीं लाये?" मामा ने पूछा।

प्रसाद पिछले दिन हमारे साथ था। पर मामा ने उससे बात त
न की और आज मामा को गाड़ी के पास खड़ा देख वह पास तक न
फटका था।

"लड़का वाल्टायर में आनर्स पढ़ रहा है। दूर की रिश्तेदारी भी है
पाँच हजार रुपया दहेज देना है और उसको आगे पढ़ाना लिखाना भी
होगा। अगले महीने शादी होगी।" मामी कह रही थीं। हमें उन्हें
बात करता देख आश्चर्य होता था। वायुसुता की शादी की बात न होती
तो वे शायद इतनी बात-चीत भी न करतीं।

"यलमरू वालों ने कल रात ही अपनी स्वीकृति दी, बहिन कह
रही थीं।" मामी ने कहा।

"हूँ, अच्छा है।" मामा का मुँह खिल-सा गया। वह तनाई,
जो हम बहुत दिनों से उनके मुँह पर देख रहे थे, सहसा गायब हो गई।
खाना खतम होते ही, छड़ी हिलाते-हिलाते, बीड़ी पीते-पीते, गुनगुनाते
गाड़ी की ओर गए। कमलवेणी के पास भी न गए। नौकर को उन्होंने
प्रसाद को बुला लाने के लिए भेजा। हम गाड़ी में सड़क के किनारे
प्रसाद की प्रतीक्षा करने लगे।

रामस्वामी, गाँव के धोबी, वेन्का के साथ उस तरफ से गुजरे। वे
पुल की ओर जा रहे थे। भुस की गाड़ी को देखकर उन्होंने दबी जबान
में कहा, "भगवान् सबको देखते हैं, रामस्वामी का बुरा कर कोई अच्छा
नहीं हुआ है। बाँड्स खरीदवा दिए वरना सो रुपये पर पचास का
ब्याज बनाता। जैसी करनी वैसी भरनी।" वे कुछ कहना चाहते थे कि
मामा को बैलों के पास खड़ा देख सहम गये। इधर-उधर देखते रास्ते के
किनारे धीमे-धीमे चले गये।

नौकर ने आकर बताया कि प्रसाद घर में न था। वह विवाह के
निमंत्रण-पत्र छपवाने विजयवाड़ा चला गया था।

"विजयवाड़ा ?" मामा ने पूछा।

"हाँ, हाँ।" नौकर ने कहा।

मामा अन्यमनस्क-से लगाम हाथ पर मारते हुए कुछ सोचने लगे। प्रायः इस तरह के काम मामा को भाई द्वारा सौंपे जाते थे। उनकी जगह अब प्रसाद को भेजा गया था।

काट्रूर जाते ही उन्होंने गाड़ी छोड़ दी और अन्दर जाकर बहिन से बातें करने लगे और जब हम कड़वाकोल्लु वापिस जाने के लिए तैयार हुए तो मामा बीड़ी पीते-पीते आँगन में चहलकदमी कर रहे थे। वे हमारे साथ न आए।

हम दो बार और काट्रूर गये, पर वे साथ न आये। वे सुजाता के साथ शाम को गप्पें लगा रहे थे, गाँव के सुनार को भी बुला लिया गया था।

शायद वायुसुता के लिए गहने बनवाए जा रहे थे। मामा रात को भी घर न आये।

अगले दिन काट्रूर उबल-सा रहा था। सभी जगह एक ही बात चल रही थी। खलबली मची हुई थी।

वेन्कटेश्वर राव का विशाल घर अब खण्डहर-मात्र था। नंगी, जली-भुनी, काली दीवारें रह गई थीं। सारा साज-सामान राख हो चुका था। उनके परिवार के एक-दो व्यक्ति बुरी तरह जल गये थे। पुलिस गाँव में गश्त लगा रही थी।

पुलिस ने किसी को न पकड़ा। वेन्कटेश्वर राव को कई पर शक था पर वे किसी का नाम बताने का साहस न कर पाते थे। कोई स्पष्ट सबूत भी न थे। शायद उनको यह भी डर था कि अभी जिन लोगों ने उनका घर ही जलाया था, शिकायत करने पर वे उनका काम भी तमाम कर सकते हैं।

शिकायत करते भी तो कैसे करते ? सारा गाँव जानता था कि जब

कभी वे गाँव में पधारते थे तो गुण्डावाजी और गड़बड़ी कहीं-न-कहीं शु
हो जाती थी। पुआलों के ढेरों के जलने के लिए वे ही जिम्मेदार सम
जाते थे।

उनके घर के तीन ओर बड़ा अहाता था। फिर एक ऊँची चार
दीवारी, एक तरफ गौ बैल बड़े खपरैल के मकान में बँधते थे। खास घर
से वह मकान दूर न था। घर बहुत पक्का था। जहाँ लकड़ी से काम चल
सकता था, वहाँ लोहा प्रयोग में लाया गया था।

आग सीधी वेन्कटेश्वर राव के घर में न लगाई गई थी। न कहीं
मिट्टी का तेल दिखाई देता था, न मशाल ही। गौ-बैलों के खपरैल का
मकान का नामोनिशाँ न रहा था। बैल रस्सी तोड़ कर भाग गए थे। दो-
चार थोड़ा बहुत जल जरूर गये थे। उस मकान से जाने कैसे, शायद
हवा के जोर से असली घर में भी आग लग गई थी।

देखने वालों को इतना अवश्य लगता था कि खपरैल के मकान के
पाँच-दस अध-जले बाँस खिसक कर ठीक घर के दरवाजे के सामने पड़े थे।
दरवाजा उनके कारण जल गया था और जलते दरवाजे ने और चीजों को
भी आग में लपेट लिया था। रात का समय था, सब बेखबर सो रहे थे।
जब हड़बड़ाते हुए उठे तो आग काफी बढ़ चुकी थी। हो हल्ला मचा।
दो चार आस-पास के ब्राह्मण परिवार तो भागे-भागे गये, बाकी अपना-
अपना घर गीला करने लगे। वेन्कटेश्वर राव के घर का अहाता इतना
बड़ा था कि आग चारदीवारी के अन्दर जल-जलाकर खतम हो गई।

काफी नुकसान हुआ था। दस-पन्द्रह हजार रुपयों के गहने कोयले
चुके थे। पर वेन्कटेश्वर राव को इतनी फिक्र उनके बारे में न थी,
तनी कि उन दस्तावेजों के बारे में थी, जो तिजोरी से बाहर रखे हुए
। हजारों रुपया उन्होंने कर्ज में दे रखा था।

कहने वालों का कहना था कि आग आसानी से काबू कर ली
ी अगर डर के कारण वेंकटेश्वर राव पागल की तरह अन्धाधुन्ध
-उधर न भागते। उनका कहना था कि उनको भयंकर परछाइयाँ

दे रही थीं।

किन्तु इतना साफ था कि आग खुद-ब-खुद न लगी थी। चार-
री के परे दो-तीन झोंपड़ियाँ भी जल गई थीं। कटाई के दिनों में
ाडी परिवारों ने आकर वहाँ बसेरा कर लिया था। वेंकटेश्वर राव
कहने सुनने पर भी वे न गये थे। झोंपड़ियाँ उन्हीं की थीं।

लोग वेन्कटेश्वर राव के यहाँ जमा हो गये थे। और मामा अपने
ीजा के घर में बीड़ी फूँक रहे थे। सबको शक था कि यह उनकी या
उनके साथियों की करतूत थी, पर कोई अंगुली उठाकर उनकी तरफ
इशारा भी न कर सकता था।

ब्रह्मेश्वर राव अकेले चौपाल में चहलकदमी कर रहे थे। खबर उन
तक भी पहुँच गई थी। वे इस रोजमर्रा की खींचातानी से ऊबे हुए थे,
पर क्या करते?

सालों बाद हम मामा के मुँह से आग के बारे में जान सके। मामा
को भी उम्मीद न थी कि सारा घर जल जायेगा। उनका ख्याल था कि
अधिक-से-अधिक खपरैल का मकान जलेगा और गौ-बैलों को बाँधने के
लिये कोई जगह न रहेगी। मामा ने ही स्वयं अपने हाथों से लम्बाडियों
के झोंपड़ों को आग लगाई थी।

पर मामा ने यह तब बताया जब वेन्कटेश्वर राव ने फिर एक आली-
शान, दुमंजला मकान उसी जगह बनवा लिया था। तब तक सारी
बात ठंडी हो चुकी थी और अदल-बदल भी हो चुका था।

दो-तीन दिन तक मामा काहूर से घर न आये। जब तक वेन्कटे
राव काहूर से फिर परिवार सहित न चले गये, मामा भी न हिले।

नरसिंह मामा गाँव में थे। वायुसुता की शादी की तैया
व्यस्त थे। उनके घर कई सम्बन्धी भी आये हुये थे।

गाँव में एक और विषय पर चर्चा होने लगी थी। हमारे

पुल यद्यपि बहुत मुख्य था पर नीचा था। बड़ी-बड़ी किश्तियाँ आसानी से नहीं गुजर सकती थीं, काफी सँभल कर जाना पड़ता था। पिछले दिनों किसी अंग्रेजी पादरी की नाव की छत पुल से टकरा कर टुकड़े-टुकड़े होगई। उसने सरकार से पुल के बारे में शिकायत की और देखते-देखते पुल की मरम्मत शुरू हो गई।

अनलतास के पेड़ के नीचे जहाँ कभी कमलवेणी रहा करती थी, अब एक ओवरसीयर का तम्बू गढ़ा था। दिन-रात काम हो रहा था। ओवरसीयर भी कम्मा जाति का था। गाँव में उसकी पूछ होने लगी थी। हर रोज किसी-न-किसी घर में उसको न्योता मिलता।

नरसिंह मामा ने कई बार रघू मामा के पास खबर भिजवाई, पर रघू मामा न गये। उनकी हरकतों से यह लगता था कि वे जाना चाहते थे पर एक-दो बार मना करके वे किस मुँह से बड़े भाई के पास जाते? वे कमलवेणी से भी खिझे रहते।

कमलवेणी की सुशीला से झपट हो गई थी। वह एक दिन मामा को देखने आई। मामा घर में न थे। कमलवेणी के मुख से कोई कड़वी बात निकल गई। सुशीला की जबान तो तलवार थी ही, जोर से चलने लगी। लोग इकट्ठे हो गये। बाद में मामा के कान में भी यह बात पड़ी। वे खौल उठे। कमलवेणी को डाँटा-डपटा।

मामा विचित्र हालत में थे। भाई से कभी अनबन न हुई थी। स्वभाव ऐसा था कि अनबन बनाये भी न रख सकते थे। फिर अनबन तब बनी रहती अगर उनके भाई भी मुँह सुजा लेते। अब वायुसुता की शादी थी, कैसे चुप रहते?

उन्होंने अकस्मात् चारपाई पकड़ ली। जाने बीमारी क्या थी? सच्ची थी, या झूटी। यह भी ठीक तरह मालूम न था। शायद बहाना था। मामा इस विषय में बच्चों की तरह थे, जो कभी कभी बीमार होकर आत्मीयों का ध्यान आकर्षित करते हैं।

उन्होंने एक दिन खूब शराब पी, ऊटपटाँग चीजें खाली, रात भर

पीते-पीते जागते रहे। कै की। ले-देकर उन्होंने सवेरे तक बुखार
ही कर लिया। मामी उनको विस्तरे पर लिटाकर उनकी शुश्रूषा
ने लगीं।

दुपहर के करीब हम मामा के घर गये। वे आहें भर रहे थे और
मी चुपचाप आँसू बहा रही थीं। देहली के पास बैठी कमलवेणी पान
या रही थी। हमारे जाते ही मामा आँखें मलते हुए उठ बैठे। "बेटा,
फ काम करोगे? मल्लिखार्जुन राव को बुला लाओगे? प्रसाद आगया
है क्या?" उन्होंने पूछा।

भागा-भागा मैं मल्लिखार्जुन राव के घर पहुँचा। वे नहा-धोकर घर
के बाहर बैठे हुए थे।

"मामा बुला रहे हैं, विस्तरे पर पड़े हैं। कोई जरूरी काम है।"
मैंने कहा।

मल्लिखार्जुन राव घर की ओर मुँह करके कहने लगे, "मैं जरा
राघवैय्या के घर जा रहा हूँ।"

"वहीं खा लेना, यहाँ आज हंडिया न चढ़ेगी। तुम्हें क्या हम भूखे
मरें या जियें?" उनकी पत्नी ने कहा। वह भी नरसिंह मामा की पत्नी
की तरह पहुँची हुई चुड़ैल थी। जली-कटी सुनाने में अव्वल, बेहया।

मल्लिखार्जुन राव की गरीबी किसी से न छुपी थी। सभी कुछ खो
बैठे थे। महीने में दो-तीन बार शिवरात्रि भी होती। खेती फिर शुरू की
थी, गन्ना बोया था। पर इस बीच उधार तथा लोगों की उदारता पर
जीवन चल रहा था।

मल्लिखार्जुन राव के कमरे में घुसते ही मामी चली गईं। कमलवेणी
भी इधर-उधर देखती हुई अपने झोंपड़े में खिसक गई। मल्लिखार्जु
राव मामा के विस्तर पर बैठ गये।

"भाई, माफ करना।" मामा मल्लिखार्जुन राव से कह रहे
कहते-कहते वे खासे और फिर कुछ कहा।

थोड़ी देर बाद मल्लिखार्जुन राव घर से निकले। वे नरसिंह मा

पुल यद्यपि बहुत मुख्य था पर नीचा था। बड़ी-बड़ी किश्तियाँ आसानी से नहीं गुजर सकती थीं, काफी सँभल कर जाना पड़ता था। पिछले दिनों किसी अंग्रेजी पादरी की नाव की छत पुल से टकरा कर टुकड़े-टुकड़े होगई। उसने सरकार से पुल के बारे में शिकायत की और देखते-देखते पुल की मरम्मत शुरू हो गई।

अमलतास के पेड़ के नीचे जहाँ कभी कमलवेणी रहा करती थी, अब एक ओवरसीयर का तम्बू गड़ा था। दिन-रात काम हो रहा था। ओवर-सीयर भी कम्मा जाति का था। गाँव में उसकी पूछ होने लगी थी। हर रोज किसी-न-किसी घर में उसको न्योता मिलता।

नरसिंह मामा ने कई बार रघू मामा के पास खबर भिजवाई, पर रघू मामा न गये। उनकी हरकतों से यह लगता था कि वे जाना चाहते थे पर एक-दो बार मना करके वे किस मुँह से बड़े भाई के पास जाते? वे कमलवेणी से भी खिझे रहते।

कमलवेणी की सुशीला से झपट हो गई थी। वह एक दिन मामा को देखने आई। मामा घर में न थे। कमलवेणी के मुख से कोई कड़वी बात निकल गई। सुशीला की जबान तो तलवार थी ही, जोर से चलने लगी। लोग इकट्ठे हो गये। बाद में मामा के कान में भी यह बात पड़ी। वे खौल उठे। कमलवेणी को डाँटा-डपटा।

मामा विचित्र हालत में थे। भाई से कभी अनबन न हुई थी। स्वभाव ऐसा था कि अनबन बनाये भी न रख सकते थे। फिर अनबन ब बनी रहती अगर उनके भाई भी मुँह सुजा लेते। अब वायुसुता की ादी थी, कैसे चुप रहते?

उन्होंने अकस्मात् चारपाई पकड़ ली। जाने बीमारी क्या थी? च्ची थी, या झूठी। यह भी ठीक तरह मालूम न था। शायद बहाना था। मामा इस विषय में बच्चों की तरह थे, जो कभी कभी बीमार कर आत्मीयों का ध्यान आकर्षित करते हैं।

उन्होंने एक दिन खूब शराब पी, ऊटपटाँग चीजें खाली, रात भर

पीते-पीते जागते रहे। कै की। ले-देकर उन्होंने सवेरे तक बुखार ही कर लिया। मामी उनको बिस्तरे पर लिटाकर उनकी शुश्रूषा ने लगीं।

दुपहर के करीब हम मामा के घर गये। वे आहें भर रहे थे और मी चुपचाप आँसू बहा रही थीं। देहली के पास बैठी कमलवेणी पान या रही थी। हमारे जाते ही मामा आँखें मलते हुए उठ बैठे। "बेटा, क काम करोगे? मल्लिखार्जुन राव को बुला लाओगे? प्रसाद आगया है क्या?" उन्होंने पूछा।

भागा-भागा मैं मल्लिखार्जुन राव के घर पहुँचा। वे नहा-धोकर घर के बाहर बैठे हुए थे।

"मामा बुला रहे हैं, बिस्तरे पर पड़े हैं। कोई जरूरी काम है।" मैंने कहा।

मल्लिखार्जुन राव घर की ओर मुँह करके कहने लगे, "मैं जरा राघवैय्या के घर जा रहा हूँ।"

"वहीं खा लेना, यहाँ आज हंडिया न चढ़ेगी। तुम्हें क्या हम भूखे मरें या जियें?" उनकी पत्नी ने कहा। वह भी नरसिंह मामा की पत्नी की तरह पहुँची हुई चुड़ैल थी। जली-कटी सुनाने में अव्वल, बेहया।

मल्लिखार्जुन राव की गरीबी किसी से न छुपी थी। सभी कुछ खो बैठे थे। महीने में दो-तीन बार शिवरात्रि भी होती। खेती फिर शुरू की थी, गन्ना बोया था। पर इस बीच उधार तथा लोगों की उदारता पर जीवन चल रहा था।

मल्लिखार्जुन राव के कमरे में घुसते ही मामी चली गईं। कमलवेणी भी इधर-उधर देखती हुई अपने झोंपड़े में खिसक गई। मल्लिखार्जुन राव मामा के बिस्तर पर बैठ गये।

"भाई, माफ करना।" मामा मल्लिखार्जुन राव से कह रहे थे। कहते-कहते वे खांसे और फिर कुछ कहा।

थोड़ी देर बाद मल्लिखार्जुन राव घर से निकले। वे नरसिंह माम

घर गये। रग्घू मामा ने ही उन्हें भेजा था।

हम इमली के पेड़ के नीचे ही थे कि नरसिंह मामा, मल्लिखार्जुन राव और प्रसाद बड़े-बड़े कदम बढ़ाते हुए मामा के घर आये। उनके साथ हम भी मामा के पास वापिस गये। नरसिंह मामा को देखते ही रग्घू मामा की आँखें छलक आईं। उन्होंने एक तरफ मुँह फेर लिया कुछ न बोल सके। गला रुँध गया था।

"कैसी है तबियत ?" नरसिंह मामा ने हाथ पकड़ कर पूछा।

मामा ने कोई उत्तर न दिया, सिर हिला दिया। नरसिंह माम खटिया के पास मूढ़े पर बैठ गये। मामा की तरफ एकटक देखते रहे वे थोड़ी देर बैठे रहे, फिर प्रसाद को लेकर चले गये। रग्घूमामा ने प्रसाद को रोकना चाहा पर वह चला गया।

अगले दिन सवेरे तालाब के किनारे, पीपल के पेड़ के नीचे, रग्घू मामा भी भाई के पीछे शर्माए हुए-से बैठे थे। गुप-चुप। दण्डित विद्यार्थी की तरह। उनका बुखार काफ़ूर हो गया था।

नरसिंह मामा के घर शादी थी और लगभग सभी घरों में इसकी तैयारियाँ हो रही थीं। किसी के यहाँ आचार बन रहे थे, तो किसी के यहाँ चावल साफ हो रहे थे। कहीं कुछ, कहीं कुछ और।

मुकदमे ने भी करवट बदली थी। यद्यपि अदालत ने फैसला न दिया था पर यह सबको मालूम हो गया था कि फैसला मुखासादार के पक्ष में होगा। कानून उसके साथ था। मुकदमे पर उन्होंने काफी व्यय भी किया था। नरसिंह मामा हाईकोर्ट में अपील करने की सोच रहे थे। पैसे की तंगी थी, बिना पैसे के तो न्याय भी नहीं मिलता। कानून भी उनका है जो कानून के पुरोहित को दक्षिणा दे सकते हैं।

इसके अलावा वे पुल के विषय में भी माथापच्ची कर रहे थे। ओवरसीयर को मजदूरों की जरूरत था। पत्थर, मसाला आदि का भी

...ही बैठा था। था। वह भी हर अफसर की तरह मामा के सहारे ही बैठा था। ...राव के मिन्नत करने पर मामा ने उसको ठेका दिलवा दिया। ...पि वे मन से यह काम मल्लिखार्जुन राव को दिखाना चाहते थे। ...न उनके पास पूँजी थी न वे स्वयं ही दे सकते थे।

शादी की जिम्मेवारी कम न थी। बहुत रुपया चाहिये था। नरसिंह ...मामा को विचित्र विश्वास था कि भगवान् कहीं-न-कहीं से उनको रुपया ...देंगे ही। उन्होंने रामस्वामी के पास खबर भिजवाई, पर उन्होंने कर्ज देने ...से ही सिर्फ इनकार न किया बल्कि पुराने कर्ज के लिये भी तकाजा किया। पादरी से जरूरी खर्च के लिये पाँच-छः सौ रुपये कर्ज मिल गये थे।

रघू मामा को अभी उनके भाई ने कोई काम न सौंपा था। यूँ तो उन्होंने किसी को भी कोई काम न दिया था। वे उनके पीछे-पीछे चलते जाते थे और भाई को उनसे बोलने की भी फुरसत न थी, पर वे नाराज न थे।

प्रसाद की माँ उबल रही थीं। वे जली-कटी सुना रही थीं। बाहर से भले ही वे मामा से चिकनी-चुपड़ी बातें करती हों पर वे अन्दर ही अन्दर उनके प्रति जलती थीं। उनको विवाह के काम में दिलचस्पी लेते देख तो वे तिलमिला रही थीं।

"भानजी की शादी कर दी न ? अब इसकी शादी करने आये हैं। एक को लगा दिया किनारे......अब......हमें नहीं चाहिये इसकी मदद। दुनिया भर की आफतें मोल ले आयेगा। इसका क्या एतबार ?" प्रसाद की माँ आँगन में अपने सम्बन्धियों से कह रही थीं। जो उन... अच्छी तरह न जानती थीं वे उनकी ओर मुँह पर हथेली रख दे... लगीं।

"इसने कुछ ऐसा गोल-माल किया कि वह बेचारी अब भी कँ... है। अगर इसकी नीयत ठीक होती तो हमें भी कोई अँगुली उठा... ...कि यह फलाने के भाई की लड़की है। दूर-दूर तक बदना...

नहीं, नहीं हम नहीं चाहते।" भाभी ने कहा "" प्रसाद की माँ ने।

"आखिर, शादी के शुभ समय पर ऐसी बातें मुँह से न निकालो ऐसे मौके पर सभी की मदद दरकार होती है।" किसी सम्बन्धी ने कहा

"होती होगी, पर......"

मुझे नहीं मालूम कि ये बातें रघु मामा तक पहुँचीं कि नहीं पहुँचतीं भी तो वे शायद बुरा न मानते। वे अपनी भाभी की हड्डी-हड्डी जानते थे।

व्यक्तिगत सत्याग्रह लगभग समाप्त हो चुका था। गांधीजी को भी कोई निश्चित मार्ग न मिल रहा था। सर्वत्र यह अनुभव किया जा रहा था कि देशव्यापी आन्दोलन के लिये इससे अच्छा कोई अवसर न मिलेगा। कम्यूनिस्टों के हो-हल्ले के बावजूद यह कहने वाले भी काफी थे कि शत्रु का शत्रु मित्र होता है। इस युक्ति के आधार पर जापान को अपना मित्र समझने वाले कई सम्माननीय भारतीय थे।

उधर पूर्व में जापान का अधिकार लगभग सभी भारतीय प्रशान्त महासागरीय देशों पर हो गया था। चीन भी उसके पंजे में कराह रहा था। उसकी प्रगति जारी थी, उसकी शक्ति भी बढ़ती जा रही थी

सारा यूरोप हिटलर के स्वस्तिक की गुलामी कर रहा था। इंग्लैण्ड पर दिन-रात बम-वर्षा हो रही थी। रूस से भी पंजा मिलाया जा रहा था।

विषम परिस्थिति थी। अनुमान लगाया जाता था कि मित्र राष्ट्रों के दिन [illegible] हैं। यद्यपि ब्रिटेन जी-जान से लड़ रहा था पर ऐसा मालूम होता था कि जैसे उसकी शक्ति सीमित हो।

कांग्रेस की ओर आशा से देखा जा रहा था। फिर भी कांग्रेस की कार्यवाही चलती थी। रघुसिंह मामा के दो-तीन कांग्रेसी मित्र निमन्त्रण पाकर आ रहे थे। उन्होंने मामा को खबर भिजवाई।

घर में शादी थी, और भी कई झमेले थे। मामा राजनीति में
लचस्पी लेना न चाहते थे। लेकिन मित्रों का निमन्त्रण भी टाले नहीं
नता था। मुकदमे के बारे में वेन्कटसुव्यय्या से बात भी करनी थी।
मामा चले गये।

उनके जाने के बाद रघू मामा भी चल दिये। दोनों की अलग-
अलग समस्यायें थीं। रगू मामा अपने भाई की दिक्कतों को समझते थे।
वे यह भी जानते थे कि बहुत दौड़-धूप करने पर भी, इतने कम समय में
पाँच-दस हजार रुपये न मिल सकेंगे। वे अपनी तरफ से पैसे जुटाने की
कोशिश में थे और ताड़ेपल्लि गूडिम जा रहे थे।

उन्होंने अपनी पत्नी से कहा कि भाई के घर जाकर उनकी सहायता
करे। यद्यपि नरसिंह मामा की पत्नी ने उनको निमन्त्रित न किया था तो
भी मामा ने कोई एतराज न किया।

घर की देख-रेख की जिम्मेवारी सुब्बाराव को सौंपी गई। कमलवेणी
की माँ दो-चार दिन से अँगलूर और नूजवीड का दौरा कर रही थी।
उसका कहना तो यह था कि वह सम्बन्धियों को देखने जा रही है, पर
लोगों का अनुमान था कि वह किसी और "कामुक" की तलाश में थी।

कमलवेणी का मामा के घर में अकेला रहना उचित न समझ
गया। शायद मामा की आज्ञा थी। मैं ठीक तरह नहीं जानता। माम
के घर में ताले लगा दिए गये। कमलवेणी को सुब्बाराव अपने घर
गया। उसकी पत्नी ने सत्याग्रह किया। दो-चार दिन की बात थी।
जैसे-तैसे बाद में मान गई। सुब्बाराव ने उसको अपनी चौपाल में ठ
दिया।

मजदूरों को जुटाना, काम करवाना सुब्बाराव का काम था। द
महीने में काम हो जाना चाहिए था। नहर में पानी के आजाने प
का काम चलना मुश्किल हो जाता। ओवरसीयर को आदेश था कि
में पानी आने से पहिले ही पुल का काम पूरा कर दे।

तरह ओवरसीयर को खुश करने की कोशिश कर

बिना उसको खुश किये हुए कुछ न कमा पाता। सुब्बाराव अपने ही घर उसको प्रायः भोजन के लिए ले जाता। वहीं सुलाता। उसकी पत्नी को यह सब न भाता था। लेकिन लाचारी थी।

ओवरसीयर रसिक प्रकृति का व्यक्ति था। दुनिया देखी थी। वे रास्ते का मजा तभी लेता था, जब आस-पास भटक पाता था। पत्नी दूर थी। पाँच-छः बच्चों की माँ थी, सुनते हैं।

कमलवेणी और उसकी आँखें चार हुईं। ओवरसीयर देखने में खराब न थे। कमलवेणी मुस्कराती। छुपे-छिपे दो-चार बातें भी हो गईं उनका परिचय हो गया।

"जाने यह इस घर में कैसा पैदा हुआ! सारी दुनिया को दुश्मन बना रखा है। मदद करना अलग, मदद करने वालों का काम भी चौपट कर देता है। हे राम, अब क्या होगा?" नरसिंह मामा की ...मी नमक कूटती जाती थी और गुनगुनाती जाती थीं। वे रह-रहकर नाक पोंछतीं, आँख पोंछतीं, चारों ओर देखतीं। घर में भीड़ थी, शादी दो-चार दिन रह गये थे। तैयारियाँ जोरों पर थीं। काहूर से वीरम्मा और सुजाता आ गई थीं। ब्रह्मेश्वर राव भी उपस्थित थे। वे भी एक-... हजार रुपये खर्च रहे थे।

मैं, प्रसाद, सुजाता और दो-चार साथी चौपाल में बैठे हुए थे। हमें ...ई खास काम न दिया गया था। निमन्त्रण-पत्र भेज रहे थे। गप्पें चल ...थीं। सुजाता मद्रास के बारे में बता रही थी। वह बहुत बदल गई ...। बड़ी बनी-ठनी थी।

...नागम्मा सिसकती-सिसकती मूसल रख कर बैठ गई और जोर-जोर ...ने लगी। और भी स्त्रियाँ इकट्ठी हो गईं। न जाने उनको कैसे ...मिल गई थी कि पिछले दिन नरसिंह मामा और रामू मामा के साले ...के साथ वेंकटेश्वर राव और मुरारीराव कल्याणोत्सव एक बैल-

में आये थे। वेन्कटेश्वर राव कार में आया करते थे। इसलिए वे
गाड़ी में आये और कब चले गये अधिक लोगों को न मालूम हो
। वे साथ मुन्सिफ को भी ले गए। सुना जाता था कि वे सब बुच्युर
थे।

मामी को आशंका थी कि दाल में कुछ काला था। वेन्कटेश्वर राव
नीयत किसी से छुपी न थी। अगर वे आग थे तो मुखासादार हवा
। वे मिलकर कुछ भी कर सकते थे। वे बुरी तरह बिगड़े हुए थे ही।
बदला लेने के लिए दाव-पैंतरे खेल रहे थे। मामी भी शायद यह
जानती थीं। उनको डर था कि कहीं वायुसुता की शादी भी न रोक
दी जाए।

"शादी के चार दिन हैं और ये विजयवाड़ा में बैठे हैं। इस सेवा
ने घर तबाह कर दिया, पर इनको तमीज न आई। जाने ये लोग क्या
करें?" मामी हिचकियाँ भर-भरकर रो रही थीं और स्त्रियाँ उन्हें मना
रही थीं। वीरम्मा भी उनके पास गईं, पर कुछ याद करके उदास हो
अन्दर चली गईं।

मामी को रोती देख ब्रह्मेश्वर राव बाहर आ गये। "तुम इस तरह
रोओगी, तो बेचारी वायुसुता पर क्या असर होगा। कुछ नहीं होगा,
बेफिक्र रहो, भगवान् हैं।" कहते-कहते उनका गला रुँध गया और
मामी और जोर से चिल्लाने लगीं।

बाहर जाते समय उनकी नजर सुजाता पर पड़ी। उनकी आँखों में
आँसू लबालब भरे थे। उनको देख सुजाता भी सिसकने लगी। दो मिन
पहिले वह मद्रास के मजे सुना रही थी। शायद अब सहसा मद्रास
पहिले का काल याद आ गया था......मामा, विवाह, विवाह का दि
मृत्यु, हाहाकार।

गया था। लोग एकत्रित थे। झुण्ड के झुण्ड तालाब के किनारे, पेड़ों के नीचे खड़े थे। घर में शहनाइयाँ बज रही थीं। वायुसुता की शादी हो रही थी।

जिनका अनुमान था कि वेन्कटेश्वर राव आदि इस शादी में गड़-बड़ करेंगे, उनका अनुमान गलत निकला। वेन्कटेश्वर राव ने कोशिश तो की थी, पर उनकी दाल न गल सकी थी।

पुच्चपुर के जमींदार भी वधू-वर को आशीर्वाद देने आए और चले गए। उनके आने-जाने की, उन्हीं के कहने पर कोई सूचना न दी गई थी। कई कांग्रेसी मित्र भी आये हुए थे। उस दिन गाँव में किसी के घर भोजन न बना। सारे गाँव को उनके घर न्योता था।

नरसिंह मामा सम्पन्न न थे, कर्जवाले भी थे, पर जो वायुसुता के विवाह के समय पर सादगी, शान, मान-मर्यादा देखी गई, वह बड़े-बड़े रईसों के यहाँ भी न देखी जाती थी।

जब वर ने वधू के गले में मंगलसूत्र बाँधा तो नरसिंह मामा की पत्नी की आँखों में आँसू छलक पड़े। ओठों पर मुस्कराहट बन गई। उनकी बहुत दिनों की इच्छा पूरी हो रही थी। उनको क्या परवाह कि शादी में कितना खर्च हुआ था।

रामेश्वर राव और वीरम्मा भी अपने आँसू पोंछ रहे थे। उनका कारण शायद भिन्न था। सुजाता तो कहीं दीखती ही न थी। वह सम्बन्धियों की पूछ-ताछ से इतनी परेशान थी कि कहीं जा छुपी।

शहनाइयाँ जोर से बजीं और नरसिंह मामा काँप-से गये। उनका गला रुँध आया, पत्नी की तरह उनकी आँखों में खुशी की तरी आ गई।

नरसिंह मामा ने बहुत कोशिश की, पर रुपया विवाह के खर्च के लिये मुश्किल से मिल पाया। कभी किसी के सामने निजी काम के लिये हाथ न पसारे थे, न उधार ही पाते थे। कई ने मदद करनी चाही, पर मामा ने उनकी मदद न लेनी चाही। वे किसी को अपनी मजबूरी न दिखाना चाहते थे।

वर पक्ष के व्यक्ति भलेमानस थे। नरसिंह मामा के व्यक्तित्व और
व से वे बखूबी परिचित थे। उन्होंने दहेज के लिए धरना न दिया।
ाह में दहेज की घोषणा भी न की गई। कई को शक हुआ कि कुछ
तमाल है। पर वास्तविक बात यह थी कि नरसिंह मामा के पास
ा न था। उन्होंने दो-चार महीने में देने का वादा किया था। वर
द वालों ने उनका विश्वास कर लिया था।

विवाह में कई ऐसे भी थे, जिन्हें नरसिंह मामा का मित्र न कहा जा
सकता था। वेन्कटेश्वर राव के आदमी भी मौजूद थे। उन लोगों में यह
सुना गया कि रग्घू मामा ताडे पल्लिगूडिम से दो-चार हजार रुपये
लाये थे। उन्होंने जब भाई के पास रुपये भेजे तो भाई ने लेने से इनकार
कर दिया। कोई कारण न बताया।

पर रग्घू मामा के लिए यह समझना मुश्किल हो गया कि वे पैसे दें
और उनके भाई न लें। झुँझलाकर वे पूरे चौबीस घन्टे घर बैठे रहे।
किसी ने उनके बारे में कुछ न पूछा। नरसिंह मामा ने उनके पास
आदमी भी न भिजवाया। फिर वे कहीं गायब हो गये।

विवाह के दिन वे कहीं से टैक्सी में आये। उनको देखकर लोगों को
आश्चर्य हुआ। आते ही वे चाचा के नाते सब काम-काज करने लगे।
विवाह के समय जब सगे-सम्बन्धी और मित्र उपहार दे रहे थे, तब मामा
ने वायुसुता को बहुत से सोने के गहने और चाँदी के पात्र दिये। उनकी
कीमत लगभग दो-तीन हजार रुपये थी। वे वर के लिये एक साइकल और
एक घड़ी भी खरीद लाए थे।

जब और खुशी के कारण आँसू बहा रहे थे तो मामा वर वधू
पास खड़े मुस्करा रहे थे, मानो कोई मैदान मार लिया हो।

नरसिंह मामा की पत्नी माने या न माने, रघू मामा अपने ही
से अपने भाई के बच्चों को अपना मानते थे। छुटपन में उन्होंने उ
वैसे ही खिलाया-पिलाया था, जैसे कि एक पिता करता है।

नरसिंह मामा के घर संगीत का आयोजन था। अ

रघू मामा ने सभी उपस्थित सज्जनों को दावत अपने घर में दी
आतिशबाजियाँ छूटीं, नृत्य हुआ। ऐसा लगता था जैसे दूसरी शा
रघू मामा के घर हो रही हो।

कई के लिए यह पहेली थी कि दोनों भाई जो कुछ दिन पहिले ए
दूसरे को पीठ दिखाये बैठे थे, कैसे एकाएक मिल गये हैं। उनके मि
प्रकाशराव भी अचम्भे में थे।

वायुलता के पति का नाम अप्पाराव था। उनके माँ-बाप पढ़े लिखे
न थे, न मामा के परिवार की तरह उनका खानदान ही प्रसिद्ध था।
जमीन बेचकर अप्पाराव को पढ़ाया जा रहा था। काफी खर्च होता था।
पर माँ-बाप अपनी जिद के पक्के थे। वे जैसे-तैसे उनको पढ़ा रहे थे।

यलमरु गाँव में शिक्षितों की संख्या काफी है। कई सरकारी नौकरी
में भी हैं। बड़ा गाँव है, सम्पन्न है।

विवाह के बाद, परम्परा के अनुसार, हम भी वायुलता के साथ उस
की ससुराल तीन दिन के लिए भेजे गये।

मकान के नाम पर, अप्पाराव के पिता का एक छोटा-सा छप्पर
था। बहुत साफ छोटा-सा आँगन, एक कोने में रसोई, घड़े-मटके, दूसरी
ओर बाहर दीवार से सटी एक भैंस बँधी थी। पिछवाड़े में शाक-सब्जियों
की क्यारियाँ थीं। साफ था कि परिवार निर्धन था, पर असभ्य नहीं।

घर में चीजें अधिक न थीं, पर जो थीं बड़ी करीने से रखी हुई
अलमारी में कुछ किताबें थीं। वायुलता की सास बड़ी नम्र और
लगती थीं। आते ही उन्होंने बहू की आरती उतारी।

अप्पाराव के कई भाई-बहिन हुए, पर सभी बचपन में
उनकी माँ की गोद कई दिनों से खाली थी। उनको दे
विचार पक्का हो गया कि वायुलता अच्छे घर में ब्याही
बहू की अपेक्षा बेटी बन कर रहेगी।

शाम को हम गाँव घूमने निकले। हमारी तरफ के गाँव प्रायः सभी एक ही तरह के होते हैं। एक तालाव, उसके चारों ओर झोंपड़े, खपरैल के मकान। दो-चार पक्के, एक-आध दुमंजला भी। यलमरू भी ऐसा ही था।

जब हम अपने गाँव वापिस पहुँचे तो नरसिंह मामा न थे। वे विजयवाड़ा गये हुए थे। वकील से मिलना था और भी काम थे।

मालूम हुआ कि मुखासादार ने जिला कोर्ट में मुकदमा जीत लिया था। वे निश्चन्त थे, बेफिक्र। वीरवल्ली में ही थे। रामय्या की लड़की पद्मा उनके साथ थी।

मुन्सिफ सूरय्या की नौकरी छूट चुकी थी। मुखासादार उसकी कोई खास सहायता न कर सके। पर वे इतना अवश्य कर सके कि उसके ही एक चचेरे भाई को गाँव का मुन्सिफ नियुक्त करवा दिया।

नये मुन्सिफ को लेकर कड़ी धूप में भी, वे सड़क के पास, कुएँ के किनारे, बड़ा छाता लगाये बैठे रहते। उन्होंने जो जमीन हड़प ली थी, उसको ठीक करवा रहे थे। उसमें एक ही बार खेती हुई थी और वह भी जल्दी में की गई थी। इसलिए जमीन ऊबड़-खाबड़ पड़ी थी। मेड़ ऊँची की जा रही थी, ताकि गाड़ियाँ खेत में न जा सकें। मजदूर लगे हुए थे।

पास ही वेन्कय्या का खेत था। वह अकेला अपने खेत को सपाट कर रहा था। शाम को आते-जाते दोस्त उसके खेत में ताड़ के पेड़ के नीचे जमा हो जाते और गप्पें लगाते। मुखासादार को शक होता कि शायद वे उनके विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहे हैं। इसलिये उन्होंने हुकम दे रखा था कि कुछ मजदूर रात को खेत में ही सोवें। अँधेरा होने पर और तड़के वे, मुन्सिफ और दो-चार उनके साथी खेत का निरीक्षण कर आते थे। उन्होंने वेन्कय्या का नाम पुलिस में भी लिखवा दिया था।

उन दिनों दिल्ली में बड़ी सरगर्मी थी। यूँ तो सारा देश खौल रहा था। दिल्ली में क्रिप्स मिशन आया हुआ था। और इधर गाँव-गाँव में

बर्मा से भूखे, प्यासे, नंगे, मरते-जीते, कई आश्रित, फटे-हाल, दयनीय अवस्था में जमा हो गये थे।

वह ब्रिटिश सरकार, जो कानून और व्यवस्था के बारे में इतना गरूर करती थी, उनको अरक्षित छोड़ रंगून से भाग निकली थी। लोगों को अपनी रक्षा आप करनी पड़ी। पैदल रंगून से भागे। बड़े-बड़े धनी कंगाल होगये। कई मारे गये। कई लापता थे। और कई पागलखानों में पड़े थे।

सारा बर्मा जो कभी ब्रिटिश सरकार का बायाँ हाथ था, जापानियों के हाथ में था। अन्डेमान द्वीप भी उनके आधीन थे। उनकी फौज बढ़ती आ रही थीं। अनुमान किया जाता था कि हिन्दुस्तान पर उनका हमला जल्दी ही होगा। देश में असन्तोष फैला हुआ था। सब को यही भय था कि ब्रिटिश वही करेंगे, जो उन्होंने बर्मा में किया था। कई यह देख कर भी खुश थे कि अँग्रेजों के दिन लद रहे हैं। युद्ध भारत की सीमाओं तक आ गया था। पर भारतीय युद्ध के लिये तैयार न थे। ब्रिटेन के विरुद्ध निरन्तर जबरदस्त वातावरण बनता जा रहा था।

इसलिये क्रिप्स भारत के साथ स्वतन्त्रता के विषय में भाव-सौदा करने आये थे। वे युद्ध के बाद, भारत को स्वतन्त्रता देने का आश्वासन दे रहे थे। पर उनके आश्वासन पर किसी को विश्वास न होता था। क्रिप्स जहाँ स्वतन्त्रता के बारे में चिकनी-चुपड़ी कर रहे थे, वहाँ यह भी कह रहे थे कि भारत की छः सौ रियासतों को भी उसी तरह स्वतन्त्रता मिलेगी, जिस तरह भारत को, जैसे रियासतें और भारत भिन्न-भिन्न हों। उनके इस सुझाव से भारतीय जनता नाराज थी।

सीधे-सादे गान्धीजी को बहकाना आसान काम न था। उन्होंने क्रिप्स की बातों में आने से इनकार कर दिया और वर्धा जा बैठे। फिर भी दिल्ली में और पार्टियों के नेताओं से सलाह-मशवरा हो रहा था। जो दिल्ली में हो रहा था, उसकी सारे देश में प्रतिक्रिया हो रही थी। विजयवाड़ा में कांग्रेस की सभा भी इसी सिलसिले में हो रही थी।

गाँव के तालाब के किनारे जब मल्लिखार्जुन राव अखबार पढ़ना शुरू करते तो काफी भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। युद्ध की खबरें भी गरम-गरम थीं। इसलिए बहुत देर तक गाँव वालों में बहुत बहस-मुबाहिसा होता रहता। बहस-बहस में मुकदमे पर बातचीत होती और मुखासादार की भी नुक्ताचीनी की जाती।

दुपहर का समय था। रग्घू मामा कहीं जा रहे थे। हम भी उनके पीछे हो लिये। पुल की रौनक बढ़ गई थी। काम जोर से चल रहा था। खम्भे लगभग पूरे हो गये थे।

मुब्बाराव कामकाजी हो गया था। वह ठेके में पैसे बना रहा था। ओवरसीयर का वह पक्का दोस्त भी बन गया था।

रग्घू मामा पुल तक गये। मुब्बाराव से कुछ बातचीत की और कुन्देर की ओर चले गये। यथापूर्व मामा की हरकतें जारी हो गई थीं। वे कहाँ जाते थे, क्यों जाते थे, आसानी से अनुमान लगाना कठिन था। सुना जाता था कि कमलवेणी के प्रति भी वे उदासीन होते जाते थे। कारण न मालूम होता था।

हम पुल के पास ही बैठ गये। थोड़ी देर बाद रामय्या उधर से गुजरा। उसके पीछे चमार जानय्या फावड़ा लेकर जा रहा था। किसी जमाने के नौकर ने स्वयं एक नौकर रख लिया था। दो-तीन साल में रामय्या बहुत बदल गया था। वह मजदूर से मालिक हो गया था।

खाली बैठना कठिन था। हम अमलतास के पेड़ के पास गये। वहाँ वीरवल्ली के धोबी कपड़े धो रहे थे। वीरवल्लि में दो ही धोबी परिवार थे। वे ही सारे गाँव की धुलाई करते थे। एक परिवार में तीन भाई थे। उनमें से दो की शादी हो चुकी थी। वीरस्वामी उनमें बड़ा था, दूसरा वेंकटस्वामी, तीसरे को "बुल्लिगा" कहकर पुकारते थे। वीरस्वामी खूब पीता था। जब पिछले दिनों उसके भाई की शादी हुई तो उसने इतनी

पी कि तीन-चार दिन खटिया पर से न उतरा। बहुत बातूनी था।

वीरस्वामी रघू मामा का अच्छा दोस्त था। मामा उसको काफी इनाम देते थे। कभी-कभी खूब पिलाते भी थे। वह उनका हर काम करता।

जब हमने उससे बात करनी चाही तो वह सी-सी करता कपड़े धोता गया। उसकी बात करने की इच्छा न थी। वह चिढ़ा हुआ-सा लगता था। उसकी पत्नी शान्ता भी चुप थी। हम भी तंग आकर घर चले गये।

घर में क्या करते? सूरज के ढलते ही हम फिर पुल की ओर गये। अमलतास के पेड़ के नीचे भीड़ जमा हो गई थी। ओवरसीयर और रघू मामा भी वहाँ खड़े थे। हमारे पीछे सड़क पर सुब्बाराव साईकिल पर आ रहा था। उसके पीछे तीन-चार पुलिस कॉन्स्टेबल और एक इन्स्पेक्टर।

वीरस्वामी को मामा ने पकड़ रखा था और सामने उसके भाई की पत्नी की लाश थी। उसकी कनपटी पर खून के लोथरे जम गये थे। हमें वहाँ खड़ा देख रघू मामा चिल्लाये, "जाओ यहाँ से, तुम्हारा यहाँ क्या काम?" हम पीछे हट गये।

वीरास्वामी की पत्नी जोर-जोर से रो रही थी। उसका भाई वेंकट-स्वामी भी सिसक रहा था। पर वीरास्वामी चुप था। उसकी शराबी आँखों में एक भी आँसू न था।

उसने अपने भाई की पत्नी का खुले आम कत्ल कर दिया था। सुना गया कि जब से उसके भाई की शादी हुई थी, उसकी नजर उसकी पत्नी पर थी। उसने घाट पर उससे कुछ छेड़-खिलवाड़ करने की कोशिश की, पर वह न मानी। वीरस्वामी ने झट एक बड़ा चाकू निकाला और उसकी कनपटी में भोंक दिया। फिर चाकू इस प्रकार नहर में धो दिया, जैसे किसी मुर्गी को काट दिया हो।

कत्ल हो गया पर कोई भी वीरस्वामी के पास जाने की हिम्मत न कर सका। ओवरसीयर दूर खड़ा काँपता रहा। उसका भाई रोने लगा, वह

भी भाई पर हाथ न उठा सका। संयोगवश रग्घू मामा उसी समय कुन्देर से लौट रहे थे। उनको देखते ही वीरस्वामी ने भागने की कोशिश की किन्तु मामा ने उसको लपककर पकड़ लिया। सुब्बाराव को भेज कर बुय्युर से पुलिस बुलवाई।

हम रग्घू मामा को समझ न पाते थे। वे अपने आप गुण्डे माने जाते थे। वीरस्वामी उनका दोस्त था। पर उसको उन्होंने स्वयं अपने हाथों पकड़ कर पुलिस के हवाले कर दिया। जो कोई यह सुनता उसे अचरज होता।

जब इन्स्पेक्टर वीरस्वामी के हाथों में हथकड़ी डाल कर लेजाने लगे तो उसका भाई रो-रोकर गिड़गिड़ाने लगा, "हुजूर, भाई को छोड़ दो, वह मर गई तो मर गई, मैं दूसरी ब्याह लूँगा। साहब, छोड़ दो उसे।"

यद्यपि अवस्था विचित्र थी, तो भी गाँव के कई लोग उसको यह कहते सुन हँस पड़े।

प्रसाद की पढ़ाई के बारे में अभी कोई प्रबन्ध न हुआ था। नरसिंह मामा दो-चार दिन गाँव में रहते, तो पाँच-दस दिन काम पर बाहर जाते।

यद्यपि दामाद को दहेज न दिया गया था तो भी उनको पाँच-सौ रुपये भिजवा दिये गये थे, ताकि वे आसानी से चार-एक महीने होस्टल में रह सकें। दहेज के लिये दबाव भी नहीं डाला जा रहा था।

हमारा स्कूल खुल गया था, पर न मेरा, न मेरे साथियों का ही स्कूल जाने में मन लगता था। टोली टूट रही थी। स्कूल का रास्ता अब बहुत लम्बा लगता था। सारा सप्ताह शनिवार और रविवार की प्रतीक्षा में कटता।

रविवार आया तो मैं रग्घू मामा के घर दौड़ा। मामा घर में थे। यद्यपि वे तब आस-पास के गाँव में काफी चक्कर लगाया करते थे।

वीरस्वामी की सुनवाई में भी उन्हें दो-चार बार हाजिर होना पड़ा था। पुलिस के अधिकारियों की तरफ से उन्हें कोई सर्टिफिकेट दिया गया था। पर वे कहा करते थे, "इस पुलिस की ऐसी-तैसी, ये पकड़ना नहीं जानते, पहरा देना जानते हैं।"

मामा के घर सुजाता आई हुई थी। उसकी माँ भी थीं। ब्रह्मेश्वर राव की प्रतीक्षा की जा रही थी। सुजाता मद्रास जा रही थी, और जाने से पहिले मामा से मिलने आई थी।

कमलवेणी रह-रहकर दरवाजे के पास आती, सुजाता की ओर घूरती और नाक-भौं सिकोड़ती अन्दर चली जाती। दोनों की शक्लों में असाधारण समानता थी।

उन दिनों यह भी कहा जा रहा था कि रघु मामा ने सुशीला को कुन्देर के ग्रामीण दवाखाने में लगवा दिया था। इसीलिये उनका कुन्देर आना-जाना अधिक हो गया था। यह भी सम्भव है कि कमलवेणी भी मामा से ऊब गई हो। तब तो नहीं जानता था, अब जानता हूँ, घाट-घाट फिरने वाली औरत किसी एक घाट में ज्यादा दिन नहीं टिकती।

रघु मामा पैसे वाले न थे। घर में रोज खाना पकाता था वही शायद काफी था। जब कभी पैसे की जरूरत होती तो कहीं से ले आते और पाँच-दस दिन की चाँदनी करते। दुकान में शराब हिसाब पर मिल ही जाती थी।

दो-चार दिन पहिले प्रकाश राव के यहाँ से एक आदमी आया, शायद पैसे का तकाजा करने के लिये। मामा ने वायुसुता की शादी के लिये किसी को लूटा न था, न शुरु में ही रुपया बनाया था। प्रकाश राव से कर्ज लाये थे। वे कोई नई मिल खोलने वाले थे, पैसे की सख्त जरूरत थी। मामा के पास आदमी भेजा तो गया पर वह मामा से कुछ ले नहीं पाया।

रस्म के अनुसार सुजाता को एक साड़ी वगैरह देनी थी। उसकी माँ को भी उपहार देना जरूरी था। पर घर में एक कौड़ी न थी। मामी

के गहने तो कभी के उतर चुके थे। सुब्बाराव ने कहा कि उसने सारा रुपया ठेके पर लगा रखा है। रामस्वामी के पास खबर भिजवाई तो उन्होंने कहा कि गन्डिगुन्टा वाले कर्ज ले गये थे, और उनके पास इस कारण पैसा न था। पादरी भी गाँव में न थे और तो और कुन्देर से भी आदमी खाली लौटा। उनका मित्र विजयवाड़ा गया हुआ था।

आखिर सुजाता उनके घर से खाली हाथ गई। वे धुय्युर तक उसे छोड़ने गये। घर आकर घंटों बिस्तरे पर पड़े रहे। कहीं बाहर न गये। अनुमान था कि वे शराब पीयेंगे, पर उस दिन शराब छुई तक नहीं।

रघू मामा, कर्ण आदि अखबार सुन रहे थे। मल्लिखार्जुन राव पढ़ रहे थे। नरसिंह मामा बन्दर गये हुए थे। गाँव में अखबार इतने चाव से कभी न पढ़ा गया था, जितना कि उन दिनों।

मल्लिखार्जुन राव कह रहे थे, "आखिर भारतीय कांग्रेस कमेटी की सभा बम्बई में होने जा रही है। क्रिप्स ने बहुत कुछ देने का वादा किया, पर जब देने की बारी आई तो खाली हाथ दिखा कर चला गया। गांधी जी इनकी नस-नस पहिचानते हैं। उन्होंने कहा था कि क्रिप्स साहब एक ऐसा चेक दे रहे थे जो चलेगा नहीं। आखिर उन्होंने न चेक दिया न किसी ने लिया। स्वाँग रचा था, पोल खुल गई। जब तक चर्चिल है, वह भारत खो देगा, पर उसको आजादी न देगा। बनिया देश है,चमड़ी चली जायेगी, पर दमड़ी न देंगे।" मल्लिखार्जुन राव ने कहा।

"इन बनियों का पाला भी एक बनिये से पड़ा है।" रघू मामा ने कहा। सब हँसने लगे।

"क्यों साहब, अखबार में वीरस्वामी के बारे में भी आया है क्या ?" हरिजनवाड़ा के ऐजाक ने पूछा।

"अब यहाँ देश में उथल-पुथल हो रही है और तुझे वीरस्वामी की पड़ी है।" मल्लिखार्जुन राव ने कहा।

"जाने वह कहाँ होगा !" ऐजाक ने कहा।

"होगा कहाँ, जेल में है। गन्नावरं में सुनाई हुई थी, फैसला न हुआ। अब बन्दर की अदालत में मुकदमा चल रहा है। भुगतेगा ही।" मल्लिखार्जुन राव ने कहा पर सब रघू मामा की ओर देख रहे थे।

उधर से ओवरसीयर गुजरे। उनके पीछे एक मजदूर सिर पर रजिस्टर रखे चला आ रहा था। सुब्बाराव भी साईकल साथ लेकर उनकी बगल में पैदल चल रहा था। शायद हिसाब-किताब का कुछ मामला था। पुल काफी बन गया था, पर अब भी काम बाकी था।

अखबार पढ़कर मामा, कर्ण, मल्लिखार्जुन राव आदि घर की ओर चले।

"अरे भाई, हम तो बम्बई जाकर ही रहेंगे। अगर यह बैठक न देखी तो देखा ही क्या ?" मल्लिखार्जुन राव कह रहे थे।

"फिर गन्ने का क्या करोगे ? अब तो कटने का समय आया है।" कर्ण ने पूछा।

"गन्ना कटता रहेगा, सब भगवान् की दया है। बम्बई जरूर जायेंगे क्यों राघवैय्या, तुम भी आवोगे ?" मल्लिखार्जुन राव ने पूछा। पर रघू मामा ने जवाब न दिया। वे कांग्रेस के कार्य में दिलचस्पी लेते थे, किन्तु वे उन लोगों में न थे, जिनको कांग्रेस के नाम पर नशा आजाता था।

"मगर बम्बई जाने के लिये तो बहुत खर्च होगा।" कर्ण ने कहा।

"हाँ, हाँ, तुम भी क्या अपशकुन की बातें कर रहे हो ? अब तक जैसे आया था वैसे ही आयेगा। न आयेगा तब भी जायेंगे।" मल्लिखार्जुन राव ने कहा। फिर उन्होंने रघू मामा से पूछा, "क्यों भाई राघवैय्या, पैसे मिल ही जायेंगे ?

मामा चुप रहे। मल्लिखार्जुन राव को क्या मालूम कि मामा उस समय टन-टन गोपाल थे। उनकी उनसे लेने की आदत थी, माँग बैठे।

मल्लिखार्जुन राव का घर आगया था। उनकी पत्नी चिन्तित बाहर

बैठी थी। नजरों में नाराजगी थी। मुझे सन्देह था कि मल्लिखार्जुन राव बम्बई जाने का ख्वाब देख रहे थे और वहाँ घर में खाने को भी न था। आते ही पत्नी से पानीपत हुआ होगा।

सबकी अपनी-अपनी जिम्मेवारियाँ होती हैं। पर उनको पूरा करने का ढंग हरेक का अपना अलग-अलग होता है।

नरसिंह मामा पलायन-प्रवृत्ति के आदमी न थे, जो जिम्मेवारियों को धूल की तरह झाड़ देते हैं। वे उनको निभाना जानते थे और निभाते थे।

यूँ ही उनपर काफी जिम्मेवारियाँ थीं, गाँव की गुटबन्दी के कारण ये जिम्मेवारियाँ उलझ भी गई थीं। तिस पर जेल से छूटने के बाद वे पाठशाला की जिम्मेवारी फिर अपने ऊपर लादना चाहते थे। वायुमुता के विवाह के कारण उनपर एक और जिम्मेवारी आ पड़ी थी। प्रसाद की शिक्षा शायद उनको चिन्तित कर रही थी। देश की यह हालत थी कि वे कुछ-न-कुछ करना चाहते थे पर कुछ न कर पाते थे। हाथ बंधे हुए थे। गृहस्थी का भार ढोते-ढोते कम नहीं होता, बढ़ता ही है।

बन्दर से वे झुँझलाये लौटे। उनकी पत्नी भी, जो चाहे आँधी आये या बारिश, अपनी तेजाबी बौछार करती ही थी, जबान पर ताला लगाये बैठी थी। एक आदमी, जिनसे नरसिंह मामा ने बातचीत की, वे गाँव के कर्णं थे। वे कुछ कागजात और दस्तावेज देख रहे थे।

प्रसाद को उसके पिताजी मद्रास पढ़ने के लिए भेजना चाहते थे, पर वह खुश न था। घर की हालत उससे छिपी न थी। वह इकलौता भी न था। अगर घर की सारी आय उसी पर खर्च हो जाय तो औरों का क्या होगा ! वह सोचा करता था।

कर्णं से बात करके जब मामा घर आये तो उन्होंने साफ कह दिया कि वे दो एकड़ जमीन बेच देंगे। फिर क्या था, नरसिंह मामा की पत्नी

ने इस तरह आग उगलनी शुरू की कि मामा भी न सह सके।

"सारी जायदाद बरबाद कर दी और अब जो कुछ बची है, उसे भ
बेच देना चाहते हो। कमाओ न, आजकल तो निखट्टू भी पैसे वाले हो
रहे हैं और तुम एक हो कि बाप-दादाओं की जमीन बेच रहे हो। हम सब
को दाने-दाने का मुहताज करके ही छोड़ोगे।"

"तब क्या किया जाय? पैसे कहाँ से लाऊं? प्रसाद को पढ़ाना
है।" मामा ने कहा।

"क्यों बनते हो? धनी रिश्तेदार हैं, क्यों नहीं पैसा माँगते? गाँव
का इतना करते हो, देश का इतना करते हो, क्या उनसे अपने बच्चे
की पढ़ाई के लिये भी वसूल नहीं कर सकते? मैं नहीं डरूँगी। जमीन
नहीं बिकेगी।"

"तुम सोचो-समझो भी, बेचे बगैर कैसे काम चलेगा? कैसे कर्ज
चुकेगा? क्या किया जाय, लाचारी है।" मामा समझाने की कोशिश
कर रहे थे। परन्तु मामी का क्रोध और बढ़ता जाता था।

"कारोबार करो। इस नेतागिरी से क्या फायदा? दिन-रात देश-
देश चिल्लाते हो, वह देश भी क्या जो तुम्हारे बच्चों को न पढ़ा सके
हाँ, वे एकड़ बच्चों की पढ़ाई के लिए बिक रहे हैं या उस मनहूस पाठ-
शाला के लिये? कौन जाने, कभी किसी को बताया कि क्या करने जा
रहे हो? कभी यह सोचा कि घर में औरत है, उसका भी दिमाग है,
दिल है। आजादी-आजादी चिल्लाते हो। जाय तुम्हारी आजादी भाड़
में। अब यही हालत है, जाने तब क्या हो। इल्लत है।"

"क्या बक रही हो? कहीं पागल तो नहीं हो गई हो?" नरसिंह
मामा ने जरा क्रोध में कहा।

"पागल तो तुम हो, नहीं तो जमीन बेचने की क्यों सोचते? अपना
घूमना-फिरना कम करदो, काफी है। सैकड़ों रुपयों की बचत होगी।
[illegible] है और [illegible] में रहने का नाम नहीं लेते।

"बच्चों वाली हो गई हो, शर्म नहीं आती ?" मामा ने कहा।

"शर्म आये तुम को। मैंने कौन-सा पाप किया है ? सारा गाँव जानता है, किसी ने कभी उंगली नहीं उठाई।"

"हाँ, हाँ, जानता है, तुम से बात करना बेकार है।" मामा उठकर बाहर चले गये। मामी कुछ कहती-कहती दरवाजे तक आई पर बाहर कर्यो को देखकर सहसा रुक गई। केवल इतना ही कहा, "जमीन न बिकेगी।" और पैर पटकती हुई अन्दर चली गई।

गाँव में हर किसी की बात हर किसी दूसरे की हो जाती है। देखते-देखते अफवाहों का एक बवंडर उठ खड़ा हो जाता है।

नरसिंह मामा ने जमीन के बेचने के बारे में किसी से न कहा था, पर उनकी पत्नी, जान-पहचान वाले, रिश्तेदार, सभी के घर अपना रोना रो आई थीं।

गाँव में यह बात फैलनी ही थी कि रामस्वामी और दो-चार आदमी मामा के घर इकट्ठे हो गये। इधर-उधर की बातें करके पैसे का तकाजा करने लगे। कर्जदार तो गिद्धों की तरह होते हैं, दूरसे ही उनको पैसे की बू आ जाती है।

रामस्वामी ने बहुत दिनों मामा से बात न की थी। मामा के घर की ओर आते तो मुँह नीचा करके चले जाते। पर आज उनका चेहरा मुस्करा रहा था। यद्यपि मामा चुप थे, तो भी वे दुनिया भर की बातें करते जाते थे।

रग्घू मामा के पास भी यह खबर पहुँची। वे तालाब के किनारे खड़े थे। सुब्बु मामा भी उनके साथ थे। दोनों चिन्तित थे। वे नरसिंह मामा के घर की ओर आ रहे थे।

मामा को आता देख रामस्वामी खिसकने की सोचने लगे। वे नरसिंह मामा से कह रहे थे, "जब रुपयों का चुकता करें, हमें भी याद

ने इस तरह आग उगलनी शुरू की कि मामा भी न सह सके।

"सारी जायदाद बरबाद कर दी और अब जो कुछ बची है, उसे भी बेच देना चाहते हो। कमाओ न, आजकल तो निखट्टू भी पैसे वाले हो रहे हैं और तुम एक हो कि बाप-दादाओं की जमीन बेच रहे हो। हम सब को दाने-दाने का मुहताज करके ही छोड़ोगे।"

"तब क्या किया जाय? पैसे कहाँ से लाऊं? प्रसाद को पढ़ाना है।" मामा ने कहा।

"क्यों बनते हो? धनी रिश्तेदार हैं, क्यों नहीं पैसा माँगते? गाँव का इतना करते हो, देश का इतना करते हो, क्या उनसे अपने बच्चे की पढ़ाई के लिये भी वसूल नहीं कर सकते? मैं नहीं डरूँगी। जमीन नहीं बिकेगी।"

"तुम सोचो-समझो भी, बेचे बगैर कैसे काम चलेगा? कैसे कर्ज चुकेगा? क्या किया जाय, लाचारी है।" मामा समझाने की कोशिश कर रहे थे। परन्तु मामी का क्रोध और बढ़ता जाता था।

"कारोबार करो। इस नेतागिरी से क्या फायदा? दिन-रात देश-देश चिल्लाते हो, वह देश भी क्या जो तुम्हारे बच्चों को न पढ़ा सके? हाँ, ये एकड़ बच्चों की पढ़ाई के लिए बिक रहे हैं या उस मनहूस पाठ-शाला के लिये? कौन जाने, कभी किसी को बताया कि क्या करने जा रहे हो? कभी यह सोचा कि घर में औरत है, उसका भी दिमाग है, दिल है। आजादी-आजादी चिल्लाते हो। जाय तुम्हारी आजादी भाड़ में। अब यही हालत है, जाने तब क्या हो। इल्लत है।"

"क्या बक रही हो? कहीं पागल तो नहीं हो गई हो?" नरसिंह मामा ने जरा क्रोध में कहा।

"पागल तो तुम हो, नहीं तो जमीन बेचने की क्यों सोचते? अपना घूमना-फिरना कम करदो, काफी है। सैकड़ों रुपयों की बचत होगी। जवानी-भर घूमते रहे और अब भी घर में रहने का नाम नहीं लेते। मैं हूँ, वरना और कोई होती......"

"बच्चों वाली हो गई हो, शर्म नहीं आती !" मामा ने कहा।

"शर्म आये तुम को। मैंने कौन-सा पाप किया है ? सारा गाँ जानता है, किसी ने कभी उंगली नहीं उठाई।"

"हाँ, हाँ, जानता है, तुम से बात करना बेकार है।" मामा उठकर बाहर चले गये। मामी कुछ कहती-कहती दरवाजे तक आई पर बाहर कर्णों को देखकर सहसा रुक गई। केवल इतना ही कहा, "जमीन न बिकेगी।" और पैर पटकती हुई अन्दर चली गई।

गाँव में हर किसी की बात हर किसी दूसरे की हो जाती है। देखते-देखते अफवाहों का एक बवंडर उठ खड़ा हो जाता है।

नरसिंह मामा ने जमीन के बेचने के बारे में किसी से न कहा था, पर उनकी पत्नी, जान-पहचान वाले, रिश्तेदार, सभी के घर अपना रोना रो आई थीं।

गाँव में यह बात फैलनी ही थी कि रामस्वामी और दो-चार आदमी मामा के घर इकट्ठे हो गये। इधर-उधर की बातें करके पैसे का तकाजा करने लगे। कर्जदार तो गिद्धों की तरह होते हैं, दूरसे ही उनको पैसे की बू आ जाती है।

रामस्वामी ने बहुत दिनों मामा से बात न की थी। मामा के घर की ओर आते तो मुँह नीचा करके चले जाते। पर आज उनका चेहरा मुस्करा रहा था। यद्यपि मामा चुप थे, तो भी वे दुनिया भर की बातें करते जाते थे।

रग्घू मामा के पास भी यह खबर पहुँची। वे तालाब के किनारे खड़े थे। सुब्बु मामा भी उनके साथ थे। दोनों चिन्तित थे। वे नरसिंह मामा के घर की ओर आ रहे थे।

मामा को आता देख रामस्वामी खिसकने की सोचने लगे। वे नरसिंह मामा से कह रहे थे, "जब [illegible] चुकता करें हमें भी [illegible]

चाहते हों। वे कुछ देर तक सलाह-मशवरा करके आये थे। जो बात वे स्वयं कहना चाहते थे, अपने छोटे भाई से कहलवा रहे थे।

"पैसे की जरूरत हो तो मैं ले आऊँगा, आप फिक्र न करें।"

"तुम्हें तजुर्बा नहीं है, शादी के बाद भाई-भाई को भी बदलना पड़ता है। तुम मुझे पैसे दोगे और खुद भुगतोगे। तुम मजे में रहो, मुझे ही भुगतने दो......" रग्घू मामा और कुछ न कह सके, ओंठ हिलाकर रह गये, पर आवाज न निकली।

नरसिंह मामा ने बहुत मनाया, मगर रग्घू मामा न माने। वे अपनी जिद पर अड़े रहे। वे अपने भाई के साथ प्रसाद को लेकर मद्रास जाना चाहते थे। जब से सुजाता को खाली हाथ भेजा था, तब से उनको तसल्ली न थी।

प्रसाद की पढ़ाई-लिखाई के लिये सुब्बु मामा और ब्रह्मेश्वर राव ने काफी रुपया इकट्ठा कर दिया था। नरसिंह मामा ने जो कुछ रुपया उनसे लिया, उसके लिये उन्होंने दस्तावेज लिख कर दे दिये। हिसाब-किताब में नरसिंह मामा न रिश्तेदार देखते न मैत्री ही।

जमीन के बारे में नरसिंह मामा ने अपना निश्चय न बदला था, केवल स्थगित कर दिया था। कालेज खुल गये थे, काफी समय पहिले ही हो चुका था, इसीलिये उन्होंने अपने बहनोई और भाई से रुपया ले लिया था।

रग्घू मामा तुरन्त कुन्देर गये, पर उनका दोस्त कहीं हैदराबाद में जमीन खरीदने गया हुआ था। रग्घू मामा ने किसी ऐरे-गैरे के सामने हाथ पसारने सीखे न थे। झक मारकर चले आये।

वे घर आये थे कि उनके पास खबर आई कि उनके भाई मद्रास के लिये रवाना हो रहे हैं। पैसे हाथ में न थे। बिना पैसे के मद्रास जाना बेकार था, पत्नी से भी न ले सकते थे। जो कुछ कभी उनको दिया था,

वह सब पहिले ही वसूल कर चुके थे। लाचार थे, जाये बगैर रह भी न सकते थे।

वे सहसा उठे, कमलवेणी को बुलाया। उसके गले में से हार निकाल लिया। हार अच्छा कीमती थी। उन्होंने ही दिया था। कमलवेणी को उन्होंने बोलने का मौका भी न दिया, अगर देते भी तो कमलवेणी कुछ न कह पाती।

बुय्युर जाकर मामा ने उस सोने के हार को एक जान-पहिचान वाले सर्राफ को देकर पैसे बना लिये। नहीं मालूम कि नरसिंह मामा, रग्घू मामा की इस करतूत से परिचित थे कि नहीं।

रग्घू मामा तो जाने क्या मद्रास में कर रहे थे, पर गांव में कमलवेणी और उसकी माँ अन्नपूर्णा मामी को दिक कर रहीं थीं। जब कमलवेणी की माँ को पता चला कि उसके गले में हार नहीं है तो वह बिगड़ उठी। उससे पूछ-तलब भी न की। गला फाड़-फाड़कर अन्नपूर्णा मामी को कोसने-कुढ़ने लगी। "चोर ने अब हार छिपा लिया है, दूसरों की चीज चुराने में शर्म नहीं आती। मैं भी अपनी माँ की बेटी नहीं अगर पुलिस में रिपोर्ट न लिखवाई। हाँ, मैं बड़ी ऐसी-वैसी औरत हूँ, बता कहाँ रखा है?" उसका चिल्लाना सुन गांव वाले इकट्ठे हो गये।

"अरे तेरा दिमाग तो नहीं खराब होगया है?" एक ने पूछा।

"जरा जबान सम्भालकर बात कर।" दूसरे ने दुत्कारा।

"क्या बक-बक कर रही हो? आखें फूँट जायेंगी।" तीसरे ने कहा।

"एक तो उनका खाती हो और उन्हीं पर रौब जमाती हो।" चौथे ने कहा।

"उलटा चोर कोतवाल को डाँटे।" किसी ने कहा।

कमलवेणी की माँ बकती जाती थी। बक-बककर जब थक जाती तो रोकर कहती, "सब पुलिस में मालूम हो जायेगा।" कमलवेणी कुछ कहना चाहती पर उसकी माँ उसे न कहने देती, उसकी न सुनती।

पर जब कमलवेणी को कहने का मौका मिला तो उसने सच कह दिया। उसने कभी न सोचा था कि चुप रहने से मामला इतना बढ़ जायेगा। गाँव वाले जो कुछ उनके जी में आया कह गये, किन्तु अन्नपूर्णा मामी ने अपने मुँह से एक बात भी न निकलने दी। वे किवाड़ की आड़ में आँसू बहाती खड़ी रहीं।

"लड़की को तो कैद किये हुए है, और अब उसके गहने भी उठाने लगा है। खाने को दाने नहीं और चाल चलते हैं रईसों की। हो सत्यानास इन कम्बख्तों का।" कमलवेणी की माँ रोने-पीटने लगी। बुरी-बुरी गालियाँ बकती जाती थी। आखिर सुब्बाराव को उसे डाँटकर चुप कराना पड़ा। उसकी डाँट का उस पर असर भी पड़ा।

मुखासादार भी मद्रास गये हुए थे। मजदूरों को स्वतन्त्रता-सी मिल गई थी। वे अब खेत में न सोते थे। गौ-बैल जरूर खेत में बँधते थे। मुखासादार पहरे का प्रबन्ध तो कर गये थे; पर पहरेवाला पास के कुँए के चबूतरे पर आकर सो जाता और खेत भगवान के भरोसे छोड़ देता। खेत में था भी कुछ नहीं सिवाय मवेशियों के।

एक दिन किसी ने मुखासादार के दो हट्टे-कट्टे बैलों की पूँछ काट दी। जाँघों पर घाव कर दिये। मुखासादार उनको बड़ी सावधानी से पाल रहे थे। पूँछों के कट जाने से उनकी कीमत कम हो जाती थी। उनको खूब खिला-पिलाकर बेचने की सोच रहे थे।

गांव में कुहराम मचा। मजदूर भी हक्के-बक्के थे। बे-सिर-पैर की उड़ा रहे थे। पहरेदार इस तरह हड़बड़ा रहा था, जैसे किसी भूत ने पकड़ लिया हो। बात मुन्सिफ के पास आई। मुन्सिफ ने पुराने मुन्सिफ से सलाह मशवरा किया। उनको वेन्कय्या पर शक था। उसका खेत ही साथ लगता था। वह ही मुखासादार की हर बात में खिलाफत कर रहा था।

लक्ष्मय्या को जब यह मालूम हुआ कि वेन्कय्या पर शक किया जा रहा है, उन्होंने मुन्सिफ को समझाया कि ख्वाहमख्वाह वह तिल का ताड़ न बनाये। पर वह न माना। वह सूरय्या के इशारे पर चल रहा था।

कर्णं को खबर भेजी गई। उनको न पुराना मुन्सिफ पसन्द था, न नया ही। पर उनको नौकरी बजानी ही पड़ती थी। पुराना मुन्सिफ उम्र में जरा बड़ा था। किंतु नया तो एकदम गदहपचीसी में था। और कर्णं दादा भी बन चुके थे। नौकरी में उम्र का लिहाज नहीं होता। नौकरी की ऊँचाई और निचाई से आदमी की कीमत आंकी जाती है। मुन्सिफ से कर्णं एक सीढ़ी नीचे थे।

वेन्कय्या को बुलाया गया। बैठक, मुखासादार के घर के सामने, नीम के पेड़ के नीचे लगी थी। मुखासादार के गुट का हर आदमी वहाँ था। छोटी-मोटी भीड़ इकठी हो गई थी।

वेन्कय्या कुछ सोचता हुआ खड़ा था। वह तिल-मिलकर रहा था, मुन्सिफ से बहुत बिगड़ा हुआ था। पहिले तो उसने न आने की सोची। फिर जब बड़ों ने समझाया तो आकर खड़ा हो गया। उसके साथ उसके दोस्त भी थे।

मुन्सिफ ने सारी घटना सुनाई। पहरेदार को झूठी गवाही देने के लिए मना लिया गया। अगर वह कुछ न कहता तो वह अपनी नौकरी खो बैठता। गरीबी तो जवान को भी इस देश में खोखला कर देती है। मालिक उसमें जो भरता है, वह ही प्रायः उसमें बजता है। पहरेदार ने कहा कि उसने वेन्कय्या को खेत में घुसते देखा है। लोग चिल्लाये, "झूठ-झूठ, यह कम्बख्त तो कुएं पर सो रहा था। अबे, सच बोल, नहीं तो टाँग तोड़ देंगे।" वेन्कय्या के साथियों ने कहा। पहरेदार डर के कारण हकलाने लगा। वेन्कय्या चुप रहा।

"क्या यह सच है?" मुन्सिफ ने वेन्कय्या से पूछा। वेन्कय्या तब भी उसकी तरफ देखता खड़ा रहा, पर कुछ न बोला। "हम चाहते

हैं कि मामला यहीं तय हो जाय।" मुन्सिफ ने यह इस लहजे में कह
कि वेन्कय्या की त्योरियाँ चढ़ आईं।

"तुम तय करने वाले कौन होते हो? मुन्सिफ हो, मजिस्ट्रेट नहीं
हो। शक हो तो शिकायत करदो, जो कुछ मुझे कहना है, अदालत में
कह लूँगा।" वेन्कय्या कहकर चला गया।

मुन्सिफ ने इसकी आशा न की थी। वह कर्णं की ओर देखने लगा।
कर्णं ने कहा, "हाँ, हाँ, ठीक ही तो कह रहा है। जहाँ तक आपका
हक है, वहीं तक ही जाना चाहिए। पकड़ना पुलिस का काम है और
फैसला करना अदालत का। मुखासादार भी नहीं हैं। शायद उनको इस
तरह बात का बतंगड़ बनाना पसन्द न हो। फिर सबूत भी क्या है?"

"हाँ, हाँ, तुम तो यों कहोगे?" मुन्सिफ ने दबी जबान में कहा।

"हाँ, हाँ, वे ठीक कह रहे हैं।" वेन्कय्या के टोली वाले चिल्लाये
और उठकर चले गये। सूरय्या को भी कुछ न सूझा। वह पीछे से
खिसक गया। मुन्सिफ पागल-सा इधर-उधर देखने लगा। शायद उसने
सोचा था कि उसको वेन्कय्या पर रौब जमाने का अच्छा अवसर मिला
था, पर उल्टा वेन्कय्या ही मैदान मार ले गया।

मल्लिखार्जुन राव की पत्नी खम्मा डायन थी, गाँव की बड़ी-से-बड़ी
चुड़ैल भी उसको कोसे न रहती थी। उसकी शायद ही किसी से पटती
थी, पतली-दुबली थी वह। देखने में बुरी न थी। मुसीबतें ही मुसीबतें
देखी थीं उसने, पर उसको देखने से लगता था, जैसे वे उस पर कोई
दाग न छोड़ गई हों।

जाने वह कब पैदा हुई थी कि न मायके में ही खुशहाली थी, न
ससुराल में ही। जब शादी हुई तो पिता कर्ज के भार से इतनी बुरी
तरह दबे कि काफी जमीन बेचनी पड़ी। वे कोई बड़े किसान न थे, पाँच-
दस एकड़ की खेती होती थी। कई बाल-बच्चे थे। मगर खाने-पीने को

भगवान् की दया से कोई कमी न थी।

खम्मा की जब शादी हुई तो उसके पिता फूले न समाये। वे कहा करते थे कि उनकी बेटी भाग्यशालिनी है, फूलों से तुलेगी। पर किस्मत का फेर ऐसा कि उसके मत्थे काँटे ही काँटे लगे।

भारत में स्वतन्त्रता-आन्दोलन चला। नरसिंह मामा पर तो उसका रंग पहिले ही लग चुका था। उन्होंने वही रंग मल्लिखार्जुन राव पर भी पोत दिया। दोनों मतवालों की तरह देश-सेवा की फेर में फिरा करते।

अच्छी बड़ी जमीन-जायदाद दान में दे-दी, और जो दान से बची वह बिक-बिका गई। आय का कोई रास्ता न था। सन्तान बढ़ती गई। उनके पढ़ने लिखने का भी प्रबन्ध न किया जा सका। वह हाथ जिसने देना सीखा था, आसानी से किसीके सामने पसारा न जा सकता था।

नरसिंह मामा आर्थिक दृष्टि से सदा बीमार-से थे। उनके पास अधिक न था। गुजारा होता था। वे दान भी न दे पाते थे। उनकी हालत मल्लिखार्जुन राव से बेहतर थी। उनके बच्चे पढ़-लिख रहे थे।

खम्मा यह सब देखकर जलती थी। उसका अपना ख्याल था कि नरसिंह मामा के कारण उसके पति बरबाद हो गये हैं। हर किसी के सामने उनको खुल्लमखुल्ला गालियाँ दिया करती, किंतु नरसिंह मामा या उनके परिवार का कोई मिलता तो हँस-हँसकर, प्रेम का दिखावा करती हुई बातें करती। वह जानती थी कि भले ही नरसिंह मामा ने उनके घर को डुबा दिया हो, पर गाँव में उन्हीं का ही एक परिवार था, जो उसके कुटुम्ब की सहायता कर सकता था और कर रहा था। रघू मामा ने जितना रुपया उनको दिया था, उसका कोई हिसाब न था। चाहे दुनिया उसका कुछ भी मतलब निकाले।

खम्मा कृतज्ञ हो, ऐसी बात नहीं, वह मामा के परिवार से सहायता लेनी अपना अधिकार समझती थी। पर उसकी मेहरबानी सिर्फ इतनी थी कि उनके सामने अपनी कड़वी जबान प्रायः काबू में रखती थी।

आज उसके घर में भीड़ जमा हो गई थी। औरतें ही अधिक थीं।

हैं कि मामला यहीं तय हो जाय।" मुन्सिफ ने यह इस लहजे में कहा कि वेन्कय्या की त्योरियाँ चढ़ आईं।

"तुम तय करने वाले कौन होते हो? मुन्सिफ हो, मजिस्ट्रेट नहीं हो। शक हो तो शिकायत करदो, जो कुछ मुझे कहना है, अदालत में कह लूँगा।" वेन्कय्या कहकर चला गया।

मुन्सिफ ने इसकी आशा न की थी। वह कर्णं की ओर देखने लगा। कर्णं ने कहा, "हाँ, हाँ, ठीक ही तो कह रहा है। जहाँ तक आपका हक है, वहीं तक ही जाना चाहिए। पकड़ना पुलिस का काम है और फैसला करना अदालत का। मुखासादार भी नहीं हैं। शायद उनको इस तरह बात का बतंगड़ बनाना पसन्द न हो। फिर सबूत भी क्या है?"

"हाँ, हाँ, तुम तो यों कहोगे?" मुन्सिफ ने दबी जबान में कहा।

"हाँ, हाँ, वे ठीक कह रहे हैं।" वेन्कय्या के टोली वाले चिल्लाये और उठकर चले गये। सूरय्या को भी कुछ न सूझा। वह पीछे से खिसक गया। मुन्सिफ पागल-सा इधर-उधर देखने लगा। शायद उसने सोचा था कि उसको वेन्कय्या पर रौब जमाने का अच्छा अवसर मिल था, पर उल्टा वेन्कय्या ही मैदान मार ले गया।

मल्लिखार्जुन राव की पत्नी खम्मा डायन थी, गाँव की बड़ी-से-बड़ी चुड़ैल भी उसको कोसे न रहती थी। उसकी शायद ही किसी से पटती थी, पतली-दुबली थी वह। देखने में बुरी न थी। मुसीबतें ही मुसीबतें देखी थीं उसने, पर उसको देखने से लगता था, जैसे वे उस पर कोई दाग न छोड़ गई हों।

जाने वह कब पैदा हुई थी कि न मायके में ही खुशहाली थी, न ससुराल में ही। जब शादी हुई तो पिता कर्ज के भार से इतनी बुरी तरह दबे कि काफी जमीन बेचनी पड़ी। वे कोई बड़े किसान न थे, पाँच-दस एकड़ की खेती होती थी। कई बाल-बच्चे थे। मगर खाने-पीने को

नरसिंह मामा मद्रास से आये, पर हम उनसे न मिल सके। हम बिना बुलाये उनके पास जा नहीं पाते थे। प्रसाद के बारे में उत्सुकता बनी रही। लोगों के मुँह केवल इतना सुना कि हाईकोर्ट में अपील कर दी गई है। मामा ने वेङ्कटसुब्बय्या को ही अपील के लिये नियुक्त किया था। मुलासादार ने मद्रास के बड़े-बड़े दो-तीन वकील लगाये हुए थे।

रघू मामा एक दिन बाद आये। हम भागे-भागे उनके घर गये। वे इमली के पेड़ के नीचे खटिया पर बैठे थे। कमलवेणी उनके पास खड़ी थी। कुछ कह रही थी। मामा सुनते न लगते थे। हमें देखकर भी उनके मुख की मुद्रा न बदली। वे उदास मालूम होते थे। उन्होंने कमलवेणी से कहा, "तुम जाओ, बच्चे आये हैं।" कमलवेणी, हमें घूरती हुई अँगुली चटखाती, मटकती-कटकती, अन्दर चली गई।

"प्रसाद क्या भरती हो गया है? कहाँ है वह? फिर कब आयेगा?" मैंने पूछा।

"वह बड़ी मुश्किल से भरती हुआ। क्या नाम है, उस कॉलेज का? हां, हां लायला। बहुत बड़ी इमारत है। तिमंजिली, एक ही बिल्टिङ्ग में हजारों बच्चे पढ़ते हैं। बढ़िया जगह है, बगीचा है।" मामा कह रहे थे।

"पर मामा, पढ़ने से क्या फायदा? वही क्लर्की। उस क्लर्की से तो खेती ही भली।" कुटुम्ब राव और मैंने एक ही साथ कहा।

मामा ने शायद हमें न सुना। वे कह रहे थे, "मगर शहरों में जाकर गाँवों को न भूल जाना। शहरी शिक्षा की चाहे कलम लगा लो, पर यह ख्याल रखना कि जड़ें गांव की हैं।" मामा कुछ सोचने लगे।

"प्रसाद कहा खाता-पीता है?" मैंने पूछा।

"मद्रास में पैसा हो तो सब-कुछ मिल जाता है। कॉलेज में कोई होस्टल-सा है, वहीं खा लेता है, वहीं रहता है। अरे हां। याद आया, तुम अपनी मामी को बुलाओ।"

मैं मामी को बुला लाया। वे मामा के थैले में से कपड़े निकाल कर

खम्मा चारपाई पर पड़ी सिसक रही थी। उसके पति दो दिन पहिले बम्बई चले गये थे। बिना टिकट के ही रवाना हो गये थे। खम्मा के घर वालों का कहना था कि उसी फिक्र में वह बीमार थी।

नरसिंह मामा की पत्नी उन्हें दिलासा देने गईं। दोनों ही अपने पतियों से असन्तुष्ट थीं। इसलिये कभी-कभी मिलकर रो लिया करतीं, पर आज अन्दर-ही-अन्दर दोनों की शायद न बनती थी।

मल्लिखार्जुन राव अपने अड़ंद निश्चय के लिये प्रसिद्ध थे। जब वे एक बार एक निश्चय कर लेते थे तो उनका निश्चय बदलना आसान काम न था। अपनी धुन के पक्के थे। पर जिस तरह वे बम्बई इस बार गये, पहिले कभी भी कहीं न गये थे। सब को आश्चर्य हो रहा था।

खम्मा काफी देर तक रोती रही। कभी भाग्य को कोसती, कभी पति को बुरा-भला कहती, कभी बच्चों पर लाल-पीली होती। औरतों के जाने के बाद उन्होंने नरसिंह मामा की पत्नी से कहा।

"सुना है कि वे प्रसाद को कॉलेज में भरती करने गये हैं?"

"हाँ।" मामी ने कहा।

"मेरे बच्चों को तो भगवान् भी नहीं देखता।" वह फिर सिसकने लगी, "सुना है राघवैय्या भी गये हुए हैं।"

"हाँ।"

"शराब पर सैकड़ों रुपया खर्च कर देते हैं, पर वे उनको दस-बीस रुपये न दे सके। खैर, किस्मत है।" वे फूटकर रोने लगीं।

थोड़ी देर बाद उन्होंने नरसिंह मामा की पत्नी से पूछा, "सुना है, वे जमीन बेच रहे हैं?"

"हां, जिद पकड़ रखी है।" मामी ने बताया।

खम्मा तुरन्त चारपाई पर से उठी, जैसे बुखार यह सुनते ही काफूर हो गया हो और सुराही से पानी लेकर जल्दी-जल्दी पीने लगी।

नरसिंह मामा मद्रास से आये, पर हम उनसे न मिल सके। हम बिना बुलाये उनके पास जा नहीं पाते थे। प्रसाद के बारे में उत्सुकता बनी रही। लोगों के मुँह केवल इतना सुना कि हाईकोर्ट में अपील कर दी गई है। मामा ने वेङ्कटसुब्बय्या को ही अपील के लिये नियुक्त किया था। मुखासादार ने मद्रास के बड़े-बड़े दो-तीन वकील लगाये हुए थे।

रघू मामा एक दिन याद आये। हम भागे-भागे उनके घर गये। वे इमली के पेड़ के नीचे खटिया पर बैठे थे। कमलवेणी उनके पास खड़ी थी। कुछ कह रही थी। मामा सुनते न लगते थे। हमें देखकर भी उनके मुख की मुद्रा न बदली। वे उदास मालूम होते थे। उन्होंने कमलवेणी से कहा, "तुम जाओ, बच्चे आये हैं।" कमलवेणी, हमें घूरती हुई अँगुली चटखाती, मटकती-कटकती, अन्दर चली गई।

"प्रसाद क्या भरती हो गया है? कहाँ है वह? फिर कब आयेगा?" मैंने पूछा।

"वह बड़ी मुश्किल से भरती हुआ। क्या नाम है, उस कॉलेज का? हां, हां लायला। बहुत बड़ी इमारत है। तिमंजिली, एक ही बिल्डिङ्ग में हजारों बच्चे पढ़ते हैं। बढ़िया जगह है, बगीचा है।" मामा कह रहे थे।

"पर मामा, पढ़ने से क्या फायदा? वही क्लर्की। उस क्लर्की से तो खेती ही भली।" कुटुम्ब राव और मैंने एक ही साथ कहा।

मामा ने शायद हमें न सुना। वे कह रहे थे, "मगर शहरों में जाकर गाँवों को न भूल जाना। शहरी शिक्षा की चाहे कलम लगा लो, पर यह ख्याल रखना कि जड़ें गांव की हैं।" मामा कुछ सोचने लगे।

"प्रसाद कहां खाता-पीता है?" मैंने पूछा।

"मद्रास में पैसा हो तो सब-कुछ मिल जाता है। कॉलेज में कोई होस्टल-सा है, वहीं खा लेता है, वहीं रहता है। अरे हां। याद आया, तुम अपनी मामी को बुलाओ।"

मैं मामी को बुला लाया। वे मामा के थैले में से कपड़े निकाल कर

धोबी को दे रही थीं। मामा के पास आकर खड़ी हो गईं।

"देखो, अपने प्रसाद को ताज़ा घी भेजना है। मद्रास में तो घी के नाम पर तेलों का घोल दिया जाता है। बेचारा सूख जायगा। परसों अपने वकील जायँगे, उनके हाथ भेज दूँगा।"

"अच्छा।" अन्नपूर्णा मामी थोड़ी देर उनकी तरफ देखती रहीं और फिर मुस्करा दीं। मामा भी मुस्करा दिये।

"तुम मामा को नहाने भी दोगे कि नहीं? देखो कितने मैले हो रहे हैं! यों बातें ही करते रहोगे?" मामी ने मुस्कराते हुए पूछा।

"मामा, सुजाता कैसी है?" मैंने पूछा।

"क्या बताऊँ, उस पर शहरी रङ्ग बहुत गहरा पड़ा है। हमेशा अँग्रेजी में गिपचिप करती है। हमें देखकर शर्मा गई। बड़े घर की लड़कियों से दोस्ती है। टाटबाट से रहती है। शहरी रङ्ग-ढङ्ग हैं। हम गँवार जो ठहरे।" कहते-कहते मामा का उदास चेहरा और भी उदास हो गया।

"सच कहूँ तो मैं इस बार सुजाता को देखकर खुश न हुआ।" मामा कहते कहते तौलिया उठाकर नहाने चले गये।

नरसिंह मामा को घर में पाना और भी मुश्किल हो गया। आँधी की तरह आते और पानी की तरह चले जाते। कभी बन्दर, कभी विजयवाड़ा।

पिछले दो-चार दिन वे बुय्युर ही जाते रहे। मुन्सिफ ने बढ़ा-चढ़ा कर वेन्कय्या की पुलिस में शिकायत की थी। तहकीकात हो रही थी। पर मुखासादार ने इस बीच पुलिस से कहा कि उन्हें वेन्कय्या के खिलाफ कोई शिकायत न थी। न जाने इसका क्या कारण था? हो सकता है कि मुखासादार वेन्कय्या से वैर न बढ़ना चाहते हों। वेन्कय्या से वैर मोल लेना आफत को दावत देना था। बहुत ही गरम मिज़ाज

का आदमी था, काम पहिले करता था और विचार बाद में।

यह सुन अगर किसी ने भौंहें सिकोड़ीं तो वह था रामस्वामी। वे चाहते थे कि गाँव में पार्टीबाजी बढ़े, लोग पसीने की कमाई पानी की तरह बहायें और उनकी पाँचों अंगुलियाँ घी में हों। वे मामा से बेवजह चिढ़े हुए थे। जो कोई उनको नीचा दिखाने की ठानता, उसको वे अपना दोस्त समझते। उन्हें देखकर तो मेरा यह ख्याल बन गया है कि जो दुश्मनी नहीं कर सकता, वह दोस्ती भी नहीं निभा सकता।

नरसिंह मामा बहुत दौड़-धूप के बाद भी अभी तक अपनी पाठ-शाला खोल न पाये थे। घर का काम ही अधिक हो गया था। मुकदमा तो था ही, काँग्रेसी भी उनको इधर-उधर ले ही जाते थे। परिणाम यह हुआ कि पाठशाला का पुराना रहा-सहा छप्पर भी धीमे-धीमे ढहता जाता था, उड़ती चीलों के लिये आरामगाह बन गया था।

रग्घू मामा को पैसे की फिक्र सताने लगी। कर्जवाले तकाजा करने लगे थे। भाई की हालत भी अच्छी न थी। खेती-बाड़ी के लिए पूँजी की जरूरत थी।

यह भी सम्भव है कि रग्घू मामा अपनी जिम्मेदारियाँ अनुभव करने लगे हों। कमलवेणी और उसकी माँ का रोना-धोना रोज-बरोज बढ़ता जाता था।

एक दिन रग्घू मामा अपना थैला उठाकर चल दिये। बाद में सुना गया कि वे ताडेपल्लि गूडिम गये थे।

कमलवेणी और ओवरसीयर के बारे में अफवाहें उड़ रही थीं। अब उसकी इतनी हिम्मत हो गई थी कि मामा की गैरहाजरी में वह ओवर-सीयर के तम्बू में लुकी-छिपी चली जाती थी। सुब्बाराव खुद पुल पर बैठा पहरा देता।

मामी को शायद यह मालूम था, पर तब भी वे किसी से कुछ न कहतीं। मद्रास से लौटने के बाद मामा भी बदल रहे थे। वे उनसे मुस्करा-मुस्कराकर बातें करने लगे थे।

धोबी को दे रही थीं। मामा के पास आकर खड़ी हो गईं।

"देखो, अपने प्रसाद को ताज़ा घी भेजना है। मद्रास में तो घी के नाम पर तेलों का घोल दिया जाता है। बेचारा सूख जायगा। परसों अपने वकील जायँगे, उनके हाथ भेज दूँगा।"

"अच्छा।" अन्नपूर्णा मामी थोड़ी देर उनकी तरफ देखती रहीं और फिर मुस्करा दीं। मामा भी मुस्करा दिये।

"तुम मामा को नहाने भी दोगे कि नहीं ? देखो कितने मैले हो रहे हैं! यों बातें ही करते रहोगे ?" मामी ने मुस्कराते हुए पूछा।

"मामा, सुजाता कैसी है ?" मैंने पूछा।

"क्या बताऊँ, उस पर शहरी रङ्ग बहुत गहरा पड़ा है। हमेशा अँग्रेजी में गिपचिप करती है। हमें देखकर शर्मा गई। बड़े घर की लड़कियों से दोस्ती है। ठाटबाट से रहती है। शहरी रङ्ग-ढङ्ग हैं। हम गँवार जो ठहरे।" कहते-कहते मामा का उदास चेहरा और भी उदास हो गया।

"सच कहूँ तो मैं इस बार सुजाता को देखकर खुश न हुआ।" मामा कहते कहते तौलिया उठाकर नहाने चले गये।

नरसिंह मामा को घर में पाना और भी मुश्किल हो गया। आँधी की तरह आते और पानी की तरह चले जाते। कभी बन्दर, कभी वेजयवाड़ा।

पिछले दो-चार दिन वे बुय्युर ही जाते रहे। मुन्सिफ ने बढ़ा-चढ़ा र वेन्कय्या की पुलिस में शिकायत की थी। तहकीकात हो रही ी। पर मुखासादार ने इस बीच पुलिस से कहा कि उन्हें वेन्कय्या के ख़लाफ कोई शिकायत न थी। न जाने इसका क्या कारण था ? हो कता है कि मुखासादार वेन्कय्या से वैर न बढ़ना चाहते हों। वेन्कय्या वैर मोल लेना आफत को दावत देना था। बहुत ही गरम मिज़ाज

का आदमी था, काम पहिले करता था और विचार बाद में।

यह सुन अगर किसी ने भौंहें सिकोड़ीं तो वह था रामस्वामी। वे चाहते थे कि गाँव में पार्टीबाजी बढ़े, लोग पसीने की कमाई पानी की तरह बहायें और उनकी पाँचों अंगुलियाँ घी में हों। वे मामा से बेवजह चिढ़े हुए थे। जो कोई उनको नीचा दिखाने की ठानता, उसको वे अपना दोस्त समझते। उन्हें देखकर तो मेरा यह ख्याल बन गया है कि जो दुश्मनी नहीं कर सकता, वह दोस्ती भी नहीं निभा सकता।

नरसिंह मामा बहुत दौड़-धूप के बाद भी अभी तक अपनी पाठ-शाला खोल न पाये थे। घर का काम ही अधिक हो गया था। मुकदमा तो था ही, काँग्रेसी भी उनको इधर-उधर ले ही जाते थे। परिणाम यह हुआ कि पाठशाला का पुराना रहा-सहा छप्पर भी धीमे-धीमे ढहता जाता था, उड़ती चीलों के लिये आरामगाह बन गया था।

रग्घू मामा को पैसे की फिक्र सताने लगी। कर्जवाले तकाजा करने लगे थे। भाई की हालत भी अच्छी न थी। खेती-बाड़ी के लिए पूँजी की जरूरत थी।

यह भी सम्भव है कि रग्घू मामा अपनी जिम्मेदारियाँ अनुभव करने लगे हों। कमलवेणी और उसकी माँ का रोना-धोना रोज-बरोज बढ़ता जाता था।

एक दिन रग्घू मामा अपना थैला उठाकर चल दिये। बाद में सुना गया कि वे ताडेपल्लि गूडिम गये थे।

कमलवेणी और ओवरसीयर के बारे में अफवाहें उड़ रही थीं। अब उसकी इतनी हिम्मत हो गई थी कि मामा की गैरहाजरी में वह ओवर-सीयर के तम्बू में लुकी-छिपी चली जाती थी। सुब्बाराव खुद पुल पर बैठा पहरा देता।

मामी को शायद यह मालूम था, पर तब भी वे किसी से कुछ न कहतीं। मद्रास से लौटने के बाद मामा भी बदल रहे थे। वे उनसे मुस्करा-मुस्कराकर बातें करने लगे थे।

सुब्बाराव यह कहता उन दिनों सुना गया कि रघू मामा कोई कारोबार करने की सोच रहे थे। सीमेंट वगैरह के लिए चिट्ठी-पत्री कर रहे थे। सुब्बाराव पूँजी लगाने को तैयार था। वे कर्ज अदा करके जिन्दगी में नया पन्ना पलटना चाहते थे।

सवेरे-सवेरे सुब्बु मामा का घर सजाया गया। गाँव के देवी-देवताओं को भोज चढ़ाया गया। सम्बन्धियों को सहर्ष सूचित किया गया। सुब्बु मामा के लड़का पैदा हुआ था। खुशियाँ मनाई जा रही थीं।

सुब्बु मामा की पत्नी मायके गई हुई थी, प्रसव के लिये। सुब्बु मामा के बहुत दिनों बाद सन्तान हुई थी। अब उन पर तिरुपति वेन्कटेश्वर स्वामी का विशेष अनुग्रह था। तीन-साढ़े-तीन वर्ष में ही वे दो बच्चों के पिता हो गये थे।

साधारणतः ऐसे अवसरों पर नरसिंह मामा को हंसता-मुस्कराता देखा जाता था। पर वे आज घर में न थे। जब सुब्बु मामा अपनी भाभी को खुशखबरी सुनाने गये तो उन्होंने इस तरह मुँह फेर लिया, जैसे कोई बुरा समाचार मिला हो।

अन्नपूर्णा मामी के घर तो दिवाली-सी मनाई जा रही थी। उनकी गोद अभी खाली थी। परमेश्वर ने उनकी प्रार्थना न सुनी थी। स्वभाव से वे माँ थीं, हर गाँव का बच्चा उनसे माँ का वात्सल्य पाता।

जब कभी खुशी का मौका आता तो अन्नपूर्णा मामी गरीबों को बुला कर खुद अपने हाथों से खाना बनाकर परोसतीं, वीरम्मा के मन्दिर की परिक्रमा करतीं, तुलसी की पूजा करतीं।

रघू मामा अभी ताड़ेपल्लि गूडिम से न लौटे थे, नहीं तो गाँव में छोटा-मोटा जलसा ही होता।

कमलवेणी को यह सब न भा रहा था। वह और उसकी माँ मामी का मखौल कर रही थीं। "घर में खाने को नहीं और खैरात बाँट रही

है। क्या अक्लमन्दी है ?"

"अपनी कोख खाली है, नहीं तो जमीन पर पैर ही न टिकते।" कमलवेणी दबी जबान में कह रही थी।

"अन्दर सब जहर है, यह बाहर का ढोंग है। कभी कोई बाँझ दूसरों के बच्चों को देखकर इस तरह निहाल होती है ?" कमलवेणी की माँ इस तरह जल रही थी।

पर मामी अपने कार्य में मस्त थीं। सुब्बु मामा उनकी मदद कर रहे थे। कमलवेणी और उसकी माँ उनको घूर-घूरकर देख रही थीं। कमलवेणी की माँ ने उसके कान में कहा, "राँड ही तो है, पति घर में नहीं है और देवर के साथ खेल-खिलवाड़ कर रही है। कल किसी और के साथ हंसेगी।" दोनों ठहाका मारकर हंस पड़ीं।

रघू मामा ने घर आते ही सुब्बाराव को बुलाया। उन्होंने यह भी न देखा कि घर में कमलवेणी है कि नहीं। पहिले कभी आते ही कमलवेणी से मुलाकात होती थी, फिर वे किसी और का मुँह देखते थे। पर सुजाता को मद्रास देख आने के बाद, न जाने क्यों वे कमलवेणी की परछाईं से भी दूर रहते थे।

"मैं सीमेंट का इन्तज़ाम कर आया हूँ, पेशगी भी दे आया हूँ। अब तुम बुय्युर में अच्छा-सा मकान ढूँढो।" मामा कह रहे थे और सुब्बाराव हाथ बांधे इस प्रकार खड़ा था जैसे मूर्ति हो।

"गाँव में जरा पूछ लो कि मैंने कितनों का क्या-क्या देना है। मल्लिखार्जुन राव आये हैं कि नहीं ?"

"नहीं तो, ... पर ...." सुब्बाराव कहता-कहता रुक गया।

"सुना है कि सुब्बु के लड़का पैदा हुआ है। देख आओ कि वह घर में है कि नहीं ? यह भी मालूम करना कि भाई साहब कहाँ हैं ?"

मामा विचित्र मूड में थे। वे प्रश्न पूछते जाते थे। "कर्णं है कि नहीं ? वीरस्वामी के बारे में कुछ पता लगा कि नहीं ? वेन्कटेश्वर राव इस तरफ आया था ? मुझे वह प्रकाशराव के घर मिला था। देखा जायेगा, अच्छा तुम जाओ।" मामा घर के अन्दर जाने लगे, पर सुब्बाराव अपनी जगह से न हिला। उसको न जाता देख मामा भी एकाएक रुक गये। "क्यों, कहो क्या बात है ?"

सुब्बाराव थोड़ी देर तो हिचकिचाता रहा, फिर उसने दबी आवाज़ में कहा, "पुल का काम खतम हो गया है।"

"हाँ, हाँ, कोई बात नहीं, अब व्यापार करेंगे। काम करने वाले के लिए काम हमेशा रहता है।" यह सुन मामी मुस्कराने लगीं।

"ओवरसीयर चला गया है।"

"हाँ, हाँ, इसमें क्या बात है ?"

"साथ कमलवेणी और उसकी माँ भी गई हैं। वेश्या की ही···"

"अच्छा, तो तुम जाओ········हूँ।" रुघू मामा ने गम्भीरत से कहा।

उसके जाने के बाद मामा खटिया पर जा बैठे और अट्टहास करने लगे। यदि यह घटना पहिले घटी होती या एकाएक घट जाती तो शायद मामा गुस्से में अंगारे हो जाते। पर मामा के हाव-भाव से लगता था कि वे इस घटना की प्रतीक्षा में थे।

"अरे, सुनो भी," मामा ने अन्नपूर्णा मामी को पुकारा। मामी मुस्कराती आकर खड़ी हो गई। "सुना है,········हटाओ,······बला टली। अब तुम आराम से रहना।" मामा ने कहा।

"आपकी दया से तो मैं हमेशा आराम से थी।"

"ताना मारना सीख गई हो। अब कहीं मैं घूमा-फिरा न करूँगा. बच्चे पढ़-लिख रहे हैं। मुझे आवारागर्दी नहीं करनी चाहिए। तुम्हें तंग न करूँगा।" मामा ने मामी के कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा। मामी को शायद रोमाँच हो रहा होगा।

"हम अब कारोबार करने की सोच रहे हैं।" मामी की तब तक
चकियाँ बंध गई थीं। "मैं तुम्हें अच्छी खबर सुना रहा हूँ, और तुम
रही हो, तुम भी अजीब हो।" पर मामी हिली नहीं। "रोती ही रहोगी
या हमें खिलाओगी-पिलाओगी भी?" मामी अन्दर चली गई।

नहा-धोकर जब मामा खाने बैठे तो उन्होंने मामी से पूछा, "सुब्बु
का लड़का कैसा है?"

मामी ने कोई जवाब न दिया। उनकी आँखों से आँसू टपकते
जाते थे।

"क्यों, आँखों में क्या मिर्चें लग गई हैं?" मामा ने हंसते हुए कहा।
मामी ने मुस्कराने की कोशिश की, पर आँखें बरबस रोती जाती थीं।
उनकी खुशी का ठिकाना न था।

खा-पीकर मामा उठे और गाँव में निकल पड़े। उनकी चाल में
विचित्र निश्चिन्तता थी।

आठ अगस्त, १६४२ को राजनीतिक घुटन एकाएक समाप्त हो गई।
भारत में एक ऐसा आन्दोलन चला जो १८५७ की क्राँति से कहीं अधिक
व्यापक और शक्तिशाली था।

पूर्व में जापान का बढ़ना जारी था। मित्रराष्ट्रों की शक्ति भार
में केन्द्रित थी। भारत ही उनकी आशाओं का केन्द्र बिन्दु था। रूस
जर्मन सेनायें बढ़ रही थीं। महायुद्ध वस्तुतः संसारव्यापी हो गया थ
ब्रिटिश तब भी भारत से न जाना चाहते थे।

महात्मा गांधी आन्दोलन चलाकर भारत की जनता में असाध
चेतना पैदा करने में सफल हो चुके थे। लोगों में स्वतन्त्रता की
जग चुकी थी। राष्ट्रपिता ने आखिर निश्चय किया और ब
'भारत छोड़ो' का आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया।

उस दिन अखबार न आये। तेनाली का स्टेशन, मालूम

जला दिया गया था। विजयवाड़ा के स्टेशन का कुछ भाग नष्ट क दिये गए थे। गाड़ियों के डिब्बे इधर-उधर ढकेल दिये गये। पटरियाँ में यत्र-तत्र उखाड़ दी गईं। जो जहाँ था, उसने वहीं काम करना छोड़ दिया। खुल्लम-खुल्ला विद्रोह छिड़ गया।

रेडियो में यह भी बताया गया कि कई जगह भीड़ को तितर-बितर करने के लिए पुलिस ने गोलियाँ भी छोड़ी थीं। कहीं-कहीं फौज को भी बुलाया गया था। यह आन्दोलन विचित्र-सा लगता था। बिना ईंधन के आग-सा दावाग्नि की तरह फैलता जा रहा था।

हम गांव के बड़े बच्चे बुय्युर की ओर भागे। हमारे साथ रघू मामा भी थे। मामा में इतना जोश आ गया था कि अपना कारोबार भी भूल गये। उन्होंने विजयवाड़ा जाना चाहा, पर नरसिंह मामा ने उनको जाने से मना किया।

लक्ष्मय्या शुरू से ही 'भारत छोड़ो' आन्दोलन की आलोचना करते आ रहे थे। लेक्चरबाजी कर रहे थे, पर गांव वाले उनकी न सुनते थे।

शाम को नरसिंह मामा ने मुझे बुलवा भेजा। मैं घबरा गया। कांपता-कांपता गया। वे मल्लिखार्जुन राव के घर बैठे थे। उनको घर छोड़े काफी दिन हो गये थे। कहाँ थे, कैसे थे, इसके बारे में कुछ मालूम न था। उनकी पत्नी, रुम्मा, जोर-जोर से चिल्ला रही थी। "जाने वे कहाँ होंगे? अय्यो भगवान्, क्या होगा इन बच्चों का? हो सत्यानाश इस कांग्रेस का।" बम्बई की खबरें उसने भी सुन ली थीं।

नरसिंह मामा उसको सान्त्वना दे रहे थे। "घबराओ मत, वे इतनी जल्दी गिरफ्तार न होंगे। शायद दो-चार दिन में आ जायेंगे। मैं अभी विजयवाड़ा आदमी भेजकर पता लगाता हूँ। वहाँ शायद कांग्रेस के आफ़िस में कुछ मालूम हो सके।" मैं यह सोचकर जोश में आ गया कि मामा ने मुझे विजयवाड़ा जाने के लिये ही बुलाया है।

पर मामा ने गम्भीरतापूर्वक कहा, "तुम मुझे कल मिलना।" मेरी घबराहट और बढ़ गई।

"देखो, तुम गड़बड़ी मत करो, मैंने रघू से भी कहा है। अगर
द कुछ करे तो फौरन मुझे इत्तिला देना।" नरसिंह मामा ने कड़ी
आवाज में मुझसे कहा।

उनके घर में इस आशा से सवेरे-सवेरे उछलता-कूदता गया था
कि मुझे विजयवाड़ा भेजेंगे, पर उन्होंने मुझे ऐसा काम सौंपा, जिसमें
मेरी कतई दिलचस्पी न थी। मैं अपना-सा मुँह लेकर तालाब के किनारे
बैठ गया। अखबार आने का समय हो गया था। धीमे-धीमे भीड़ जमा
होती जा रही थी।

इतने में वीरवल्ली के नाई ने आकर बताया कि मल्लिखार्जुन राव
विजयवाड़ा में गिरफ्तार किये गये थे। उसने कहा कि उसे लक्ष्मय्या ने
बताया था। लक्ष्मय्या को हर तरह की खबरें मिल जाती थीं।

मल्लिखार्जुन राव के घर यह खबर पहुँचाने के लिये मुझे कहा गया।
खबर सुनते ही उनके घर के लोग रोने-चिल्लाने लगे। पर उनकी बड़ी
लड़की ने थोड़ी देर बाद कहा, "खैर, कम-से-कम अब यह तो मालूम
हुआ कि वे अब कहाँ हैं? जेल तो वे कई बार हो आये हैं।"

"मगर बेटी, जेल जेल ही है।" उसकी दादी ने आंसू बहाते हु
कहा। "जाने कैसे इस बार गुजारा होगा? राघवैय्या की भी अच्छी हाल
नहीं है। वह खुद कर्ज मांग रहा है।" बुढ़िया यह कह रही थी
मामा अपनी पत्नी के साथ उस तरफ आये।

"बेटा, तुम सौ बरस जियो।" बुढ़िया छाती पीट-पीटकर
लगी। मामी जब अन्दर गईं तो खम्मा ने उनका हाथ पकड़ कर
से रोना शुरू किया। उसको रोता सुन कर्णं वगैरह इकट्ठे हो
देखते-देखते छोटी-मोटी भीड़ इकट्ठी हो गई। नरसिंह मामा भी
उन्होंने बहुत समझाया-बुझाया। खम्मा तो लुकी-छिपी उन
भला कहती ही थी, अब रोते-रोते उनको जली-कटी सुना

नरसिंह मामा यों ही विह्वल थे। उसकी बातें सुनकर वे और भी उदा होकर चले गये।

तब तक अखबार आ चुका था। पेड़ के नीचे बैठे-बैठे मामा जोर से पढ़ना शुरू किया। मल्लिखार्जुन राव की अनुपस्थिति में वे जब कभी गांव में होते, अखबार सुनाते, नहीं तो कर्णं।

समाचार था कि श्री प्रकाशम्, व अन्य आन्ध्र नेता गिरफ्तार क लिये गये थे। वे किसी गुप्त स्थान पर ले जाये गये थे। देश के कई और नेता भी अपने प्रान्तों से दूर कहीं और ले जाये जा रहे थे। नरसिंह मामा और अधिक समाचार न पढ़ सके। कुछ सोचते-सोचते घर चले गये।

थोड़ी देर बाद देखते क्या हैं कि नरसिंह मामा अपनी छड़ी लेकर पुल की ओर जा रहे हैं। जब वे मल्लिखार्जुन राव के मकान के पास गये तो रघू मामा भी उनके पीछे हो लिये।

"तुम यहीं रहो।" नरसिंह मामा ने कहा, पर उनके भाई उनके पीछे चलते जाते थे। उन्होंने मुझे इशारा किया कि मैं सुब्बु मामा को बुला लाऊँ। मैं सुब्बु मामा को जब लेकर गया तो मामा नहर की पटरी पर से कुन्देर की ओर जा रहे थे। रघू मामा ने सुब्बु मामा को नरसिंह मामा के साथ जाने के लिये कहा। वे स्वयं लौट गये।

"देखो, कुछ न करना, दिन अच्छे नहीं हैं, खबरदार।" नरसिंह मामा ने अपने भाई से कहा।

"मामा, आज बड़े मामा इस रास्ते से क्यों जा रहे हैं? कहां जा रहे हैं?" मैंने पूछा।

"विजयवाड़ा। कहीं गिरफ्तार न हो जायें इसलिये?" मामा ने कहा।

"पर वे विजयवाड़ा जा ही क्यों रहे हैं?"

"शायद मल्लिखार्जुन राव को देखने।" उन्होंने कहा।

उस दिन रघू मामा ने अखबार मंगवाकर मुझसे पढ़वाया। कुछ

या पिया भी नहीं ।

वे दोपहर को वुय्युर की ओर निकल पड़े । मामी ने न जाने के लिये हा, पर मामा न माने । मामी भी उनके साथ हो लीं । मामी का हृदय अब हरा था । मामा उनसे हिल-मिलकर रह रहे थे । वे न चाहती थीं कि उनके सुख पर फिर पाला पड़े ।

"तुम घर जाओ ।" मामा ने कहा ।

"मैं आपके साथ आऊँगी ।" मामी ने जिद पकड़ी ।

अगर और कोई समय होता तो मामा मामी को डरा-धमकाकर वापिस भेज देते, मामी ही जिद न पकड़तीं । पर आज मामा एक बार और पूछकर रह गये । "मुझे काम है, मेरे साथ आकर क्या करोगी ?"

"मुझे भी काम है ।" मामी ने अपने मुँह का टीका ठीक करते हुए कहा ।

"क्या ?"

"दोनों वीरम्मा के मन्दिर की परिक्रमा करेंगे, पूजा करेंगे..."

"यहाँ दुनिया जल रही है और तुझे पूजा-पाठ की सूझ रही है । पगली कहीं की ।" मामा हँस दिये । मामी भी मुस्कराईं ।

वुय्युर में मामा ने जो दुकान किराये पर ली थी, वहाँ मामी को बिठा दिया और खुद बस-स्टैन्ड के पास खड़े हो गये । कोई जान-पहिचा का विजयवाड़ा से आता दिखाई देता तो अपने भाई के बारे में पूछ "कहीं वे पकड़े तो नहीं गये हैं ?" वे नरसिंह मामा के बारे में तड़ रहे थे ।

शाम को मामी उनको वीरम्मा के मन्दिर में ले गईं । पूजा परिक्रमा की । मामा भी जैसे वे कहती जाती थीं, करते जाते निश्चिन्त भी थे, क्योंकि मामा की गिरफ्तारी न हुई थी ।

गये। नरसिंह मामा आ चुके थे। वे चिन्तित जान पड़ते थे। पैदल आ
थे। बहुत थके हुए थे।

"तुम दुनिया भर की खबर लेते रहते हो और तुम्हारी खबर कोई
नहीं लेता।" नरसिंह मामा की पत्नी कह रही थीं। वे चुप थे।

"जाने हमारे भाग्य में क्या लिखा है, जवानी इन्तजारी में काट
दी। अब बुढ़ापा भी आ गया और इनकी सेवा की बीमारी नहीं हटी।"

"......" मामा चुप रहे।

"फिर घूमना फिरना शुरू कर दिया है। न खाने-पीने की परवा
न सेहत की फिक्र, मैं नहीं समझ पाती।"

"............"

"इतना किया, क्या किसी ने इस गाँव में या और कहीं, बिना
सूद के तुम्हें कर्ज तक दिया? हो सत्यानाश इस गाँव का और तुम
उसी की दुम पकड़े चलते हो।"

नरसिंह मामा तब भी चुप थे। रघू मामा नीचे मुँह कर के मुस्कराते
लगते थे।

"यहाँ बरबाद हो रहे हैं और तुम्हारे कान पर जूँ तक नहीं रेंगती।
क्या कहूँ? कहते-कहते जिन्दगी गुज़ार दी। पर......"

"..........."

"अब सुनते हैं कि कुछ और चल पड़ा है। तुम जाने के लिए उता
वले लगते हो। कहे देती हूँ कि अगर तुम गये तो मैं भी जाऊँगी। बच्चे
जैसे मेरे, वैसे तुम्हारे भी हैं। मैं नहीं भुगत सकती। देश की मरम्मत करने
वाले हो, पहिले परिवार की मरम्मत तो करलो।"

"हाँ, हाँ ठीक कहती हो। मैंने कब कहा कि मैं जेल जाना चाहता
। जेल जाना चाहता तो लुका-छुपा चोर की तरह विजयवाड़ा न जाता,
आता। तुम बेफिक्र रहो।" मामा ने कहा।

मामी चुप हो गईं। इस तरह रघू मामा की ओर देखने लगीं जैसे
युद्ध जीत लिया हो।

"तुम सम्भल कर रहो, रघू।" नरसिंह मामा ने कहा।

"मल्लिखार्जुन राव का क्या हुआ?" मामा ने मुझसे पुछवाया।

"क्या होता? जेल में हैं। सरकार बड़ी सख्ती बरत रही है। ी को देखने भी नहीं देते। बहुत कोशिश की, पर इजाज़त न मिली। ाखिर जब उनको नहाने के लिये ले जाया जा रहा था, तब दीवार पर ढ़कर उन्हें देख सका। दीवार उतनी ऊँची नहीं है। वे काफी कम-ोर हो गये हैं। उनके घर में कुछ न कहना। वेन्कट सुब्बय्या से मदद करने के लिये कह आया हूँ। पर शायद वे वकील की मदद भी न लें, खतरी हैं। बड़ा परिवार है। खैर, तुम गाँव से बाहर न जाना। पुलिस का राज है।" मामा कह रहे थे और उनकी पत्नी उनकी ओर घूर रही थीं। शायद आश्चर्य हो रहा था कि ये दोनों कब से यों मिले हैं।

मामा, मामी से सटे-सटे सड़क पर जा रहे थे। कई मुँह पर हाथ रखकर देख रहे थे। मदमाती चांदनी थी। मन्द-मन्द हवा, ऐसा लगता था, जैसे कोई नव-विवाहित दम्पति टहलने निकला हो।

सड़क पर आकर, नरसिंह मामा ने मुझे पुकारा। मैं भागा-भागा गया।

"क्या रामय्या गाँव में हैं?" उन्होंने पूछा।

"मुझे नहीं मालूम। होगा ही।"

"हो तो, उसे जरा मेरे पास कल भेज देना। भेज दोगे न?"

"जी हाँ, जरूर।" मैं मामी और मामा के बारे में सोचता-सोचता घर चला गया। ऐसा मालूम होता था, जैसे कोई भटका राहगीर रा पर आ गया हो।

अगले दिन सवेरे नरसिंह मामा रामय्या से अकेले, ता किनारे पीपल के नीचे बातें कर रहे थे। समृद्धि के साथ राम ता था। पर बर्तन की तरह शायद आदमी भी वस

बदलता, सिर्फ कलई ही लगती है। रामय्या पर कलई लग रही थी। यही मेरा मतलब है।

नरसिंह मामा की पत्नी को इस विषय में कैसे बू पहुँच गई थी। वे अपने दरवाजे पर खड़ी हो मामा को कुछ इशारा कर रही थीं। मामा उनके पास गये भी, शायद वे उन्हें समझा आये थे, क्योंकि बाद में वे वहाँ न देखी गई थीं।

रामय्या से बातचीत करके मामा निश्चिन्त से बैठे थे कि वीरवल्ली की तरफ से एक बड़ी कार धूल उड़ाती हुई आई। उसमें वेन्कटेश्वर राव और मुखासादार बैठे थे। वे मामा को देखकर मुस्कराते चले गये। उनकी मुस्कराहट में परिहास था। मामा ने उनकी तरफ नजर उठाकर भी न देखा।

अखबार पढ़ना खतम हुआ तो सब कोई वेन्कटेश्वर राव और मुखासादार के बारे में कानाफूसी कर रहे थे। वेन्कय्या कह रहा था, "आजकल इन रंगे-सियारों का जमाना है। पुलिस भी इन कम्बख्तों के इशारे पर नाचती है।"

"ऐसे हँस रहे थे जैसे सारा संसार इनकी मुट्ठी में ही हो।" किसी और ने कहा।

"हाँ, तो मुकदमे का क्या हुआ ?" वेन्कय्या के साथी ने मामा से पूछा।

"मुकदमा मद्रास के हाई कोर्ट में है, दो-चार दिन में फैसला हो जायेगा। जाने क्या होगा ?" मामा माथे पर हाथ रखकर सोचने लगे। "कहा जाता है कि अदालतों में इन्साफ मुफ्त मिलता है, पर इस इन्साफ की लागत वे ही जानते हैं, जो कंगाल हो जाते हैं, पर इन्साफ तब भी नहीं पाते। खुशकिस्मती से अपना ही वकील है, खर्चा-भर ले रहा है, नहीं तो हजारों रुपये पानी हो जाते।" थोड़ी देर बाद मामा ने कहा।

"मगर रुपया आया कैसे ?" वेन्कय्या ने पूछा।

मामा ने कुछ न कहा। प्रायः सभी गाँव वाले जानते थे कि मामा

अपनी जेब से भी इस मुकदमे पर काफी खर्च किया था।

वीरवल्ली की तरफ से एक व्यक्ति साईकल पर आया। वह पसीने से र था। नरसिंह मामा के घर के सामने वह साईकल पर से उतरा।

"क्या यही नरसिंह प्रसाद जी का घर है? वे हैं क्या?" उस व्यक्ति ने पूछा।

"हाँ, हाँ, मैं ही हूँ। क्यों क्या बात है?" मामा ने घर जाकर पूछा।

"गाँव में राघवेन्द्र राव हैं क्या?" उस आदमी ने पूछा।

"गाँव में नहीं हैं, आप कहाँ से आ रहे हैं?" मामा ने पूछा। रघू मामा सवेरे ही कुन्देर किसी काम से चले गये थे।

"विजयवाड़ा से। उनका घर कहाँ है?"

"उस तरफ पटलापाडु के रास्ते में।" नरसिंह मामा ने रघू मामा के घर की ओर संकेत किया। वह व्यक्ति साईकल लेकर उस तरफ चल दिया और मामा उसकी ओर निरन्तर देखते जाते थे। जब तक रघू मामा के घर से वापिस वह घुग्घुर की ओर न गया, मामा घर के अन्दर न गये, उसे ही देखते रहे।

रात ही रात पुलिस आ गई थी। रघू मामा का घर उन्होंने घे
रखा था। पुलिस वालों में वह व्यक्ति भी वर्दी पहिने खड़ा था,
पिछले दिन मामूली कपड़े पहिन कर नरसिंह मामा के पास आया थ
पुलिस पश्चिम गोदावरी जिले की थी। उनके साथ कृष्णा जिले के
सिपाही भी थे। नरसिंह मामा के घर के सामने उनकी लारियाँ खड़ी

रघू मामा रात को कुन्देर और काटूर होकर लौटे थे।
इसकी शायद खबर भी न थी।

रघू मामा के घर के आस-पास काफी भीड़ जमा हो गई थी
सुना गया कि वेन्कटेश्वर राव अपनी कार में पुल

प्रतीक्षा कर रहे थे। अनुमान लगाया जा सकता था कि कल क्यों हमारे गाँव में से इतनी शान से गुजरे थे। उनके परिहास का अर्थ समझा जा सकता था। शायद पुलिस की यह पकड़-धकड़ उनकी तिकड़मबाजी का ही नतीजा था।

नरसिंह मामा भी वहीं खड़े थे। ब्रह्मेश्वर राव के लिये आदमी भेजे जा चुके थे। सुब्बु मामा भी भीड़ में थे। किसी को कुछ न सूझ रहा था। रघू मामा खटिया पर बैठे थे। अन्नपूर्णा मामी घर के अन्दर सिसक रही थीं।

सब लाचार थे। मुकदमा दायर होने के बाद ही वे जमानत के लिए दरख्वास्त कर सकते थे। पुलिस की मनमानी में अगर नरसिंह मामा दखल देते तो सम्भव था कि उन्हें भी पुलिस साथ ले जाती। उनका जमाना था। शक पर ही लोगों को जेल भेज दिया जाता था।

सूरय्या उचक-उचककर इधर-उधर देख रहा था। उसके साथ गाँव का मुन्सिफ भी था। दोनों पुलिस की दुम बने हुए थे। उनका कहना था, "कहीं डकैती की होगी। जनाब को तो बहुत पहिले ही हवालात की हवा खानी थी। अब पता लगेगा, जेल में चलायें धाँधली।"

कृष्णा जिले के दो-चार सिपाहियों से मामा का परिचय था। पर उन्हें इस बारे में अधिक मालूम न था। नरसिंह मामा शायद अन्दाज भी न लगा पाते थे, क्योंकि रघू मामा की हरकतों पर उन्होंने सख्त पाबन्दी लगा रखी थी। रघू मामा भी सुधर-से गये थे। पहिले की तरह गाँव से कई दिनों गायब न रहा करते थे। पीना भी करीब-करीब छोड़ दिया था।

बहुत पूछ-ताछ करने पर कई दिनों बाद मालूम हुआ कि ताडेपल्लि गूडिम में मालगाड़ी के डिब्बों में चोरी हो गई थी। मामा को उस गिरोह का सरदार समझा जा रहा था, जिसने डकैती की थी। यह भी पता लगा कि प्रकाश राव को न पकड़ा गया था, यद्यपि उनका रघू मामा के साथ साझा था।

सब जानते थे कि रघू मामा ताडेपल्लि गूडिम जाते थे। यह भी

थे कि वे जुए में बहुत पैसे बनाते थे। पर यह कोई न जानता था
किसी गिरोह के सरदार होंगे।

रघू मामा कुछ न बोल रहे थे। वे पत्नी की ओर देखते और नीचे
ाह कर लेते। उनको पुलिस ने नित्य कृत्य से निवृत्त होने दिया।
र उनके हाथों में हथकड़ी डाल दी गई। हथकड़ी के डालते ही अन्न-
र्णा मामी फूट-सी पड़ीं। ...... वे बेहोश होकर गिर गई। सुब्बाराव
उनको अपने घर उठाकर ले गया। नरसिंह मामा भी सिसक रहे थे।
सुब्बु मामा रोते-रोते एक घर में घुस गये।

पुलिस मामा को लारी में चढ़ा ही रही थी कि ब्रह्मेश्वर राव और
उनकी पत्नी भी आ गई। नरसिंह मामा उनको कुछ न कह पाये। सारे
परिवार को दुःखी देखकर रघू मामा भी अपने को न संभाल सके। वे रो
पड़े, नजर हटाकर आगे की ओर देखने लगे।

नरसिंह मामा ने लॉरी के पीछे-पीछे घुय्युर जाना चाहा। पर ब्रह्मे
श्वर राव जी ने जाने न दिया। वे सुब्बु मामा को लेकर खुद चल दिये।
घुय्युर जाने पर पता लगा कि पुलिस की लारी मामा को लेकर विजय-
वाड़ा जा चुकी थी। वे भी विजयवाड़ा चले गये।

यह सारी घटना गाँव वालों के लिये गोरख-धन्धा-सी थी। किसी को
कुछ सही-सही समझ में न आ रहा था। नरसिंह मामा चुप थे, बर्फ की
तरह। अन्नपूर्णा मामी को वे सुब्बाराव के घर से अपने घर ले गये।

रघू मामा की गिरफ्तारी के बाद मुखासादार भी वेन्कटेश्वर राव
की गाड़ी में आये। उनके आते ही उनके खुशामदी इकट्ठे हो गये।

संयोग की बात थी। मुखासादार को उसी दिन उनके वकील
खबर मिली कि वे मुकदमा जीत गये हैं। अब गाँव की जमीन के वे
कानूनी मालिक थे। उनके घर दीपावली-सी थी। नरसिंह मामा को
खबर मिली, उनके घर में राहु का राज्य था।

यूनिवर्सिटी बन्द करदी गई। मद्रास से प्रसाद, वाल्टायेर से अ...
राव, सुजाता वगैरह सब घर वापिस आ गये थे। पुलिस की पकड़-ध...
के बावजूद, 'भारत छोड़ो' आन्दोलन बढ़ता जा रहा था। कु...
बेकाबू-सा भी हो गया था।

नरसिंह मामा पर एक और नई चिन्ता आ पड़ी थी। वेन्कय्या औ...
मुखासादार के आदमियों में लाठी चलते-चलते बची। शायद मुखा...
सादार का अपनी विजय मनाने का तरीका भी अजीब था। एक मस्त...
बिदके हरये बैल की तरह थे वे।

पिछले दिनों बारिश हुई। खेतों में धान बोया जा चुका था। इतन...
पानी बरसा कि खेतों में से पानी बाहर निकालना पड़ा। यह खेती-बा...
में मामूली-सी बात थी।

पर मुखासादार ने अपने खेत का पानी मेड़ काटकर वेकन्य्या के...
खेत में छोड़ दिया। पहिले और खेतों का पानी उनके खेत में आता...
था, खाली जगह थी, नहर की ओर बह जाता था। वेन्कय्या के खेत में...
अभी धान ठीक तरह न जमा था। पानी के साथ काफी धान भी बह...
गया। वेन्कय्या के खेत में से पानी और खेतों में भी छलक गया।...
लोगों ने हो-हल्ला मचाया। वेन्कय्या ने जाकर मुन्सिफ से शिकायत क...
पर उसने सिरदर्द का बहाना किया।

वेन्कय्या ने न आव देखा न ताव। वह अपने चार दोस्तों के...
लेकर पहुँचा। मेड़ भर दी। मुखासादार की जमीन जरा ऊँचाई पर थी।...
इसलिए उसमें पानी छोड़ा नहीं जा सकता था। उन्होंने उसमें लगा-
लगाया धान उखाड़ फेंका। मुखासादार के आदमी भागे-भागे आये।
दोनों में तनातनी बढ़ी, गालियाँ परोसी गईं। मुट्ठियाँ भी बँध जातीं
अगर मुखासादार स्वयं न आते। उन्हीं की करतूत थी, उन्होंने ही बीच-
बचाव किया। वेन्कय्या के साथियों को देखकर उनका दिल बैठ गया।
लक्ष्मय्या भी उन्हीं में थे। ये लक्ष्मय्या के मुख न लगना चाहते थे।
अलावा इसके, जो वे करना चाहते थे, वे कर ही चुके थे

न्कय्या आदि नरसिंह मामा के पास पहुँचे। उनके साथ लक्ष्मय्या
। पर वे एक और अजीब झमेले में थे। रामस्वामी और दो-चार
के महाजन उनके पास बैठे थे। उनके हाव-भाव से साफ मालूम
था कि पैसों का तकाज़ा हो रहा है।

वेन्कय्या ने उनसे शिकायत की। और कोई समय होता तो मामा
ट उठकर चल देते। पैसे की तंगी तो हमेशा रहती ही थी। परन्तु वे
रघू मामा की गिरफ्तारी से सर्वथा व्याकुल हो गए थे। उनको जेल में
डाल दिया गया था। सिर्फ वे यह ही जानते थे। ब्रह्मेश्वर राव और
सुब्बु मामा अभी तक न लौटे थे।

"राघवैय्या जी क्यों पकड़े गए हैं?" लक्ष्मय्या ने पूछा।

"शायद इस आन्दोलन के सिलसिले में ही।..." मामा हर किसी
को यही जवाब दे रहे थे, यद्यपि वे भलीभाँति जानते थे कि रघू मामा की
गिरफ्तारी का कारण कुछ और था। खून का रिश्ता था। खुद अपने-
आप अपने भाई को कैसे बदनाम करते?

थोड़ी देर बाद मामा ने कहा, "अच्छा भाई वेन्कय्या, अब तो खींच-
चाव हो गया है। फिर देखा जायगा।" वेन्कय्या ने कोई जवाब न
देया। उसे शायद ऐसा लग रहा था कि नरसिंह मामा के पास जाकर
उसने उस समय गलती की हो।

"अगर तुम वीरवल्ली जा रहे हो तो रामय्या को जरा मेरे पास भेज
देना।" नरसिंह मामा ने कहा।

नरसिंह मामा रामय्या को लेकर गुग्गुर गए। उनके हाथ में कु
कागजात थे। साथ कोई न था। रामय्या को लेकर नरसिंह मामा
भी कहीं न गए थे। सबको अचरज हो रहा था। रामय्या ने गाँव के
चौधरियों की तरह जरीदार साफा बाँध रखा था। साफ कुरता
हा था। पसीने से तर, कन्धे पर पतली लाठी, विचित्र वेश था

मामा से दो कदम पीछे ही चल रहा था। उनके साथ कदम-से-कदम मिलाकर चलने की हिम्मत अभी तक न हुई थी।

हर रोज की तरह अखबार आया, पर पढ़ने के लिए मामा न थे। लोगों में गप्पें चलीं। "लालच की भी हद होती है। इस रामस्वामी ने नरसिंह जी की नाक में दम कर रखा है। उससे भला तो यह पादरी है, जो दोस्ती निभाना तो कम-से-कम जानता है। वक्त पर पैसे देता है और सूद भी नहीं ऐंठता।" वेन्कय्या कह रहा था।

"मल्लिखार्जुन राव के यहाँ फाके हो रहे हैं। अब बेचारा राघवैय्या भी नहीं है। सुनते हैं, उस बेचारी ने अपनी लड़की का जरीदार लहँगा गिरवी रखकर रामस्वामी से दो-चार रुपये ले लिए हैं। किसी ने कभी उसे यह तोहफा दिया था।" बूढ़े कोटय्या ने कहा।

"यह गलती से चौधरियों में जन्मा है। क्या खराब नीयत का आदमी है? गिद्धों की तरह मुर्दों को ही अपना शिकार बनाता है, स भुगतेगा।" वेन्कय्या ने कहा।

"जी, राघवेन्द्र राव जी का क्या हुआ?" चमार वेन्कट ने पूछा।

"वही, जो औरों का हो रहा है। आजकल तो कितने ही पकड़े जा रहे हैं, सरकार के खिलाफ आवाज उठाई नहीं कि गला बन्द कर दिया जाता है, जेल में डाल दिया जाता है।" वेन्कय्या ने कहा। मुझे अच-रज होता था कि क्यों वे इस तरह रघू मामा को आन्दोलन में ले-लपेट रहे थे।

"अपना बाग गिरवी रख रामस्वामी से परसों रामय्या पाँच-छः हज़ार ले गया था। वुय्यर में सुना है, उसने दो-तीन हज़ार और पैदा कर लिए, कुछ मामला जरूर है।" कोटय्या ने कहा।

बातें करते-करते उठकर चले गए।

हमारा स्कूल दो-चार दिन के लिए खुलता, फिर कुछ गड़बड़ी होती और पांच-दस दिन के लिए बन्द कर दिया जाता। यही क्रम बहुत दिनों तक चलता रहा। हम गाँव में मटरगश्ती करते। घूमते-घूमते, हम पुल

स चले जाते । और कहीं जाने को कोई जगह न थी ।
वीरस्वामी की याद आई, बड़ा मजेदार जीव था । वह भी किसी जेल
बढ़ रहा था । घाट पर उसकी पत्नी, अपने देवर वेन्कटस्वामी के
थ हँसी-मखौल कर रही थी । विपत्तियाँ, या वियोग उनके लिए शायद
मारियाँ थीं, जो जब आतीं तो रो-धो लेते, फिर जब ठीक हो जातीं तो
वही पुराना रवैय्या ।

घूम-फिर कर जब शाम को नरसिंह मामा के घर के सामने से गुजरे तो वे बाहर तालाब के पास बैठे थे । रामस्वामी, पादरी, यलमरु के दो-तीन आदमी, बुय्युर का मारवाड़ी, उनके पास खड़े थे । मामा पुराना हिसाब चुकता कर रहे थे ।

अँधेरा होने से पहले ही महाजन अपनी-अपनी थैलियाँ सँभाल कर चले गये । मामा ने सन्तोष की लम्बी साँस खींची । बाकी रुपया घर में रखने गये ।

"इतना रुपया कहाँ से आया है ?" उनकी पत्नी ने पूछा ।

"दो एकड़ जमीन रामय्या को बेच दी है ।"

"अरे, कर दिया सत्यानाश ? इस बार कहा भी नहीं, मुझे मारा ही, अब अपने बच्चों को भी मार रहे हो । यही तुम्हारी सेवा है ? चोरी-चोरी सब बेच आये ।" नरसिंह मामा की पत्नी चिल्लाती रहीं और मामा फिर बाहर चले गये ।

इससे पहले कि ब्रह्मेश्वर राव जी या सुब्बु मामा कुछ कहते, नर
मामा की पत्नी ने अपना रोना शुरू कर दिया । पैर धोने के लिए
पानी तक न दिया । मामा हैरान थे ।

"इन्होंने आपकी भी न सुनी । उस कमीने को जमीन बेच
अब हमारा क्या होगा ? कम-से-कम पूछ तो लिया होता ।"

"पूछ लिया होता तो जमीन बिकी न होती । औरतों को

परली तरफ की चीज भी नहीं दिखाई देती······।" मामा कह रहे थे।
"तुम बहुत दूर की देखती हो, तभी तो बच्चों के मुँह से कौर निकाल रहे हो।"
"क्या कहती हो?"
"सच कहती हूँ। ······बच्चों की फिक्र होती तो तुम यह कभी न करते। अब मैं क्या करूँ?" उनकी पत्नी रोती जाती थीं। "और किसके सामने रोऊँ? तुम्हारे बच्चे, भाई तो तुम्हारी बे-दिली देखें। देश की सेवा करने चले हो।"
"क्यों घबराती हो, अभी तो एक एकड़ बाकी है।"
"तीन एकड़ में गुजारा नहीं हुआ और अब एक एकड़ में होगा बहुत दूर की सोचते हो न?"
"आखिर तुमने जमीन क्यों बेच दी?" अहलेश्वर राव ने पूछा।
"क्या करता? जमाना अच्छा नहीं है। मुझे लगता है कि पुलिस मुझे भी बाहर न रहने देगी। जब एक बार जेल में डाल देगी तो न जाने वहाँ कितने दिन रहना पड़ जाय और इस बीच में सूद बढ़ता जायगा। क्या फायदा?" नरसिंह मामा कह रहे थे।
"अगर जेल न भेजे गये तो······?"
"जब इतनों को घसीट ले जा रहे हैं तो क्या मुझे छोड़ देंगे?"
"इतनी जल्दी क्या थी? कम-से-कम हमें तो आने देते?"
"तुम्हें आने देता तो जमीन न बिकती। एक बार कोशिश की, पर सबने रोक दिया। मुझे रिश्तेदारों की सुननी चाहिए, पर···खैर···।"
"अगर बेचनी ही थी तो रामय्या को ही क्यों बेची? शायद सुब्बु ही खरीद लेता।"
"जाने दो, बेचारा रामय्या गरीब मेहनती आदमी है। पास ही उसका खेत है। आराम से जिन्दगी बसर कर लेगा।"
"यह दया हम पर क्यों नहीं दिखाते?" नरसिंह मामा की पत्नी ने कहा।

"पर अब बच्चों का क्या होगा ?" ब्रह्मेश्वर राव ने पूछा।
"बच्चे अच्छे-भले रहेंगे। उन्हें बाप का बढ़ा-चढ़ा कर्ज न चुकाना
ा। भाई, उन लोगों के बच्चे भी तो जीते हैं, जिनके पास सेंट-भर
मीन नहीं है। भगवान् जो करते हैं, अच्छा करते हैं। योरुप में कितने
ी बड़े धनी, जमींदार कंगाल हो गये हैं, बेघरबार हो रहे हैं। उनके भी
बच्चे हैं, वे भी तो जी रहे हैं। युद्ध में किसका क्या ठिकाना ! जाने
दो। खैर, रघू के बारे में बताओ।" नरसिंह मामा ब्रह्मेश्वर राव का
हाथ पकड़ कर घर के बाहर, तालाब के किनारे, पेड़ के नीचे ले गये।
मामी कह रही थीं, "इन बातों का क्या कहना ? बातें करते-करते
जिन्दगी बरबाद कर दी। बातों से कोई दाल-भात नहीं देता।"
"रघू का मामला बहुत पेचीदा है। प्रकाश राव ने, जो उसका
दोस्त बना फिरता था, उसे दग़ा दे दिया है। यह वेन्कटेश्वर राव भी
अव्वल दर्जे का चलता पुर्जा है। छुपे-छुपे उसने हमारी जड़ें काट दीं।
प्रकाश राव से व्यापार में साझा कर लिया, बहुत पैसा दिया। और
उधर पुलिस को उनके भेद बता दिये। ज़हरीला आदमी है। प्रकाश
राव सरदार था, रघू भी गिरोह में था।" ब्रह्मेश्वर राव कह रहे थे।
"मैंने लाख कहा कि अपनी जिन्दगी सुधारो, पर वह सुने तब न।
अब सब की नाक काट रहा है। खैर, बताओ।" नरसिंह मामा ने कहा
"कोई ऐसा ऐब नहीं, जो प्रकाश राव न करते हों। क्या जुए बाज़
क्या घूसखोरी, क्या डाके, क्या चोरी, मालगाड़ी के डिब्बे भी लुटव
थे। जाली नोट बनाने से भी न चूके।"
"हाँ, तो आगे।"
"पुलिस ने प्रकाश राव को गिरफ्तार करना चाहा, पर वह
पानी की तरह बहा कर अलग हो गया। जाते-जाते, उसने रघू को
दिया। अब रघू को गिरोह का मुखिया माना जा रहा है। जा
क्या गुनाह उस पर थोपे गये हैं। हमने जमानत पर छुड़ाने की
की, पर पुलिस राजी न हुई। कहा कि मामला संगीन है, छोड़ ि

तो मुकदमा कुछ-का-कुछ हो जायेगा।"

"अपने वकील को भेजा है कि नहीं?"

"भेजा है। विजयवाड़ा में वेन्कटसुब्बय्या को कह आया हूँ। ए
का भी एक वकील काम कर रहा है। पैसा लगेगा ही, पर इसको जेल
कैसे रहने दिया जाए?"

"पर क्या रघू प्रकाश राव का नाम नहीं बतायेगा?"

"वकीलों ने उसे बहुत समझाया कि वह प्रकाश राव का नाम भ
घसीटे। पर वह मानता ही नहीं है। बुरी ज़िद कर रहा है। खब्ती है
कहता है, प्रकाश राव के नाम से मैं तो छुटूंगा नहीं, फिर उसको क्यों
घसीटा जाये? सालों का साथ है, काम में साझा था, अब धोखा दिया
है, तो वह भी भुगतेगा। जो मैंने किया है, मैं भुगतूँगा। कभी-न-कभी
तो जेल पहुँचना ही था......"

"वह पिछले दिनों बहुत बदल गया था। कमलवेणी के जाने के
बाद वह सुधर रहा था। जेल जाये बगैर भी वह दूसरा आदमी बन कर
रहता। अच्छा।" नरसिंह मामा अधिक न कह पाये। आवाज न निकली।
ब्रह्मेश्वर राव की साँसें भी जल्दी-जल्दी चल रही थीं।

थोड़ी देर बाद नरसिंह मामा ने पूछा, "तो वकील की वह न सुनेगा।
गुनाह कबूल करने पर तुला हुआ है क्या?"

"हाँ, पर वह तो पारे की तरह बदलता रहा है। आज कुछ सो-
रहा है तो कल कुछ और सोचेगा। हम कोशिश करके देखेंगे।"

"उसने और कुछ कहा था क्या?"

"हम जाने को तैयार हुए तो वह रो पड़ा। कहने लगा कि भ
साहब को और आपको मैंने बहुत कष्ट दिये हैं। अब भी दे रहा हूँ। मैं
हमेशा करना कुछ चाहा और कर कुछ बैठा, माफ कीजियेगा। भाईसाह
से कहना कि अन्नपूर्णा को उनके भरोसे छोड़ आया हूँ। मैं उसके लायक
नहीं हूँ। वह और न कह सका।" ब्रह्मेश्वर राव का भी कहते-कहते
गला रुँध गया।

मामा घुट-घुट कर रोने लगे। लम्बी-लम्बी साँसें लेते, दूर देखते, रोने
रुकने का प्रयत्न करते, पर रोते जाते।

कुछ देर बाद ब्रह्मेश्वर राव ने कहा, "तुम यहीं रहो, मुञ्चु भी यहीं
ा। मुझे फिर वापिस ताडेपल्लिगूडिम जाना है। कादूर में थोड़ा-
ुत काम है, वह पूरा करके कल सवेरे चला जाऊँगा। इस बीच रघु
कपड़े घर से मंगवा लेना।"

"अन्नपूर्णा यहीं है, उससे कहते जाओ।" मामा ने कहा।

"मैं न कह सकूँगा, तुम ही कह दो।" ब्रह्मेश्वर राव का यह कहना
था कि नरसिंह मामा फिर फूट-फूट कर रोने लगे।

गाड़ी कादूर की ओर चलती जाती थी और मामा देखते जाते थे।
बच्चों की तरह सिसकियाँ भर-भर कर रोते जाते थे।

यद्यपि कर्णं ने गाँव की गुटबन्दी से किनारा कर लिया था तो भी,
सूरय्या, मुखासादार, मुन्सिफ़ वगैरह उनके पीछे हाथ धोकर पड़े हुए थे।
उनके विरुद्ध कई शिकायतें की गईं थीं।

उनका कसूर सिर्फ इतना था कि वे नरसिंह मामा का साथ देते
आये थे। उनको मुखासादार की ऊटपटांग हरकतें पसन्द न थीं। ब्राह्मण
होते हुए भी वे उनमें न खपते थे। भले आदमी थे और भलमनसाह
के लिये इस दुनिया में बड़ी कीमत देनी होती है।

रेवेन्यू इन्स्पेक्टर तहकीकात करने आये। कर्णं भागे-भागे मामा
पास गये। रेवेन्यू इन्स्पेक्टर मामा के पुराने मित्र थे। वे जानते थे
कर्णं निर्दोषी हैं, हिसाब में भी कोई गड़बड़ी न थी। शिकायतें
पर उनका आना जरूरी था, इसलिये वे आगये थे। मामा ने
बातचीत भी करली थी। उन्होंने थोड़ी बहुत पूछ-तलब की, अपनी
लिखी और चले गये।

उनके जाने के बाद रामय्या अपना रोना रोने आया। उस

तैसे जमीन तो खरीद ली थी, पर लगता ऐसा था, जैसे मामा को चिढ़ाने के लिये वह जमीन मुखासादार खुद खरीदना चाहते थे। रामय्या कहने लगा, "आपके पिता जी ने मुझे इस गाँव में आश्रय दिया था और आपकी दया से मैं जमीन वाला भी बन गया हूँ। परन्तु अब यह नौबत आई है कि शायद मुझे गाँव छोड़ कर ही जाना पड़े।"

"क्यों, क्या बात है?"

"क्या बताऊँ? बताते हुए शर्म आती है, पर जो बात सारा गाँव जानता है, आप भी जानते होंगे?"

"नहीं, मैं कुछ नहीं जानता हूँ।"

"मुखासादार बड़ा लुच्चा आदमी है।"

मामा मुस्करा दिये।

"हाँ, साहब, उनका भी नमक खाया है, कहना अच्छा नहीं है। पर उन्होंने भी हम से सूद वसूल कर लिया है। मेरी इच्छा नहीं कि वे पद्मा से भी छेड़-छाड़ करें। मैं उसकी शादी कर देना चाहता हूँ। उसकी मां भी झुँझलाई हुई है। वह भी मुखासादार से तंग है, चिढ़ी हुई है। मुखासादार नाराज हो गये। हमारा झोंपड़ा उन्हीं की ज़मीन पर है। उन्होंने अब जगह खाली करने के लिए कहा है। मेरी पत्नी इसके लिये भी तैयार है। पर मुखासादार जाने क्या-क्या करें। जब उन्होंने सताने की सोची है, तो गरीब को हजार तरीकों से सताया जा सकता है। पैसे वाले हैं। अब मेरी पत्नी भी बदल रही है, माल-मिल्कियत का मद, शायद स्त्रियों को जल्दी चढ़ता है। खैर, आप ही मदद कर सकते हैं।"

"क्या मदद चाहते हो?"

"झोंपड़ा डालने के लिये मुझे कहीं जगह दिलवा दीजिये। आपके कहे बगैर मुझे यहाँ कोई दो इंच जमीन भी न बेचेगा। खेत में अकेले रहने की हिम्मत नहीं होती। आपकी ही दया है, मेहरबानी हुई तो मैं भी कहीं एक छोटा-सा घर बना लूँगा।"

"हमारे मकान के परली तरफ जमीन है, रामस्वामी की है। उन्हें
र रुपये अधिक दोगे तो वे बेच देंगे।" मामा ने कहा और वह
जोड़ता, सड़क के किनारे जमीन देखता चला गया।

शाम को एक विचित्र घटना घटी। कमलवेणी की मां काद्रूर की
र गाड़ी में जा रही थी। हम भी उत्सुक हो उसकी गाड़ी के पीछे हो
ये। सुब्बाराव उसको पुल के पास दिखाई दिया। गाड़ी रोक कर वह
उससे बातें करने लगी।

"बेटी अकेली है। वह तुम्हारा ओवरसीयर कम्बख्त भी छोड़ कर
भाग गया है। वह तो पत्नी के सामने सूखे पत्ते की तरह कांपता है।"

"कहाँ जा रही हो?" सुब्बाराव ने पूछा।

"काद्रूर,......वेन्कटेश्वर राव के पास, सुना है, उन्होंने राघवैय्या
को जेल में डलवा दिया है।" वह बुढ़िया कुछ कहना चाहती थी कि
सुब्बाराव ने हमें भगा दिया।

कमलवेणी की माँ, हम जानते थे, लोमड़ी की तरह चतुर थी।
वेन्कटेश्वर राव की नीयत को भी वह खूब जानती थी शायद। वे उन
दिनों ऐसी मूड में थे कि रग्घू मामा को छेड़ने के लिए वे सब-कुछ करने
के लिए तैयार थे। आखिर वे दूध के धुले तो थे नहीं।

यह दुनिया भी अजीब है। कोई नीचे गिरता है तो उसको पैरों
तले रौंद कर चलने के लिए कई जलूस तैयार हो जाते हैं। जानवर
मरता है और गिद्ध उसको खा-खा कर जीता है।

ब्रह्मेश्वर राव के मना करने पर भी नरसिंह मामा उनके साथ त
पल्लि गूडिम चले गये। उनकी पत्नी ने तो सत्याग्रह ही शुरू कर दि
बाद में सुना गया कि भाई के बहुत कहने-सुनने पर भी मामा प्र
राव का नाम बताने को राजी न हुए। यह भी कहते सुना गया
ने को भी न माने कि वह सब-कुछ उन्होंने नहीं कि

जिसके लिए उन्हें दोषी ठहराया जा रहा था। उनमें विचित्र परि
आ गया था। वे मझधार में डांवाडोल होने वाले व्यक्ति न थे,
उस पार नहीं तो इस पार।

कुछ हद तक यह अनुमान किया जा सकता था कि उनमें यह
वर्तन क्यों आया था। उनके मन में क्या गुजर रहा था, यह निश्
रूप से नहीं जाना जा सकता था। सम्भव है कि बढ़ती उम्र के साथ
भी बदल गये हों। या जो कुछ उन्होंने किया था, उसकी तुच्छता अ
भव करने लगे हों। यह भी असम्भव न था कि सच बोल कर वे अप
भाई पर प्रभाव डालना चाहते हों।

उनकी यही टेक रही कि 'अगर एक आदमी गधा बन रहा है, तो
मैं क्यों बनूँ?'

नरसिंह मामा उनसे यह कहलाना चाहते थे कि वे अकेले ही गुनाह-
गार नहीं। वस्तुतः प्रकाश राव ही गिरोह का सरदार था। यह सच था।
उन्हीं की देख-रेख में लूट वगैरह होती थी। रग्घू मामा को शायद लूट
का कुछ हिस्सा मिलता था। उनके भाई यही चाहते थे कि वही इल्जाम
वे कबूल करें, जो उन्होंने किये थे। प्रकाश राव के कारनामे अपने मत्थे
न डालें। इससे सजा कम होने की सम्भावना थी। पुलिस ने दुनिया-
भर के इल्जाम, पुराने-नये, सच्चे-झूठे, उन पर थोप रखे थे।

आखिर रग्घू मामा इतना मान गये कि झूठे इल्जामों का सह
जवाब देंगे। नरसिंह मामा अपने भाई की वकालत में कोई कसर न
छोड़ना चाहते थे। जो कर्ज चुकाने के बाद धन बचा था, वे वकीलों पर
बरसा रहे थे। अच्छे-से-अच्छे वकील लगाये गये थे, ब्रह्मेश्वर राव भी
पैसा फेंक-से रहे थे।

सुनवाई शुरू हुई, रग्घू मामा अदालत में खड़े किये गये। कचहरी
खचाखच भरी हुई थी। वकीलों ने भी मामला इस तरह चलाया कि
पुलिस की धांधली न चल सकी। उनके दो-चार गवाह वकीलों की
चांदमारी के सामने गड़बड़ा गये थे। पुलिस का पलड़ा हल्का पड़

हा था।

यह भी सुना गया कि नरसिंह मामा के वकील कचहरी के बाहर वाहों से बातचीत कर रहे थे। जो कुछ इस सिलसिले में लेना-देना होता था, ब्रह्मेश्वर राव कर देते थे। नरसिंह मामा और ब्रह्मेश्वर राव को यह ढाढस बँध रहा था कि अगर रघू मामा को सजा मिली भी तो अधिक न होगी।

मगर प्रकाश राव आदि के पैर उखड़ रहे थे। उनकी मदद के लिए वेन्कटेश्वर राव भी पहुँच गये। दोनों को पुलिस की सहायता मिली हुई थी। कहते हैं, पैसे की झनझनाहट मुर्दों के मुँह से भी लार टपकाती है, पर पुलिस अफसर तो ठहरे चोरों के चचेरे भाई। सब को दया कर घूँस दी जा रही थी।

प्रकाश राव को यह डर सता रहा था कि कहीं रघू मामा उनका नाम न बता दें। नरसिंह मामा के आने से तो वे और भी घबरा गये थे। पहली सुनवाई ने जो करवट बदली तो उनको अपनी चालबाजी, नाकेबन्दी, ठप होती नजर आई।

बहुत दौड़-धूप करने के बाद उन्हें एक उपाय सूझा। वेन्कटेश राव ने कई साँप मारे थे और लाठी भी न तोड़ी थी। उन्होंने एक च चलने की ठानी।

'भारत छोड़ो' आन्दोलन तो चल ही रहा था। नरसिंह कृष्णा जिले के प्रमुख काग्रेसी थे। पुलिस को फुसलाया गया कि नरसिंह मामा वहाँ रहेंगे तो इतने बड़े मुकदमे में उनको मुँह की पड़ेगी। और अगर मुकदमे में कामयाबी न हुई तो तरक्की तो उनकी फजीहत भी होगी। और अगर नरसिंह मामा को पक गया तो उनकी नामवरी भी होगी और तरक्की भी मिलेगी।

वेन्कटेश्वर राव की फुसलाहट में पुलिस वाले आ गये मामा ने किया ही क्या था कि उनको गिरफ्तार करते? ब पर कोई इल्जाम न मिला। आखिर इधर-उधर की,

बातें इकट्ठी कर ली गईं, बढ़ा-चढ़ा कर सरकार को रिपोर्ट भेजी गई। उनको देखते-देखते डेटेन्यू बना दिया गया और उन्हें नजरबन्द कर लिया गया। इसके लिए न मुकदमे की जरूरत थी, न फैसले की।

वेन्कटेश्वर राव इस पैंतरेबाजी में लगे हुए थे और उनके वकील, रघू मामा के मुकदमे की तारीखें बढ़वाते गये।

नरसिंह मामा को जेल भेज कर प्रकाश राव और वेन्कटेश्वर राव फूले न समाते थे। एक ही रात में सरकारी अफसरों को एक-डेढ़ हजार रुपये की कीमती शराब पिला दी गई। पैसा बहुत गजब ढाता है, बड़ों-बड़ों को भी यह नकेल डाल कर घसीटता है।

ज्यों-ही नरसिंह मामा की गिरफ्तारी की खबर गाँव में मिली, तो उनके रिश्तेदार और सुब्बु मामा ताडेपल्लि गूडिम भागे, पर तब तक वे वेल्लूर जेल पहुँचा दिये जा चुके थे। लाचार हो उन्हें गाँव वपिस आना पड़ा।

सारी जिम्मेदारी ब्रह्मेश्वर राव पर आ पड़ी। अदालतों का उन्हें कोई अनुभव न था। भोले-भाले, सीधे-सादे आदमी थे। जो-कुछ उनसे बन सकता था, वे करते जाते थे।

गाँव में रोज अखबार आता। कोई पढ़ने वाला न था। तालाब के किनारे, पेड़ के नीचे लोग पहले की तरह जमा भी न होते थे। सब डर गये थे। नरसिंह मामा के घर रोना बना रहता।

दुःख हो, सुख हो, समय चलता ही जाता है। पर क्या समय जानता है कि उसके पदाघात से अगर अंकुर पल्लवित होते हैं, तो कितने ही हरे-भरे वृक्ष धराशाई भी हो जाते हैं? शायद नहीं। वह आँखें मूँदे चलता जाता है। आदित्य के रथ में भी तो आखिर अन्धे अश्व ही जुते हैं।

तृतीय परिच्छेद

एक दिन मैं प्रसाद से मिलने गया। कालेज खुल गया था, पर वह अभी वापिस जा नहीं पाया था। सुब्बु मामा ने उसे भेजने का आश्वासन दिया था। वे अपना आश्वासन निभा न पाये। पैसे की तंगी थी। वे अपनी पत्नी पर इतने आश्रित थे कि रुपये दो रुपये के लिये भी उनके सामने इन्डेन्ट पेश करनी पड़ती थी।

अन्नपूर्णा मामी आँगन में वर्तन माँज रही थीं। मामी के लिये यूँ तो खाली बैठना कठिन था। अब चूँकि वे जेठ के घर में रह रही थीं, इसलिये वे और भी जी तोड़ मेहनत कर रही थीं। मगर नरसिंह मामा की पत्नी उन पर बात-बात पर उबल पड़ती थीं।

प्रसाद की माँ वायुसुता के बाल संवार रही थीं। मामी को देखकर जाने क्यों उनकी जबान मचलती थी। बात-बात पर उबल पड़ती थी।

"यह जब से आई है कोई काम कभी ठीक नहीं होता..."

"माँ, चुप भी रहो, चाची क्या सोचेंगी?" वायुसुता अपनी माँ से कह रही थी।

"चुप रह तू। इसी की बदौलत राघवैय्या बिगड़ा। अब जेल में पड़ा है।" उसकी माँ ने कहा।

"जेल में पड़े हैं तो इसमें चाची का क्या कसूर है?" वायुसुता ने पूछा।

"और किसका है? अब इस घर में पैर रखा और तुम्हारे पिताजी को भी पुलिस जेल में ले गई। जहाँ जाती है। वहीं सत्यानाश करती है।"

यह सुन अन्नपूर्णा मामी जरा चौंकीं। सिर उठाकर नरसिंह मा
की पत्नी की ओर देखा, पर वे कुछ बोली नहीं। फिर यथापूर्व अप
काम करती चली गईं।

"देखती क्या है, सच ही तो कह रही हूँ। पैदा होते ही मायके
बिगाड़ा और शादी करके ससुराल को।" नरसिंह मामा की पत्
जबानी कोड़े लगाती जाती थीं।

हम सुनने वालों का ही ये बातें सुनकर दिल दहल रहा था। प्रसा
ने तो अपने कानों पर हाथ रख लिये थे। वह अपनी माँ के व्यवहार से
तंग था। भगवान जाने मामी के मन में क्या बीत रही थी। वे भी चाहतीं
तो कड़वी बातें निकाल सकती थीं। पर ख्वाहम-ख्वाह झगड़ा बढ़ता।
अन्नपूर्णा मामी लहू का घूँट पीकर रह गईं।

काम हो गया, भोजन आदि की तैयारियाँ होने लगीं, पर अन्नपूर्णा
मामी आँगन में ही उदास बैठी थीं। उनकी आँखों से आँसुओं की झड़ी
लगी हुई थी।

"रोकर किसे डराती है? खाना हो तो खा ले, नहीं तो तेरी मर्ज़ी।"
नरसिंह मामा की पत्नी ने कहा।

अन्नपूर्णा मामी उठी नहीं। शायद उनकी खाने की इच्छा नहीं थी।
इतनी सुन-सुनाकर भला किसकी भोजन करने की इच्छा होती?

"ये हथिनी के चोंचले मेरे सामने नहीं चलेंगे। खाना हो तो खा
लो। घर में रखती हूँ, यही काफी है।" नरसिंह मामा की पत्नी डंक
मारती जाती थीं।

अन्नपूर्णा मामी कुछ देर तो चुप रहीं, फिर खाना खाने के लिये
अन्दर चली गईं। शायद सोचा होगा कि न खाने से मामला अधिक
बढ़ेगा। रोज़मर्रे की यही बात थी।

मैं प्रसाद से बातें करने गया था। उस मितभाषी से बातें करना
कठिन था। उसको सांत्वना देना भी कठिन काम था। अगर कोई
उससे नरसिंह मामा के बारे में कहता तो वह आँसू टपकाने लगता।

वह खुशी-खुशी कालेज भेजा गया था, गये हुए महीने-दो महीने भी न हुए थे कि पैसे की तंगी के कारण पढ़ाई जारी रखना मुश्किल हो गया। यह भी सुना गया कि वह नौकरी की तलाश में था ताकि उसके पिता की जिम्मेवारी कम हो।

जैसे-तैसे बुय्युर के मारवाड़ी से सुब्बु मामा सौ डेढ़-सौ रुपये ले आये थे। पर प्रसाद कालेज जाने के लिये तैयार न था।

उन दिनों 'भारत छोड़ो' आन्दोलन उसी तरह चल रहा था, जिस तरह कपड़े में आग जलती है। बाह्य रूप से हिंसामय कार्यवाही लगभग रुक चुकी थी।

वाल्टायेर में कालेज खुल गये थे। प्रसाद ने जिद करके वह रुपया अपने बहनोई को दिलवा दिया। अप्पाराव उसी दिन चले गए। वायुसुता अपने घर में ही थी। वह चलमरू न गई।

सुब्बु मामा ने जिम्मेवारी कभी सम्भाली न थी। छोटी-छोटी बात पर भुँभला उठते थे। वे अकेले थे, इधर खेती भी देखनी होती थी और उधर घरबार की परवाह भी करनी होती थी। मुखासादार, नरसिंह मामा को गाँव में न पा उन्हें और सता रहा था। मजदूरों को भी डरा-धमका कर उनके यहाँ जाने नहीं देता था।

"प्रसाद, तुम जाओ। मैं कहता हूँ कि पैसे की फ़िक्र न करो।" सुब्बु मामा ने कहा।

प्रसाद चुप रहा।

"एक साल जाया होता है। तुम्हारे पिता जी क्या सोचेंगे?" सुब्बु मामा कह रहे थे। उनकी भाभी इस बीच में बोल उठीं।

"हाँ, बेटा, तुम्हारे पिता के बाद तुम ही हो। वक्त खराब करना अच्छा नहीं है, पैसे की तंगी जरूर है, पर पढ़ना तो होगा ही। ज़मीन तो रही नहीं कि बगैर नौकरी किये पेट भरा जा सके।" प्रसाद की माँ

शायद और कहती पर प्रसाद उठकर बाहर जाकर बैठ गया। वह पशोपे
में था। सुब्बु मामा भी झुँझलाकर चले गये।

शाम को मैं अपने घर के सामने बैठा था। देखता क्या हूँ
प्रसाद अपना थैला लिये, सड़क पर से चला जा रहा है। साथ को
न था। और उसके हाव-भाव से ऐसा लगता था, मानो किसी से लड़
झगड़ कर जा रहा हो। उसके पीछे मैं भी हो लिया। वह विजयवाड़ा
जा रहा था और विजयवाड़ा से मद्रास जाने का इरादा था।

उसके पास मुश्किल से दस रुपये थे। वायुतुता ने दिये थे। उसने
बहुत दिनों से जमा कर रखे थे। उसने सुब्बु मामा को बताया भी न था
कि वह कहाँ जा रहा है।

उसकी माँ ने कहा कि ब्रह्मेश्वर राव के आने की इंतजार करे। पर
वह न माना। सुजाता कालेज के खुलते ही चली गई थी। सम्भवतः
प्रसाद की माँ का अन्दाज़ था कि ब्रह्मेश्वर राव उसकी पढ़ाई-लिखाई
का कुछ-न-कुछ इंतजाम करेंगे। ब्रह्मेश्वर राव करते भी, पर प्रसाद नहीं
चाहता था कि उसके कारण किसी को किसी प्रकार की तकलीफ हो।

रामस्वामी ने, घर बनाने के लिए थोड़ी जमीन रामय्या को बेच दी।
कभी नरसिंह मामा ने इसको स्वयं खरीदना चाहा था। पर पैसे की तंगी
के कारण इरादा छोड़ दिया था।

घर भी धीमे-धीमे बन रहा था। रामय्या स्वयं लगा हुआ था। युद्ध
का काल था। न बाँस मिलते थे, न शहतीर ही, पर उसने खुशामद
कर-कराकर काले मार्केट से सभी कुछ मंगा लिया था।

जब रामय्या आराम करने के लिए जाता तो उसकी पत्नी घर की
निगरानी के लिए आ जाती। और जब मियाँ-बीवी दोनों को कोई काम
होता तो उनकी लड़की पद्मा उनकी जगह आती।

उनको यह डर था कि कहीं मुखासादार उनके सामान को जलवा न

दे, या कहीं जुरवा न दे। मुखासादार इस कदर वदनाम था कि वह जो चाहता वह करता, और आजकल वह रामय्या से चिढ़ा हुआ भी था। मनुष्य शायद तभी तक किसी की मदद करता है, जब तक मदद पाने वाला व्यक्ति उससे कई सीढ़ी नीचे हो, पर जब वह बराबरी करने लगता है, वे सहायक ही प्रायः उसके पैरों के नीचे की जमीन कुरेदने लगते हैं। यह हाल भले आदमियों का ही है, पर मुखासादार किसी भी परिभाषा से भले आदमी न थे। वे इन्द्रिय लोलुप और कामुक थे, अपनी कामवासना पूरी करने के लिये रामय्या के परिवार की सहायता कर रहे थे।

रामय्या के परिवार की स्थिति भी सुधर रही थी। खाने-पीने के लिए अब उन्हें सतीत्व बेचने की जरूरत न थी। खराब-से-खराब औरत भी यदि वह पेशेवर वेश्या न हो, वह नहीं चाहती कि उसकी लड़की भी उसी चौबच्चे में पड़े, जिस में वह सालों खुद सड़ी हो।

हाँ, तो मकान बन रहा था। यों तो गाँवों में जहाँ दो आदमी जमा होते हैं, वहाँ चार की भीड़ बनने में देरी नहीं लगती। हमेशा वहाँ लोग आते-जाते रहते। बच्चों की संख्या ही अधिक रहती। नरसिंह मामा के बच्चे भी वहीं खेला करते।

एक दिन पद्मा शाम को ड्यूटी पर थी। वायुसुता भी घूमती-घूमती उस तरफ निकल गई। दोनों लग-भग हम-उम्र की थीं। बातें चलने लगीं। अन्नपूर्णा मामी उसी तरफ बैठी चावल में से रोड़े कंकड़ निकाल रही थीं। वे भी उनकी बातें सुन रही थीं।

नरसिंह मामा की पत्नी घर से निकली। वे उनको घूरती हुई रसोई घर में चली गईं। कुछ न कहा। उनको शायद यह पसन्द न था कि उनकी लड़की अन्नपूर्णा मामी से बात-चीत करे। ईर्ष्या की भी हद होती है, पर नरसिंह मामा की पत्नी में वह हद क्षितिज की तरह थी।

पद्मा के चले जाने के बाद अन्नपूर्णा मामी ने वायुसुता से कहा, "बेटी, इस लड़की की सोहबत अच्छी नहीं है।"

"बात-चीत करने में क्या हर्ज है?"

"मालूम नहीं, अगर तुम्हारे चाचा होते तो यह पसन्द न करते
वह अच्छी......" कहती-कहती अन्नपूर्णा मामी सिसकने लगीं।

उनको रोता देख, वायुसुता भी रोती-रोती अन्दर चली गई। उस
घर में मन न लगता था। वह पिता, पति, चाचा, भाई......सभी
चाहती थी, पर उनमें से तब कोई भी घर न था। वह व्याकुल थी।

नरसिंह मामा की पत्नी अन्नपूर्णा मामी को खाना देती थीं। इस
लिए उन पर आग बरसाना शायद अपना हक समझती थीं। उनका बस
चलता तो खाना भी नहीं देतीं।

दिन भर वे कुछ-न बोलीं, पर जब वायुसुता फिर मकान को देखती
अकेली खड़ी थी, उसकी माँ ने अपनी कड़वी जबान को काम सौंप दिया।

"देखो, मैं कहती हूँ तुम वायुसुता से बातचीत न किया करो।"
नरसिंह मामा की पत्नी उनसे कह रही थीं और अन्नपूर्णा मामी चुप थीं।

"तुम्हारा वायुसुता का पद्मा से मेल-जोल कराना मुझे बिल्कुल
पसन्द नहीं है......बोलती क्यों नहीं हो ?"

अन्नपूर्णा मामी तब भी कुछ न बोलीं।

"जानती हो कि वह बिगड़ी लड़की है, तुम यह क्योंकर जानो
कि बिगड़ी लड़कियों की सोहबत अच्छी लड़कियों को भी बिगाड़ देती है
सन्तान हो तब न ?"

"पर मैं वायुसुता को मना कर रही थी कि वह पद्मा से न बोले।"
अन्नपूर्णा मामी ने सिर झुकाकर कहा।

"हाँ, हाँ, मैं सब जानती हूँ। मैं अभी बहरी नहीं हूँ। सब सुन लेती
हूँ। खुद इन कानों से सुना है।"

अन्नपूर्णा मामी आँगन की ओर चली गईं।

"जैसा पति वैसी पत्नी......" नरसिंह मामा की पत्नी ने कहा।
अन्नपूर्णा मामी चौंक कर खड़ी हो गईं। काँपने-सी लगीं। फिर आँसू

बहाती, लड़खड़ाती चली गईं और नरसिंह मामा की पत्नी ने इस तरह मुँह फेर लिया, जैसे कुछ कहा भी न हो।

रग्घू मामा का मुकदमा बहुत दिनों से चल रहा था। दोनों तरफ के वकीलों में अर्से से वाक्‌युद्ध चल रहा था। कितने ही गवाह पेश किये गये थे। रग्घू मामा पर जो आरोप लगाये गए थे, उनमें से कुछ उन्होंने कबूल कर लिये थे। सुब्बु मामा भी कभी-कभी ताडेपल्लि गूडिम हो आते थे। हमें उन्हीं के द्वारा थोड़ी बहुत खबरें मालूम होती थीं।

हम ब्रह्मेश्वर राव की प्रतीक्षा में नरसिंह मामा के घर बैठे हुए थे। सुब्बु मामा हमारे साथ थे। समय काटे नहीं कटता था। अँधेरा भी हो चला था।

सात-साढ़े सात बजे के करीब ब्रह्मेश्वर राव आए। उनको देखने से लगता, जैसे कई दिनों से न खाना खाया हो, न सोये ही हों। आँखें लाल हो रही थीं। वे एक-दो मिनट तक कुछ न बोले, कोई कुछ बोल भी न सका।

"लगता है तुम्हारे भाई का दिमाग फिर गया है।" उन्होंने सुब्बु मामा से कहा। अन्नपूर्णा मामी आँसुओं से साड़ी भिगोने लगीं।

"अपील भी नहीं करने देता। कहता है अपील में सजा बढ़ेगी, कम न होगी। क्या ऊटपटाँग ख्याल है? वकील अपील के लिए कह रहे हैं और वह अपनी जिद पर अड़ा हुआ है......"

"पर क्या सजा हो गई है?" सुब्बु मामा ने पूछा। किवाड़ की आड़ में अन्नपूर्णा मामी की साँसें जोर-जोर से चलने लगीं।

"हाँ, तीन साल की सजा हुई है।" अन्नपूर्णा मामी बेहोश नीचे गिर पड़ीं। उन पर पानी छिड़का गया, पंखा किया गया। होश आया, वहीं वे चटाई पर लेट गईं। आँखें बन्द थीं और आँसुओं की झड़ी बहती जाती थी।

सुब्बाराव भी तब तक आ गया था। उसके साथ दो-तीन साथी और थे। उसकी पत्नी भी कुछ सहेलियों के साथ पिछवाड़े में बैठी थी।

"मालूम नहीं, अगर तुम्हारे चाचा होते तो यह पसन्द न क
वह अच्छी......" कहती-कहती अन्नपूर्णा मामी सिसकने लगीं।
उनको रोता देख, वायुसुता भी रोती-रोती अन्दर चली गई। उ
घर में मन न लगता था। वह पिता, पति, चाचा, भाई......सभी
चाहती थी, पर उनमें से तब कोई भी घर न था। वह व्याकुल थी।

नरसिंह मामा की पत्नी अन्नपूर्णा मामी को खाना देती थीं। इ
लिए उन पर आग बरसाना शायद अपना हक समझती थीं। उनका ब
चलता तो खाना भी नहीं देतीं।

दिन भर वे कुछ-न बोलीं, पर जब वायुसुता फिर मकान को देखत
अकेली खड़ी थी, उसकी माँ ने अपनी कड़वी जबान को काम सौंप दिया।

"देखो, मैं कहती हूँ तुम वायुसुता से बातचीत न किया करो।"
नरसिंह मामा की पत्नी उनसे कह रही थीं और अन्नपूर्णा मामी चुप थीं।

"तुम्हारा वायुसुता का पद्मा से मेज-जोल कराना मुझे बिल्कुल
पसन्द नहीं है......बोलती क्यों नहीं हो?"

अन्नपूर्णा मामी तब भी कुछ न बोलीं।

"जानती हो कि वह बिगड़ी लड़की है, तुम यह क्योंकर जानोगी
कि बिगड़ी लड़कियों की सोहबत अच्छी लड़कियों को भी बिगाड़ देती है
सन्तान हो तब न?"

"पर मैं वायुसुता को मना कर रही थी कि वह पद्मा से न बोले।"
अन्नपूर्णा मामी ने सिर झुकाकर कहा।

"हाँ, हाँ, मैं सब जानती हूँ। मैं अभी बहरी नहीं हूँ। सब सुन लेती
हूँ। खुद इन कानों से सुना है।"

अन्नपूर्णा मामी आँगन की ओर चली गईं।

"जैसा पति वैसी पत्नी......" नरसिंह मामा की पत्नी ने कहा।
अन्नपूर्णा मामी चौंक कर खड़ी हो गईं। काँपने-सी लगीं। फिर आँसू

बहाती, लड़खड़ाती चली गई और नरसिंह मामा की पत्नी ने इस तरह मुँह फेर लिया, जैसे कुछ कहा भी न हो।

रघू मामा का मुकदमा बहुत दिनों से चल रहा था। दोनों तरफ के वकीलों में अर्से से वाक्युद्ध चल रहा था। कितने ही गवाह पेश किये गये थे। रघू मामा पर जो आरोप लगाये गए थे, उनमें से कुछ उन्होंने कबूल कर लिये थे। सुब्बु मामा भी कभी-कभी ताडेपल्लि गूडिम हो आते थे। हमें उन्हीं के द्वारा थोड़ी बहुत खबरें मालूम होती थीं।

हम ब्रह्मेश्वर राव की प्रतीक्षा में नरसिंह मामा के घर बैठे हुए थे। सुब्बु मामा हमारे साथ थे। समय काटे नहीं कटता था। अँधेरा भी हो चला था।

सात-साढ़े सात बजे के करीब ब्रह्मेश्वर राव आए। उनको देखने से लगता, जैसे कई दिनों से न खाना खाया हो, न सोये ही हों। आँखें लाल हो रही थीं। वे एक-दो मिनट तक कुछ न बोले, कोई कुछ बोल भी न सका।

"लगता है तुम्हारे भाई का दिमाग फिर गया है।" उन्होंने सुब्बु मामा से कहा। अन्नपूर्णा मामी आँसुओं से साड़ी भिगोने लगीं।

"अपील भी नहीं करने देता। कहता है अपील में सजा बढ़ेगी, कम न होगी। क्या ऊटपटाँग ख्याल है? वकील अपील के लिए कह रहे हैं और वह अपनी जिद पर अड़ा हुआ है......"

"पर क्या सजा हो गई है?" सुब्बु मामा ने पूछा। किवाड़ की आड़ में अन्नपूर्णा मामी की साँसें जोर-जोर से चलने लगीं।

"हाँ, तीन साल की सजा हुई है।" अन्नपूर्णा मामी बेहोश नीचे गिर पड़ीं। उन पर पानी छिड़का गया, पंखा किया गया। होश आया, वहीं वे चटाई पर लेट गईं। आँखें बन्द थीं और आँसुओं की झड़ी लगी जाती थी।

सुब्बाराव भी तब तक आ गया था। उसके साथ दो-तीन साथी और थे। उसकी पत्नी भी कुछ सहेलियों के साथ पिछवाड़े में बैठी थी।

ज्यों ही उन लोगों को मालूम हुआ कि रघू मामा को सजा हुई
सभी काठ-से रह गये।

नरसिंह मामा के घर में रोना-धोना हो रहा था और बगल
रामय्या अपनी लड़की को लेकर, मकान की निगरानी करने में व्यस्त
था। वह शायद उत्सुक भी न था।

सब अन्नपूर्णा मामी की सान्त्वना देने का प्रयत्न कर रहे थे। उनके
चारों ओर औरतें बैठी थीं। नरसिंह मामा की पत्नी किसी के कान में
कह रही थीं, "जैसा पति वैसी पत्नी। अच्छी जोड़ी है, निगोड़ी।" औरतें
उनकी ओर घूरने लगीं। अन्नपूर्णा मामी के कान में भी यह बात पड़ी।

हर स्त्री एक पहेली है। वह ही अवस्थानुसार लड़की, मां, सास,
नानी बनती है और नातों को लेकर जाने क्या-क्या झगड़े पैदा करती
है। पर भारतीय नारी के हृदय में पति के लिये जो स्थान है, वह किसी
और को लभ्य नहीं होता। पति देवतुल्य है। किन्तु स्त्रियाँ यह जानती
हुई भी, दूसरों के पतियों पर ताने-तश्मे कसती हैं। दिल दुःखाती हैं।
क्यों ?

मैं यह सोचता बैठा रहा। गाँव के सहृदय लोग आते-जाते रहे।
उनके मन में भी कितनी ही बातें उमड़ रही होंगी।

सवेरे उठकर अन्नपूर्णा मामी बिना किसी से कहे, अपने घर चली
गईं। नरसिंह मामा के घर में रहना उनके लिये असम्भव हो गया था।

तब तक ब्रह्मेश्वर राव काद्रूर जा चुके थे। सुब्बु मामा को मद्रास
भेजा जा रहा था। सुब्बाराव ने मामी के खाने की चीजों का इन्तजाम
कर दिया।

नरसिंह मामा की पत्नी ने उनको रहने के लिये भी न कहा। उल्टा
वे दुत्कार रही थीं, "यह तो मन-ही-मन खुश होगी कि प्रसाद का कहीं
पता नहीं लग रहा है। मेरे घर अब क्यों रहेगी ? जाती है तो जाये,

अपनी बला से।"

सुब्बु मामा का घर छोड़ कर जाना आसान न था। पर नरसिंह मामा की पत्नी अपनी जिद पर थीं। महेश्वर राव जी की भी यही सलाह थी। खेतों में बहुत काम था। मद्रास जैसे बड़े शहर में सुब्बु मामा के लिये प्रसाद का पता लगाना पुआल के ढेर में सुई का खोजना था।

उनकी पत्नी भी अजीब थीं। उनकी जवान नरसिंह मामा की पत्नी की तरह कड़वी न थी। वे प्रायः किसी से कुछ बोलती भी न थीं। पर लोगों का कहना था कि उनका दिल बहुत ही तंग था। वह उन स्त्रियों में से थीं, ऐसा सुना जाता था, जो पतियों को कठपुतली बनाने में मज़ा लेती हैं। उनको यह कतई पसन्द न था कि उनका पति अपने भाई-बहिनों के लिये इधर-उधर की दौड़धूप करे। कभी वे रूठतीं, धमकातीं, कभी उपवास करतीं और सुब्बु मामा को लाचार हो उनकी बात माननी पड़ती।

उनकी पत्नी को यह न भाया कि प्रसाद की खोज के लिये वे मद्रास जायें। उन्होंने उनको रोका, पर जब सफल न हुईं तो सुब्बु मामा के चले जाने के बाद वे माइके चली गईं।

मल्लिखार्जुन राव के परिवार की हालत और भी बुरी थी। कभी कोई चावल भेजता तो कभी कोई कुछ और। कई ऐसे दिन भी गुजरते, जब उनको फाके करने पड़ते। उनका बड़ा लड़का खेतों में काम करने लगा था।

मल्लिखार्जुन राव गन्ना तो लगा गये थे, पर उनकी देखभाल करने वाला कोई न था। खाद भी न खरीदा जा सका था। खेत भी उनके परिवार की तरह विपन्न था। गरीब घर में, कहते हैं, बच्चे अधिक पैदा होते हैं, पर गरीब जमीन लगभग बांझ हो जाती है। यूँ तो खेत में कम ही पैदा हुआ था और जो कुछ हुआ था, उसे जमीन के मालिक को [illegible] था। मेहनत के दाम भी न मिले।

रामस्वामी बहुत दिनों से बुय्युर के शूगर मिल के डायरेक्टरों की

खुशामद कर रहे थे। वे वेन्कटेश्वर राव के सामने दुम हिलाने लगे थे, मुखासादार से तो और भी हिल-मिल गये थे। महाजनी में पैसे के चार पैसे बना लिये थे। बाप-दादाओं के पुराने मकान की मरम्मत भी करवा ली थी। वे नई जमीन खरीदना चाहते थे। पर कोई बेचने वाला न था। किसानों को आय इतनी अधिक हो रही थी कि पुराने कर्ज चुका रहे थे। नया कर्ज लेने की आवश्यकता न थी।

रामस्वामी को शायद सूझ नहीं रहा था कि पैसे का क्या किया जाय। वेन्कटेश्वर राव ने सुझाया कि वह वुय्युर मिल में अपनी पूँजी लगाये। मुखासादार ने उकसाया कि सिर्फ पूँजी लगाने से काम न चलेगा, जब पूँजी लगाई है तो शूगर मिल में कोई ओहदा भी पाना चाहिये। रामस्वामी को यह सुझाव जँचा।

उसने अपने मकान में वुय्युर शूगर-मिल के स्थानीय डायरेक्टरों को दावत दी। दावत में ओस-पड़ोस के गाँवों के धनी-मानी उपस्थित हुए। गाँव के अधिक व्यक्तियों को निमन्त्रित न किया गया था।

रामस्वामी एक पंथ दो काज पूरा कर रहे थे। मकान की मरम्मत के बाद उन्होंने दावत देने का वायदा कर रखा था। उन्होंने दावत भी दी और शूगर मिल के डायरेक्टरों के मुख भी मीठे किये।

नरसिंह मामा के घर में, जिनको रामस्वामी कभी अपना मित्र समझते थे, ग़मी थी। इसी धूप-छाँह में समय अटखेलियाँ करता जाता था।

घने-घने मेघ गरज रहे थे। लगातार बूँदा-बूँदी हो रही थी सब जगह दलदल बन गई थी। अकाल वर्षा थी। उसका असर भी असाधारण था।

रात को जोर से हवा चलने लगी। समुद्र में कहीं तूफान था और वह भूमि की ओर बढ़ रहा था। किसान तूफान के नाम से ही काँप जाते थे। तूफान आता और चला जाता पर उसकी बरबादी की निशानी

सालों बनी रहती।

घर से निकलना मुश्किल हो गया। हवा समुद्र की लहरों की तरह रुक-रुककर, जोर से धक्के के साथ गरज-गरजकर बह रही थी।

रात को सोना मुश्किल हो गया। सारा फर्श पानी से तर था। तूफान अविराम चल रहा था। छत के कई भाग उड़ गये थे। कोनों में बैठे-बैठे रात काटी। कई घरों के खपरैल हमारे घर के सामने आकर जमा हो गए। छतों की फूस सड़क पर उड़ रही थी।

पाँच-दस साल में एक-न-एक बार उस तरह का भयंकर तूफान हमारे गाँव में आता था। समुद्रवर्ती प्रान्त था। कष्टों का आदी होना कठिन है, वे हर बार नये रूप में ताण्डव करते हैं। गाँव में हाहाकार मचा हुआ था।

उस आँधी-पानी में पिता जी खेत हो आये थे। पकता धान पानी में झुक गया था। काफ़ी झड़ गया होगा। अगर एक एकड़ में १८-२० बोरे धान होता था तो तूफान के कारण अब मुश्किल से पाँच-छः बोरे भी न होंगे। पिता जी चिन्तित थे। मवेशियों की तो बुरी हालत थी। उनके ऊपर की छप्पर उड़ चुकी थी। लगातार पानी बरस रहा था।

मुझे अन्नपूर्णा मामी का खयाल आया। वे घर में अकेली थीं। मकान भी पक्का न था। पास में पुराना बड़ा इमली का पेड़ था। कहीं तूफान के कारण गिर-गिरा न गया हो। सुब्बाराव अपने मकान की फिक्र में होगा।

माँ ने बहुत कहा, पिता जी ने डाँटा-डपटा पर मैं अपना अँगोछा लेकर मामी के घर की ओर चल पड़ा। रास्ते में देखा कि रामय्या के मकान की अधूरी छत पूरी तरह उड़ गई थी। मिट्टी की दीवारें कीचड़ हो रही थीं। बाँस एक-दूसरे को पकड़े, जैसे-तैसे अपनी जगह पर अड़े-खड़े हुए थे। रामय्या अपना डंडा लेकर उड़ती चीजों को एक जगह इकट्ठा कर रहा था।

जिस घर में नरसिंह मामा बैठा करते थे वहाँ सिर्फ बाँसों का आवरण

रह गया था। छप्पर का फूँस तालाव के किनारे के पेड़ों में जा अटक
था। भरे तालाव में फूस और जाने क्या-क्या तैर रहा था। तालाव प
का हरिजनवाड़ा क़रीव-करीव गंजा हो गया था। सिवाय पादरी के घ
के सभी घर उजड़ गए थे। पक्के गिरजे में भीड़ एकत्रित हो गई थी।

नरसिंह मामा के घर गया। मवेशियों वाला मकान धराशायी हो
चुका था। उनके तीनों मकानों में सिर्फ एक ही ठीक था। परिवार के
सब लोग उसी में चले गए थे। दरवाजे की ओर एक टक देख रहे थे कि
कब वर्षा थमती है।

आगे भागा तो रामस्वामी का नया मकान था। एक दम सही-
सलामत। जैसे नहला दिया गया हो। वे चुरुट पी रहे थे।

मल्लिखार्जुन राव के घर की दीवारें ढह गई थीं। कर्णं उनके
परिवार को अपने मकान में ले गए थे। उनका मकान खपरैल का था।
दीवारें पक्की थीं, पाँच-दस खपरैल उखड़ गए थे। उनकी सहृदयता
जाति की चार दीवारी में जब्त होने वाली न थी।

रजभाह भरा हुआ था। पानी किनारों को फाँदकर भरे खेतों में बह
रहा था। कोहरा-सा छाया हुआ था। कई ताड़ के पेड़ गिर गए थे।
विशाल पीपल की टहनियाँ राजभाह में पड़ीं, पानी के प्रवाह को रोक रही
थीं। रास्ते में इतना कीचड़ था कि चलना मुश्किल। बुरी फिसलन।

दूर से रंघू मामा के घर के पास वाले इमली के पेड़ को तूफान में
झूमता देख, मैंने लम्बी साँस ली। फिर यह आशंका सताने लगी कि
पीपल के पेड़ की तरह कहीं उसकी टहनियाँ तो टूटकर मामा के घर पर न
गिर गई हों। यह सोचते-सोचते मामा के घर पहुँचा। दया भगवान की
के मेरी आशंका झूठी निकली। मामा के दोनों घर सुरक्षित थे। फूस
ो रोमान्च-सा हो गया था। आँगन में दूसरों के घर से कई चीजें उड़तीं-
ड़तीं आ गई थीं। भगवान भी शायद उन काले वादलों की आड़ में
रिहास करते होंगे "देखो मेरी मेहरबानी, मैंने इस औरत का घरबार
बाद कर दिया, पर घर सुरक्षित रखा।"

मामी घर में अपने प्रिय देवता, सुब्रह्मण्येश्वर स्वामी की पूजा कर रही थीं। और रसोई में एक बड़े हंडे में चावल पक रहे थे। हंडे का आयतन देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। मैं मामी की पूजा के समाप्त होने तक वहाँ बैठा रहा।

"बेटा, तुम अच्छे समय पर आये। तुम मेरी मदद करोगे? तुम बिलकुल भीग गये हो। कपड़े बदलोगे?"

"नहीं। मामी, तुम ठीक हो न? कहो क्या चाहती हो?"

"भगवान हम जैसे अभागों की रक्षा करते हैं, फिर मैं भी कौन-सी अभागिन हूँ?"

मैं चुप रहा।

"हरिजनों के घर गिर गये होंगे। उनके घर चूल्हा न जलेगा। दस-पन्द्रह के लिये मैंने खाना बना दिया है। चावल कम थे। अपनी जान-पहचान के लोगों को यहाँ भोजन के लिए भेज देना। नरसिंह मामा का मकान ठीक है न?"

"एक ठीक है, सभी उसी में बैठे हैं। आश्रय तो है।"

"मुब्बु मामा का?"

"मैंने देखा नहीं।"

"उसे भी देखते आना। तुम यहीं खाना खाना। जाओ, बेटा, तकलीफ तो होगी। मल्लिखार्जुन राव के कुटुम्ब का क्या हाल है?"

"वे कर्णं के मकान में हैं।"

"यदि वे यहाँ आना चाहें तो बुला लाना। चलो, मैं ही चलती हूँ।"

"नहीं मामी, दलदल है, कहीं गिर जाओगी। एक और आफत।"

मामी घर में ही रहीं। और मैं इस अचरज में चला कि मामी के पास इतना चावल कहाँ से आया था।

एक यह स्त्री थी, जिस पर विधि हथौड़े मार रहा था पर फिर भी वह सहृदय बनी हुई थी, एक वे हैं, जिनको भगवान ने सब कुछ दिया है, पर सहृदयता नहीं दी है—सुगन्धहीन पुष्प हैं वे। स्त्री का मातृत्व

सहृदयता में है, सन्तान में नहीं। यह मैं तब तो न सोच सका था। अब पुराने अनुभव को उलट-फेर कर देखता हूँ तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ।

भगवान् कभी-कभी मनुष्य के अभिमान को चूर करने के लिये आँधी-तूफ़ान को आकस्मिक दूत बनाकर भेजते हैं। सूचना भी नहीं देते। विपत्तियाँ एक के बाद एक आती जाती हैं।

पर भगवान ये दूत किसानों के पास ही क्यों भेजते हैं? उनमें तो अभिमान नहीं होता। वे उसी का नाम दिन रात रटते हैं, उसी के भरोसे खून-पसीना एक करते हैं—भगवान पर सोचना ही बुरा है। वह एक ऐसे रास्ते के समान है, जो चलता जाता है पर कहीं पहुँचता नहीं है।

सड़क पर लोग चल रहे थे। बारिश और तूफ़ान का प्रकोप जारी था। बारिश जरा थमी तो मैं मल्लिखार्जुन राव के परिवार को भीगते-भागते, मामी के घर ले गया। मामी ने उनके रहने का प्रबन्ध, जिस घर में कमलवेणी रहा करती थी, वहाँ कर दिया। हरिजनों को भी खाना खिलाया गया।

मैं दुपहरी में घर पहुँचा। ठण्ड के कारण दाँत कटकटा रहे थे। पिता जी मुझे देखते ही आग बबूला हो गये। यदि माता जी बीच में न आतीं तो उस दिन मेरी भी वही हालत होती, जो तूफ़ान में एक दुबले-पतले पेड़ की होती है।

तूफ़ान क्या आया कि गाँव में बलवा-सा हो गया। बरबादी तो हुई ी। खलबली मच गई। वीरवल्लि में शायद खून-खराबी होती अगर दमय्या दखल न देते। उनका प्रभाव बढ़ता जाता था। गन्डिगुन्टा में नका जबरदस्त गुट तैयार हो गया था। जवान थे, काम को अधिक त्ता देते थे, बजाय काम करने की विधि के। दंगे-फिसाद करवाने में

भी न हिचकते थे। मुखासादार भी उनसे डरते थे। कांग्रेस हवाहीन गुब्बारे की तरह परत पड़ गई थी।

बात यह थी कि मुखासादार की हड़पी हुई जमीन वेन्कय्या की जमीन से ऊँची थी। आँधी-पानी में, पानी बहकर वेन्कय्या के खेत में जमा हो जाता। इस तूफान में भी वेन्कय्या का खेत पानी से भर गया था और धान एक-दम झड़ गया था। पर मुखासादार के खेत का धान सीना ताने तूफान का मुकाबला करता रहा। मुखासादार का कहना था कि वेन्कय्या ने आँधी के थमते ही अपने और गाँव के मवेशियों को ईर्ष्या के कारण उनके खेत में हाँक दिया था। उनके आदमियों ने वेन्कय्या को डराया-धमकाया। वह दब्बू न था। उसने ईंट का जवाब पत्थर से दिया।

मुखासादार ने पुलिस में शिकायत की कि वेन्कय्या लट्ठ लेकर उन्हें पीटने आया था। वह सरासर गलत था। लक्ष्मय्या पाँच-दस आदमियों को लेकर मुखासादार के पास गये। उनको समझाया-बुझाया। मुखासादार ने पुलिस से मामला वापिस ले लिया। बन्दर घुड़की थी शायद।

ब्रह्मेश्वर राव के खेतों में तो पानी के नाले बहने लगे। वेन्कटेश्वर राव का भी बेहद नुकसान हुआ था। घरों-मवेशियों की इतनी हानि हुई थी कि महाजनों की पाँचों अँगुलियाँ घी में थीं।

किसान अपने-अपने सामर्थ्य के अनुसार अपने खेत ठीक करने में लगे हुए थे। बची-खुची फसल बटोरने में व्यस्त थे। गाँव का ध्यान न अब महायुद्ध के प्रति जाता था, न गाँव की गुटबन्दी के बारे में ही।

सुब्बु मामा मद्रास से वापिस आये तो सब जगह हाहाकार देखा। उनका मकान ठीक था। पर नरसिंह मामा के मकान की फिक्र उन्हें करनी पड़ी। उनके परिवार की जिम्मेवारी भी उनपर थी। नरसिंह मामा की पत्नी रोती रहतीं। प्रसाद का कुछ पता न लगा था।

उन्होंने उसके कई जान पहचान वालों से पूछ-ताछ की थी। कालिज

के अधिकारियों से भी पूछ-तलब की थी। प्रशाद शायद कालेज नहीं जा रहा था। उसकी माता को यह भी शक था कि कहीं वह संन्यासियों में न भरती हो गया हो।

अन्नपूर्णा मामी को भी प्रसाद के बारे में सुनकर बहुत दुःख हुआ। उनको प्रसाद का इस तरह जाना कतई पसन्द न था। अगर जाना भी था तो कम-से-कम अपने पते की सूचना तो देता।

मैं पुल पर बैठा था। संयोगवश उस तरफ से कुटुम्बराव गुजरा। वह काटूर का रहने वाला था। उसके पिता की वहाँ दुकान थी। ज़मीन-जायदाद भी थी। मद्रास में वह पढ़ता था। उसके पिता को जमीन का काम पड़ गया था। दुकान देखने वाला कोई न था। कुटुम्ब राव उस का इकलौता लड़का था। पिता ने उसको कुछ दिनों के लिए दुकान संभालने के लिए बुलाया था।

"कहीं प्रसाद को मद्रास में देखा था?" मैंने पूछा।

"देखा तो था। एक दिन पार्क स्टेशन पर मिला था। सुनते हैं उसके पिता जेल में हैं?"

"हाँ, हाँ, पर अब वह कहाँ है?"

"मालूम नहीं।"

"कुछ उसने बताया भी था?"

"नहीं तो, सिर्फ उसने इतना ही कहा था कि ट्यूशन की तलाश कर रहा है।"

"मिली कि नहीं?"

"मालूम नहीं।"

"यानि वह मद्रास में ही है।"

""हाँ, हाँ।"

बदली फिर छाने लगी थी। कुटुम्ब राव से और बात न हो सकी। ...से दो मील और जाना था। मैं भागा-भागा सुब्बु मामा के घर गया। ...ते में कर्णं से भी मिलता गया। सुब्बु मामा और मैं नरसिंह मामा के

घर गये। तब तक वहाँ कर्ण भी आ गये थे। बहुत देर तक रोना-धोना ही होता रहा। आखिर कर्ण ने सुझाव दिया कि अखबार में प्रसाद के विषय में विज्ञापन दिया जाय।

"पर इससे तो परिवार की बदनामी होगी।" मुब्बु मामा ने कहा।

"और रास्ता ही क्या है?" कर्ण ने प्रश्न किया।

"भाई साहब के पास तो अखबार जाते ही होंगे। देखेंगे तो व्यर्थ में चिन्तित होंगे।"

"किन्तु किसी-न-किसी दिन तो पता लगेगा ही। हो सकता है कि विज्ञापन देखकर प्रसाद घर लौट आये। बच्चा ही तो है।" कर्ण ने कहा।

"मैं नहीं चाहता कि भाई साहब को इस समय इसका पता लगे। दो-चार दिन और देख लेंगे। शायद प्रसाद स्वयं लिखे। अगर न लिखेगा तो लाचारी है। विज्ञापन करना ही होगा।" मामा ने कहा।

"शायद इन्तजारी करना ही अच्छा है। देखा जायेगा।" कर्ण ने सोचते हुए कहा।

नरसिंह मामा की पत्नी को मुब्बु मामा का सुझाव न जँचा। उनको लगा कि मुब्बु मामा जिम्मेवारी टालने की कोशिश कर रहे हैं। वे चाहती थीं कि जो कुछ भी किया जाये तुरन्त किया जाये।

रघू मामा के जेल जाते ही अन्नपूर्णा मामी ने उनसे मिलने के लिये दरख्वास्त भेज दी थी। लोगों ने उनको इसके लिये मना किया, पर वे न मानीं।

महेश्वर राव साथ न आ सकते थे। वे अपनी खेती-बाड़ी में अत्यन्त व्यस्त थे। तूफान के बाद किसी को भी क्षण भर फुरसत न थी। मामी अकेला जाने का साहस न कर पाती थीं। युद्ध चल रहा था। हर शहर में सिपाही थे। स्त्रियों पर बलात्कार करने के समाचार भी कभी-कभी सुनाई पड़ते थे।

सुब्बु मामा के पास खबर भिजवाई। वह अपनी ही समस्
उलझे हुए थे। पत्नी बिना कहे मायके चली गई थी। वे पति हो
नाते बिना बुलाये ससुराल जाना न चाहते थे। सम्भव है कि वे य
दिखाना चाहते हों कि पत्नी उनको नकेल पकड़कर नहीं चलाती
जैसे की बदनामी थी।

दो-तीन दिन की प्रतीक्षा के बाद प्रसाद के बारे में 'आन्ध्र प्र
में विज्ञापन छपवा दिया गया। हर रोज प्रसाद के उत्तर की प्रतीक्ष
की जाती। दो-तीन बार डाक के लिये बुच्चुर आदमी भी भेजा गया
उम्मीद की जा रही थी कि किसी समय भी प्रसाद की चिट्ठी आ सकत
थी। सुब्बु मामा कहीं आ-जा न सकते थे।

खेती बिलकुल चौपट थी। जब से धान बोया था, तभी से सब
विपत्तियों का ताँता लगा हुआ था। बोया ही अन्धाधुन्ध गया था। फिर
तूफ़ान ने खड़े धान को झाड़ दिया था। नरसिंह मामा ने जमीन भी
बेच दी थी। आय की गुंजाइश कम थी। बचे-खुचे धान से गुजारा
होना भी मुश्किल था। सुब्बु मामा ही अकेले कमाऊ थे। सवेरे से काम
पर लगते और शाम को भी काम न निबटता।

नरसिंह मामा के घरों पर छत डालने का भी काम चल रहा था।
वह भी देखना होता था। उनके घर में कोई बड़ी उम्र का तो था नहीं—
वायुसुता थी और छोटे बच्चे। मामा अपने घर में ताला लगाकर वह
सोया करते। इसलिये उन्होंने अन्नपूर्णा मामी को कहला भेजा कि बाद
में भाई को देखने चलेंगे।

मुश्किल से मिलने की स्वीकृति मिली थी। मालूम नहीं कि बाद में
उनको देखने की अनुमति मिलती कि नहीं। मामी वह मौका न चूकना
चाहती थीं। उन्होंने सुब्बाराव से आने के लिये कहा। उसने पहले तो
जाने में आना-कानी की, पर मामी को अकेला जाते देख, वह मान गया।

सुब्बु मामा उनको छोड़ने बुच्चुर गये। उन्होंने वकील वेन्कटसुब्बय्या
को एक चिट्ठी भी लिखवाई। सुब्बु मामा ने उनको अन्नपूर्णा मामी के

राजमण्ड्री जाने के लिए निवेदन किया था, क्योंकि परिस्थितियाँ
ऐसी थीं कि वे स्वयं बाहर न जा सकते थे।
लेकिन मामी का जाना था कि गाँव की औरतों में ऊटपटाँग उड़ने
लगीं। रुक्मा ने अफ़वाह का श्रीगणेश किया। नरसिंह मामा की पत्नी ने
अफ़वाह में घी डाला। बात मामूली थी। उन्हें शायद न मालूम था
कि मामी सुब्बाराव के साथ अकेली न गई थीं, वकील साहब भी साथ
जा रहे थे। अगर मालूम होता तो भी वह अफ़वाह का चस्का न छोड़
पातीं। गप्प ही तो एक मनोरंजन था, जो गाँव वालों को मुफ़्त और
आसानी से मिलता है।

इस मामूली घटना में नरसिंह मामा की पत्नी का अधिक उत्साह
दिखाने का कारण यह भी हो सकता है कि जिस दिन अन्नपूर्णा मामी
राजमण्ड्री के लिए रवाना हुई थीं, उसी दिन शाम को प्रसाद के पास से
चिट्ठी आ गई। उसने विज्ञापन पढ़ लिया था।

प्रसाद ने लिखा था कि उसके बारे में विज्ञापन नहीं दिया जाना
चाहिये था। क्योंकि उसे पढ़कर जेल में पिता जी चिन्तित होंगे। वह तब
तक चिट्ठी न लिखना चाहता था, जब तक वह जम न जावे। ट्यूशन
करके वह अपना जीवन-निर्वाह करना चाहता था और अपनी कालेज
की शिक्षा भी जारी रखना चाहता था। उसने अपना पता भी दिया था।

पर किसी को यह विश्वास न हुआ कि उसे ट्यूशनें मिली होंगी।
मेल-मुलाकात के बिना काम न बनता था। जो अपने बन्धु-बांधवों से
रुपया न माँग सकता था वह औरों के पास नौकरी के लिए कैसे अनुनय-
विनय करता? इस बारे में सभी को संदेह था।

इसलिए तंगी के बावजूद, घर की दो-चार वस्तुओं को गिरवी रख
प्रसाद के पास थोड़ा रुपया सुब्बु मामा ने भिजवाया। नरसिंह मामा
पत्नी निश्चिन्त हो गई थीं और निश्चिन्तता में जबान तेज़ी से चल
थी, पर किसी को यह न सूझा कि प्रसाद को मद्रास से वापिस ले आ
सकता है कि वे जानते हों कि प्रसाद अपने आग्रह पर अड़ा र

रामय्या का मकान बनकर तैयार हुआ। उसकी पत्नी चाहती
गृह-प्रवेश के साथ पद्मा का विवाह भी हो। दौड़-धूप की। कई
बात-चीत हुई, पर कहीं सौदा न पटा। पद्मा बदनाम थी, दहे
लालची भी उससे शादी न करना चाहते थे।

पद्मा मनचली थी ही, फिर जवानी का भी ज्वार था। बदचल
सुब्बम्मा से भी उसकी दोस्ती थी। न माँ की सुनती थी न बाप की
परवाह करती थी।

मुखासादार और सूरय्या में गरमागरम बातें हुईं। वेन्कय्या के बारे
बात चल रही थी, मुखासादार उससे बदला लेना चाहते थे। सूरय्या जरा
ठहरने के लिए कह रहा था। इस छोटी-सी बात पर मुखासादार न जाने
क्यों तैश में आगया। वह दरअसल और बात पर ही उससे चिढ़ा हुआ था।
सुना जा रहा था कि पिछले दिनों सूरय्या और पद्मा में घनिष्ठता
हो गई थी। मुखासादार को यह पसन्द न था। सूरय्या की पत्नी मुँह-
फट थी। पति को हमेशा लगाम में रखने की कोशिश करती थी। पद्मा
को लेकर मियाँ-बीबी में बड़ी तू-तू मैं-मैं हुई। आस-पास के घर वालों ने
शोर सुना, फिर कानों-कान सारे गाँव में बात फैल गई।

रामय्या अब जमीन का मालिक था। उसकी आय बढ़ रही थी।
तब भी वह बहिष्कृत था। उसको बहिष्कार की चिन्ता न थी। वह निन्या
नवें के फेर में था। पैसे गिन-गिनकर खर्चता, दमड़ी-दमड़ी जमा करने
की कोशिश करता। गाँव में भी पैसे की पूछ होती है। पैसे वाले की
हैसियत होती है। पर गाँव वाले नैतिकता की भी कद्र करते हैं। किसी
का जैसे-तैसे धनी हो जाना उनको नहीं भाता।

और अब उसकी आय का रास्ता भी रोका जा रहा था। वह रोज
सुबह-शाम खेत हो आया करता था। पर सवेरे वह काटूर गया। शाम को
जब वापिस आया तो खेत न गया। मकान के बाहर खिन्न बैठ गया।

रामस्वामी घूमते-घूमते उसका मकान देखने आये। वह उनके सामने अपना रोना-रोने लगा। रामस्वामी की नजर में रामय्या अब बड़ा आदमी हो रहा था। शायद पैसे वाले ही पैसे वालों की पूछ करते हैं।

"आज सवेरे मुझे वेन्कटेश्वर राव जी ने काटूर बुलवाया था। मैं क्या जानूँ कि वे इस तरह मुझे मौत का वारन्ट देंगे।" रामय्या कह रहा था।

"क्यों, क्या बात हुई?" रामस्वामी ने पूछा।

"नरसिंह बाबूजी ने जो जमीन मुझे बेची थी, वह, वे मुझ से खरीदना चाहते हैं। अपना पुराना बाग भी चाहते हैं। खून-पसीना एक करके मैंने उस जमीन को ठीक किया है और वे अब मुझसे हथियाना चाहते हैं। यह भी कहाँ का न्याय है?"

"तो तुमने क्या कहा?"

"आप ही बताइये कि मैं कैसे बेच सकता हूँ? यह जरूर है कि मुझे उनकी मेहरबानी से ही जमीन मिली है। यह भी मानता हूँ कि सस्ते में मिली है। पर मैं कैसे बेच सकता हूँ। बेच दूँगा तो किसके भरोसे जीऊंगा? लड़की की शादी भी करनी है।"

"क्या वहाँ मुखासादार भी था?"

"हाँ, हाँ, आजकल तो वे भी हम पर बिगड़े हुए हैं। कल के दाता आज दोनों हाथों से मेरी छोटी-सी मिल्कियत छीन रहे हैं। एक हाथ से दिया और दूसरे हाथ से ले रहे हैं। क्या करूँ?"

"जब तुम जमीन बेचने के लिये न माने तो वेन्कटेश्वर राव ने क्या कहा?"

"पहिले तो उन्होंने कहा कि जितने में मैंने खरीदी है, मय खर्च के वे सब दे देंगे। पर जब मैं न माना तो उन्होंने एक हजार फी एकड़ बढ़ा दिया।"

"तब भी तुम न माने?"

"जी नहीं।"

"तब उन्होंने क्या कहा ?"

"डराया-धमकाया। गरीब को तो बन्दर भी डराने आ जाते आदमी तो आदमी ही रहा। मैं भी कैसे छोड़ूँ ? जमीन ही तो जान है।"

"अब न नरसिंह का ही जोर है न राघवैय्या का ही। दोनों ट पड़ गये हैं। उन्हीं के डर से वेन्कटेश्वर राव ने जमीन बेच दी थी। अ फिर खरीदना चाहता है। जमीन से इतना फायदा हो रहा है कि ह कोई खरीदना चाहता है, पर कोई बेचने वाला नहीं।"

"इसका मतलब यह तो नहीं कि हम गरीबों से जमीन छीनी जाए ? रामय्या ने काँपती हुई आवाज में कहा।

"वे अब तुम्हें चैन न लेने देंगे। तुम उन्हें जानते नहीं हो। धनियों और हैसियतमंदों से वैर मोल लेना खुदकशी करना है।"

"तो क्या करूँ ?"

"एक ही रास्ता है। वे जिस तरह तुम्हें सता सकते हैं औरों को नह सता सकते। किसी और से साझा करलो। उसके नाम जमीन लिखवादो नहीं तो जानते ही हो ?"

"हूँ, देखा जायगा।" रामय्या को दाल में कुछ काला नजर आया। रामस्वामी वीरवल्लि की ओर चले गये।

अन्नपूर्णा मामी जब से राजमंद्री से आई, तभी से खाना-पीना छोड़-सा दिया था। हमेशा रोती रहती थीं।

सुब्बाराव का कहना था कि मामा को मामूली कैदियों के साथ रखा गया था। दो जून खाने को कुछ दे दिया जाता था। दिन भर मजदूरी करवाई जाती थी। सूख कर काँटा हो गये थे। खून के दस्त भी हो रहे थे। कोई देखने-भालने वाला न था।

सम्मा अपने परिवार के साथ मामी के घर ही रह रही थी। यद्यपि

ान के बाद और लोगों ने अपने मकानों की मरम्मत करवा ली थी, पर
ल्लिखार्जुन राव का मकान वैसे ही ध्वस्त पड़ा था। मामी की उदारता
र वे लोग जी रहे थे। न खम्मा के पास पैसा था, न गाँव में उन्हें
कोई दान देने के लिए ही तैयार था। इसलिये मकान की मरम्मत न
की जा सकती थी।

खम्मा के परिवार के लिए मामी इतना कर रही थीं, पर उनका
कृतज्ञ रहना तो अलग, वह मामी की मौके-बे-मौके, दूसरों से चुगली किया
करती। उनको दिलासा भी न देती। अपने और अपने बच्चों के पेट
की परवाह करती। मामी ने खाया है कि नहीं, इसकी पूछ-ताछ तक न
करती। विचित्र स्वभाव की स्त्री थी।

सुब्बु मामा शिकंजे में थे। पत्नी ने कई बार खबर भिजवाई। किन्तु
मामा ने पत्नी को न बुलाया। उन्होंने जाने से इनकार कर दिया। कोई
बहाना कर दिया। बाल-बच्चों के होते हुए भी पति-पत्नी में फासला बढ़
रहा था। कहा जाता था कि मामा के ससुर भी अपनी लड़की का साथ
दे रहे थे। इकलौती थी, लाडली। वे दामाद को ही अपने घर रखना
चाहते थे।

रामय्या की रामस्वामी से बात क्या हुई कि वह कंजूस स्वयं रामय्य
की जमीन हड़पने की सोचने लगा। मुखासादार को भी यह मालूम हुअ
वे नाराज हुए।

रामस्वामी, जो पहले मुखासादार से काफी मिलते-जुलते थे, अ
मिल पाते थे। वे अपने लोभ का संवरण न कर पाये। शुगर मि
वह कोई ओहदा चाहते थे। पर वेन्कटेश्वर राव और मुखासादार स
मोल लेकर वे शुगर मिल में कुछ भी न हो सकते थे।

नन्दमूरु के श्री लक्ष्मीपति हमारे गाँव में से गुजरे। वे वैल्ल
से रिहा किये गये थे। वे जिले के प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्यकर्ता थे
माने जाते थे। वे पकड़े भी विचित्र ढंग से गये थे। सुनते हैं
कांग्रेस के नाम पर काफी चन्दा इकट्ठा किया और खुद हजम

लोगों में खलबली मची तो पुलिस से मिन्नत कर अपने को नज़रब करवा लिया। खलबली कम हुई और यह भी कहने का मौका मिला उन्होंने यथाशक्ति कांग्रेस की सेवा की है।

तूफान के कारण वे घबरा गए थे। बहुत नुकसान हुआ था। जे में ही रहना पड़ता तो उनको डर था कि नौकर-चाकर बची-खुची फसर भी अपने हवाले कर लेते। इसलिये लक्ष्मीपति रिश्तेदारों द्वारा सिफा रिश करवा कर जेल से बाहर आ गये थे। उनकी छोटी-छोटी बातें भी तुरन्त मालूम हो जाती थीं। शोहरत की कीमत बड़ी महँगी होती है।

वे नरसिंह मामा के मित्र थे। एक ही जाति के थे। सभा-समितियों में साथ बैठा करते थे।

मामा ने उनके द्वारा अपने घर खबर भिजवाई थी। वे मामा के घर के सामने से जा रहे थे। हम बाहर बैठे थे। सड़क पर ही से उन्होंने बताया, "नरसिंह ने कहा है कि वे अच्छे हैं। कोई चिन्ता न करें। घर वाले उनको पत्र लिख सकते हैं, पर वे नहीं लिख सकते।"

वे शायद घर पहुँचने की जल्दी में थे। उनके साथ दो-तीन आदमी भी थे। वे चलते गये। मैं उनके साथ गया। बात-चीत के सिलसिले में मालूम हुआ कि मामा घर के बारे में हमेशा चिन्तित रहते थे। प्रसाद के बारे में विज्ञापन पढ़ने के बाद तो और भी चिन्तित हो गये थे।

मैं पुल से वापस चला आया। घर के सामने, नरसिंह मामा की पत्नी मुँह लम्बा किये खड़ी थीं। जो पैसा प्रसाद के पास भेजा गया था, उसने वह वापस कर दिया था। शायद वह उस पते पर न था, जिस पते पर रुपया भेजा गया था। यह भी सम्भव था कि वह चाचा का भेजा हुआ रुपया न लेना चाहता हो। मुमकिन है कि उसे ट्यूशन मिल गई हो और पैसे की जरूरत न हो। क्या कारण था, स्पष्ट न जाना जा सकता था।

अखबार पढ़ा तो हम दंग रह गये। नरसिंह मामा की पत्नी बेहोश-हो गईं। वायुसुता सिसक-सिसक कर रो रही थी। सुब्बु मामा और झुंझला उठे। समाचार यों था—

"प्रसाद नाम का एक आंध्र विद्यार्थी, अपने कमरे में बेहोश पाया गया। कमरा अन्दर से बन्द था। वह, मालूम हुआ है, कई दिनों से भूखा था। वह इस समय हस्पताल में क्षीणावस्था में है।"

यदि यह खबर पढ़ कर ब्रह्मेश्वर राव और उनकी पत्नी भागे-भागे न आते तो शायद उस दिन सुब्बु मामा रुपया लेकर मद्रास न जा पाते। पैसे की तंगी थी। रामस्वामी ने भी उधार देने से मना कर दिया था। उनके साथ नरसिंह मामा की पत्नी ने जाने की जिद पकड़ी। मामा को लाचार हो उन्हें ले जाना ही पड़ा।

ब्रह्मेश्वर राव और उनकी पत्नी, वायुसुता आदि बच्चों को अपने साथ काह्रूर ले गये। जाने से पहले वे अन्नपूर्णा मामी से भी मिलने गये।

मामी घर के पिछवाड़े में बैठी उल्टी कर रही थीं। मुँह धोकर ब्रह्मेश्वर राव की पत्नी से वे मिलने आईं। थोड़ी देर बैठीं और फिर पिछवाड़े में उल्टी करने चली गईं। वीरम्मा मुस्कराई। इस बीच सुब्बाराव भी पत्नी के साथ वहाँ आ पहुँचा। वे ही अन्नपूर्णा मामी की देख-भाल कर रहे थे।

रम्मा थोड़ी देर किवाड़ की आड़ में से देखती रही। उन्होंने ब्रह्मेश्वर राव की पत्नी से बात-चीत करने की जरूरत न समझी। फि कलश उठा कर, उनके सामने से कुएँ की ओर निकली। "बच्चे ठी हैं न?" वीरम्मा ने पूछा।

"क्या ठीक होंगे? बाप घर में हो तो बच्चों की परवरिश हो। जेल में पड़े हैं और हम यहाँ।" मुँह मसोस कर वीरम्मा आगे बढ़ यह सुन अन्नपूर्णा मामी फिर उठ कर चली गईं। न मालूम कि करने गईं या कुछ और करने। यह भी सम्भव है कि वे ब्रह्मेश्व

की पत्नी के सामने बिना रोये न बैठ पा रही हों।

"क्यों, अन्नपूर्णा का कौन-सा महीना है?" अहोश्वर राव पत्नी ने मुसकराते हुए सुब्बाराव की पत्नी से पूछा।

"शायद चौथा लग रहा है।" सुब्बाराव की पत्नी ने कहा।

"आखिर उसके पूजा-व्रत सफल हुए। उसका भाग्य भी निराला है।

"अब भी दिन-रात पूजा-पाठ करती है।"

"क्यों न करे, सालों बाद कोख फली है। आप ही लोगों के जिम्मे है। कभी जरूरत पड़े तो मेरे पास खबर भेजिये, कोई कमी न होने पाये।"

"वह न कुछ कहती है, न माँगती है, दिन-रात रोती रहती है।"

"क्या करे बेचारी? वह जब जेल में मुसीबतें झेल रहा है तो यह करे भी तो क्या करे?"

कुछ देर तक इधर-उधर की बातें चलती रहीं। फिर वे काट्टूर चले गये।

मैं घूमता-घामता कुएँ के पास गया। चार-पाँच औरतें वहाँ बैठी थीं। वीरम्मा कुएँ के पास बैठी मुख धोती जाती थी और कुछ कहती जाती थी। बातें कड़वीं, बातें कहने का तरीका कड़वा। दूध पिलाने से साँप भी पालतू हो जाता है, पर खोटे लोग उसी हाथ को काटते हैं, जो उन्हें खिलाता है।

किसी से खम्मा कह रही थी, "जानती हो अन्नपूर्णा के पैर भारी हैं? पति जेल में है और इसे गर्भ है। पूजा-पाठ का ढकोसला है। मैं तो वहीं रहती हूँ। हमेशा सुब्बाराव आता-जाता रहता है। घंटों उससे हँस कर बातें करती रहती है। साथ राजमन्द्री भी ले गई थी। कोई आदमी भले ही कितना दोस्त हो, क्या किसी औरत के लिए खाने-पीने की चीजें यों ही मुहय्या करता है। सुब्बाराव को तो तुम जानते ही हो। आवारा-गिर्द है। रोती है तो क्यों न रोये? डर है कि पति को मालूम हो गया तो आफत आ जायेगी।"

"पर गर्भ?" वह स्त्री कुछ कहना चाहती थी कि खम्मा ने कहा,

...चों के लिए जिन्दगी भर तरसती रही, गर्भपात नहीं करेगी।"
...या कुल्ला करने लगी। मेरी मर्जी हुई कि उसकी जवान निकाल लूँ। ...ने में वह कहने लगी, "देखो, यह किसी से कहना नहीं। फाल्तू बेचारे ... तबाही हो जायेगी।" अफवाह फैलाने वाले, हर अफवाह को ...ान में ही बताते हैं। हर कोई दूसरे से कहता जाता है, "तू किसी से न ...कहना" और अफवाह देखते-देखते सब जगह फैल ही जाती है।

शाम को जब मैं घर से निकला तो दो-चार जगह और अन्नपूर्णा मामी के बारे में कानाफूसी चल रही थी। खम्मा ने जो चिराग जलाया था, वह अब बड़ी आग हो गई थी। झूठी बात भी बहुमत के दबाव से सच हो जाती है। सब कोई धुएँ और आग का न्याय उगलने लगते हैं। मुझे नहीं मालूम कि मामा तक भी यह अफवाह पहुँची कि नहीं।

मैं नरसिंह मामा के घर पहुँचा। वहाँ अप्पाराव खड़े-खड़े किवाड़ खटखटा रहे थे। किवाड़ अन्दर से बन्द था और पिछवाड़े में ताला लगा था। उन्हें देखकर मुझे अचरज हुआ। क्योंकि कॉलेज की छुट्टियाँ अभी शुरू न हुई थीं। पूछने पर मालूम हुआ कि पैसा न भेजा जाने के कारण वे अपना अध्ययन न जारी कर सके थे। माँ-बाप को पैसे के लिए लिखा तो उन्होंने कहा कि अपने ससुर से माँगो। और ससुर जेल में थे। लाचार पढ़ाई छोड़कर चले आये। वे भी कातर गये।

खेतों में धान कट चुका था। फसल बहुत कम हुई थी। वेन्कय्य... के खेत में इतना भी न उपजा था कि सालभर के घरेलू खर्च के लिये ... काफी हो। मुवासादार के हथियाये हुए खेत में खूब फसल हुई थी... सुब्बु मामा की कोशिश तो बहुत रही पर मुश्किल से एक चौथाई फ... ...टी। यही हालत ब्रह्मेश्वर राव के खेतों की थी।

प्रसाद घर आगया था। जिद में एक साल व्यर्थ हो गया था। ... ...कुछ या और ही कुछ और गया। शायद अगर उसकी माँ न जा...

वह मद्रास से आता भी न। बहुत कमजोर हो गया था।

खम्मा, नरसिंह मामा की पत्नी से बातचीत करने आई। उनमें से किसी ने भी, स्वप्न में भी किसी की प्रशंसा न की थी। बुराई करने का मौका कभी न चूकती थीं। खम्मा ने, अन्नपूर्णा मामी के बारे में गढ़ी-गढ़ाई कहानी, नरसिंह मामा की पत्नी को भी सुनाई। वे कहानी सुन कर खुश हुईं। उसे वे हर किसी को नमक-मिर्च लगाकर सुनाने लगीं।

लक्ष्मी पति के कहने के बाद कर्णं हर सप्ताह नरसिंह मामा को पत्र लिखा करते थे। फसल का वृतान्त भी उन्हें भेजा गया। दामाद के घर आने और सुब्बु मामा की पत्नी के घर न आने के बारे में भी उनको लिखा गया।

दिन बीत रहे थे। महायुद्ध ने भी करवट बदली। जर्मनों के पैर रूसियों के सामने उखड़ रहे थे। उनका आगे बढ़ना तो अलग, वे भारी हानि के साथ पीछे हट रहे थे। अफ्रीका में भी वे भाग रहे थे। इंग्लैंड भी उनसे लोहा ले रहा था। भारत में आन्दोलन कतई बन्द-सा हो गया था।

मैं वुय्युर से आ रहा था। वीरवल्ली के कुएँ के पास पहुँचा था कि एक गाड़ी जाती देखी। भाग कर गाड़ी के पास गया। गाड़ी के अन्दर ध्यान से देखा तो नरसिंह मामा बैठे थे। मेरे अचरज की सीमा न रही। मामा ने मुझे भी गाड़ी में बिठा लिया।

"सुना है, प्रसाद घर आ गया है। कैसा है?" उन्होंने पूछा।

"अच्छा है।"

"अप्पाराव भी आया हुआ है?"

"हाँ।"

"तुम्हारी अन्नपूर्णा मामी कैसी हैं, कहाँ है?"

"अच्छी हैं, अपने घर में हैं।"

"अपने घर में?"

"जी।"

"मुच्चु मामा की पत्नी घर वापिस आई कि नहीं?"

"जी, नहीं आई हैं।"

"नहीं आई?" मामा को अफसोस और आश्चर्य हो रहा था।

"प्रसाद के बारे में क्या आपने अखबार में पढ़ा था?"

"हाँ।" वे इधर-उधर देखने लगे। शायद वे बोल भी न पाते थे।

चीरवल्लि पास आ रहा था। गाँव के आदमी नजर आ रहे थे। जो कोई नरसिंह मामा को देखता, उनकी गाड़ी के पीछे चलने लगता। किसी को भी उनके आने की सूचना न थी। सभी उनको आता देख चकित थे। गाँव वालों की संख्या बढ़ती गई। मामा भी गाड़ी से उतर गये। गाँव वालों के साथ चलने लगे। वे लड़खड़ा रहे थे। चेहरा उदास जरूर था, पर उसमें कोई परिवर्तन न था।

"क्या आप रिहा कर दिये गये हैं?" मैंने झिझकते हुए पूछा।

"मैंने ही अपने को रिहा कर लिया है।" कहते-कहते नरसिंह मामा ने अपना सिर नीचा कर लिया। चेहरे की उदासी और भी बढ़ गई। वे चुप हो गये। किसी ने कुछ न पूछा। सब उनके साथ चलते जाते थे।

बाद में पता लगा कि उन्होंने पारिवारिक कठिनाइयाँ, प्राकृतिक विपत्तियों के कारण सरकार से क्षमा माँग ली थी। अतः वे रिहा कर दिये गये थे। परिवार की परवरिश की जिम्मेवारी उन पर थी और वे उसे पूरा न कर पा रहे थे। कांग्रेस के प्रति वे पहिले ही उदासीन हो गये थे। करते तो क्या करते?

चतुर्थ परिच्छेद

नरसिंह मामा अगले दिन ही सुब्बु मामा की ससुराल गये। अपने भाई को भी उन्होंने साथ आने को कहा, पर वे न गये। वे भी अड़े हुए थे।

नरसिंह मामा के बहुत-कुछ कहने पर भी उनका परिवार मुरझाये हुए फूल की पंखुड़ियों की तरह अलग-अलग हो रहा था। बचपन में जमींदारी की निश्चिन्तता देखी थी, अब पैसे की इतनी तंगी थी कि हर छोटी बात समस्या बनकर उलझ जाती थी।

मामा जब सुब्बु मामा की ससुराल से वापिस आये तो साथ सुब्बु मामा की पत्नी और बच्चों को भी लाये। मनाने-समझाने में ज़रूर दो-तीन दिन लगे। भाई की पत्नी के घर आने पर वे कुछ मुस्कराये पर वह मुस्कराहट भी क्या थी? टूटे-फूटे खण्डहर पर दो-चार कुम्हलाये फूलों की तरह थी, सूखते पेड़ की रही-सही नमी की तरह।

अभी घर आये हुए पूरे दो-तीन घंटे भी न हुए थे कि सुब्बु मामा की पत्नी लाल-पीली होने लगीं। बच्चों पर भी गरमाने लगीं। उनके आते ही अगर मामा दो-चार बातें हँसकर कहते तो यह तूफान शायद न उमड़ता।

घर में खाने-पीने की कोई चीज न थी, चावल भी न थे। सुब्बु मामा को इसकी फिक्र न थी, वे अपने भाई के घर खाया करते थे। यह नहीं है, वह नहीं है, कह-कहकर उनकी पत्नी गरज रही थी और वे पृथ्वी की तरह शांत बैठे थे। आसमान जब गरज-गरज कर हार जाता है

ौर रोने लगता है, तब ही जमीन का हृदय पिघलता है। चिल्लाती-चिल्लाती सुब्बु मामा की पत्नी रो पड़ीं। रोती-रोती भी वे पति को कोसती जाती थीं।

"अच्छा होता मैं पत्थर से शादी करती। क्या पाया है शादी करके ? महीनों घर बैठी रही और ये पूछने भी न आये।"

पत्नी को यों कहते देख मामा ने बच्चों को बाहर जाने के लिये कहा। "उन्हें बाहर क्यों भेजते हो ? उन्हें क्यों पास खींचोगे ? भाई के जो बच्चे हैं ? बच्चों पर प्यार था तो कम-से-कम उन्हें तो देखने आते ! वे भी जानें कि उनके पिता का दिल नहीं, पत्थर है।"

"और तुम्हारा दिल नहीं, तेजाब की बोतल है।" सुब्बु मामा ने धीमे से कहा।

"मुझे तेजाब की बोतल कहते हो ? और तुम शायद शहद के छत्ते हो।" उनकी पत्नी ने ताने का जवाब ताने से दिया। मामा धोती संभालते हुए बच्चों को लेकर घर से बाहर चले गये।

"जा कहाँ रहे हो ? घर में बैठी क्या मैं मक्खियाँ मारूँ ? यहाँ कुछ हो तब न ? चावल तो लादो।" पत्नी चिल्ला रही थी।

"भाई साहब के घर किसी को भेजकर चावल मंगवा लो न ?" सुब्बु मामा ने कहा। मामा यद्यपि छोटी-छोटी बातों पर झुँझला उठते थे, तो भी वे पत्नी के सामने जबान को काबू में किये हुए थे।

"मैं कोई भिखारिन नहीं हूँ कि किसी के घर से चावल मंगाऊँ फाके कर लूँगी, पर·····बच्चे भी खाली पेट सोयेंगे।"

"खैर, चिल्लाती क्यों हो ?"

"चिल्लाऊंगी क्यों नहीं ? औरों के घर फसल कटकर आई है यहाँ घर खाली करके दूसरों को चावल भेज दिये गये हैं। दान चाहते हो तो पहिले दान के लायक कमाओ तो सही। तुम जा क हो ?"

"घर में तुम बैठने दो तब न ?" सुब्बु मामा ने मुस्कराते हु

"जाओगे कहाँ ? भाई के पास इतने दिन तो रहे हो। मैं क्या तुम्हें काटती हूँ ? महीनों बाद आई हूँ। जाने मेरी भी क्या मनहूस शक्ल है कि देखने वाले भी आँखें मीच लेते हैं।" सुब्बु मामा की पत्नी आँसू पोंछने लगीं। आँसू यद्यपि पहिले ही बन्द हो गये थे। सुब्बु मामा आँगन में चहलकदमी कर रहे थे, बच्चे खेलते-खेलते दूर चले गये।

"यहाँ आओ भी।" पत्नी ने बुलाया। वे अन्दर जाकर खटिया पर बैठ गये। पत्नी नीचे बैठी थीं। दोनों एक-दूसरे को देख रहे थे, चुप थे। थोड़ी देर बाद घर के किवाड़ बन्द हो गये।

शाम को जब नरसिंह मामा अन्नपूर्णा मामी को देखने चले तो उनके साथ रामय्या था। वह जमीन के बारे में अपना रोना सुना रहा था। वह अब भी चक्की के दो पाटों के बीच था। एक तरफ वेन्कटेश्वर राव और मुखासादार का दबाव था और दूसरी तरफ रामस्वामी का।

अन्नपूर्णा मामी घर में न थीं। वे सुब्बाराव और खम्मा के बड़े लड़के को लेकर बुय्युर के वीरम्मा के मंदिर गई हुई थीं। शायद कोई मनौती थी। नियमित रूप से अन्नपूर्णा मामी बुय्युर हो आती थीं। उनके बारे में अफवाहें तब भी प्रचलित थीं।

मामा वहाँ पहुँचे ही थे कि खम्मा कितनी ही बातें उगल गई। मामा उनके स्वभाव से परिचित थे। वे वहाँ अधिक समय न रह सके।

नरसिंह मामा अपनी पारिवारिक स्थिति ठीक करने में लगे हुए थे कांग्रेस में उनके विरुद्ध कीचड़ उछाला जा रहा था। कांग्रेसी उन किनारा कर रहे थे। उनकी राय में सरकार से क्षमा माँगना एक ए अपराध था।

पता नहीं बौद्धिक कट्टरता की क्यों प्रशंसा की जाती है। वह वस्तुतः गुता है। भले ही उसकी परिभाषा को तोड़-मरोड़ दिया गया हो। सेयों ने यह न सोचा कि उन्होंने क्षमा क्यों माँगी थी।

नन्दमूरू से लक्ष्मीपति आये। कांग्रेसियों के वे ही अब अगुआ थे।
तो कांग्रेस छलनी हो चुकी थी। पर इक्के-दुक्के कहीं-कहीं घूम फिर
थे। लक्ष्मीपति ने छुपे-छुपे नरसिंह मामा की निन्दा के लिये गाँव
सभा बुलानी चाही। उन्हें अपनी पुरानी दोस्ती का भी ख्याल न
रहा। हो सकता है कि इस तरह की कार्यवाही से वे अपना ही दोष
छुपाना चाहते हों। पहुँचे हुए तिकड़मबाज थे। बहुत कोशिश की, पर
किसी ने उनकी न सुनी।

लक्ष्मय्या का काम बहुत जोरों पर था। हो-हल्ला करके वे तूफान
के बाद सरकार से कुछ मदद भी ले आये थे। आसपास के गाँवों के
नवयुवक उनकी टोली में शामिल हो गये थे। कई औरतें भी उनमें थीं।
सैकड़ों ने अपना सर्वस्व पार्टी को दे दिया था। वे जगह-जगह साम्यवाद
का प्रचार कर रहे थे। उनकी सभाओं में सैकड़ों एकत्रित होते। आन्ध्र
के उस इलाके में एक नया विचित्र विस्फोटक वातावरण बन रहा था।

लक्ष्मय्या को लक्ष्मीपति के दाव-पेंतरे की बू मिल गई। उन्होंने
अपनी एक सभा का नहर पार आयोजन किया। खूब ढिंढोरा पीटा गया।
सैकड़ों की संख्या में लोग जमा हुए। लक्ष्मय्या प्रभावशाली वक्ता थे।
गोलियों की तरह शब्द निकलते थे उनके मुख से। सुनने वालों को रोमांच
होता। उन्होंने अपने भाषण में लक्ष्मीपति की भी पोल खोली।

लक्ष्मीपति को लेने-के-देने पड़ गये। कोतवाल बनकर आये थे।
उल्टा चोर बनना पड़ा। शर्म का मादा भी उनमें कम था। जब गाँ
में और कहीं शरण न मिली तो लक्ष्मय्या को बुरा-भला कहते, नरसिं
मामा के पास पहुँचे।

मामा की हालत उस तालाब की तरह थी, जो सूखकर कीचड़ हो
हो। आंधी भले ही लहरों को मचलादे, पर कीचड़ टस-से-मस
होता। वह आंधी को ही अपने में समा लेता है। मामा आंधि
आदी हो गये थे।

लक्ष्मीपति जब मामा के घर पहुँचे, तो उनके पीछे गाँव के

का झुंड भी पहुँचा। गाँव में साम्यवाद का नशा था। धनियों की को
नहीं सुनता था। मुझे याद है। कभी लक्ष्मीपति मामा के घर घोड़े पर
सवार होकर आया करते थे। तब हर कोई आता-जाता उनको
सलाम किया करता। जब मामा ने उनके लिये डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सदस्य
होने के लिये जमीन-आसमान एक किया तो सारे गाँव ने लक्ष्मीपति के
नारे लगाये थे। वही गाँव आज उन्हें घृणा की नजरों से देख रहा था।
जमाना बदल रहा था।

लक्ष्मीपति ओहदे और हैसियत के प्यासे थे। अव्वल दर्जे के खुदगर्ज
भी। वे मामा जैसे गरीब भलेमानसों का इस तरह उपयोग करते थे, जिस
तरह पहाड़ पर चढ़ता बूढ़ा पेड़ों का सहारा लेता है। रास्ता तय हो जाने
पर उन पेड़ों की उसके लिये कोई कीमत नहीं रह जाती। वे दोस्ती तभी
तक निभाते हैं, जब तक उनका स्वार्थ पूरा होता है।

"मैंने शायद गल्ती की कि सरकार से क्षमा माँगी।" नरसिंह मामा
कह रहे थे। इतने में वेन्कय्या चिल्लाया, "जो कुछ आपने किया ह
ठीक किया है। यहाँ तूफान के कारण जरा धान झुका कि नहीं, मिन्न
कर-कराकर जेल से छूट आते हैं......देश-सेवा के लिये भी घर में पैस
चाहिए, नहीं तो न देश पूछता है, न सेवा ही होती है।" सब लक्ष्मी-
पति की ओर घूरने लगे। लक्ष्मीपति की जिन्दगी में एक भीड़ उनको
पहली बार शायद आड़ों हाथ ले रही थी।

"मेरी जेल जाने की इच्छा न थी। मुझे जबरदस्ती ले जाया गया।
रे सामने एक द्विविधा थी। मुझे परिवार और राष्ट्र में से एक को
ुनना था और मैंने परिवार को पहिले ही चुन लिया था। कई परिवार
ारा ही राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं। फिलहाल हमारे लिये यह ही काफी
। यह गलत हो सकता है, पर लाचारी है। परिवार की सेवा से मेरा
लब तिकड़मबाजी करके लड़कों को बड़ी-बड़ी नौकरियाँ दिलवाना
ीं है, जमीन-जायदाद हड़पना नहीं है.....” भीड़ हँसने लगी।
मीपति के एक लड़के पुलिस में बड़े अफसर थे, दामाद कहीं डिप्टी

क्टर थे।

"हम मानव जन्म लेते हैं, पर कई तंगियों के कारण मनुष्य नहीं
न पाते। वह मनुष्य भी क्या जो शिक्षित न हो ? हमारी गरीबी भी
इतनी भयंकर होती है कि हम अपने लड़कों को पढ़ा-लिखाकर मनुष्य
तक नहीं बना पाते, लड़कियों का घर नहीं बसा पाते। आहें भरते-
भरते जिन्दगी कट जाती है। जो समृद्ध हैं, शायद वे इसकी कल्पना
भी नहीं कर पाते। अगर जिन्दगी में मैं अपने दो-तीन लड़कों को
मनुष्य बना गया, शिक्षित कर गया, तो मेरी राष्ट्र-सेवा पर्याप्त है। राष्ट्र
के दो-तीन सदस्यों को यदि मैं सच्चा मनुष्य बना सका, तो मैं समझूँगा
कि मेरा काम समाप्त हो गया। कभी मैंने सपने देखे थे कि मैं सारे गाँव
को शिक्षित कर सकूँगा, पर वह सपना अधूरा ही समाप्त हो गया है।
अब तो पाठशाला का छप्पर भी मिट्टी में मिल गया है। गाँव को शिक्षित
करना अलग, अब मेरे बच्चे ही नहीं पढ़ पा रहे हैं। लड़का मद्रास में
ट्यूशनों की तलाश में एक साल ज़ाया कर बैठा, भूखा-प्यासा तड़पता
रहा। दामाद पैसे न होने के कारण पढ़ाई छोड़ कर घर आ गया। क्या
करता बेचारा ? मेरे पास कोई जमीन-जायदाद तो है नहीं कि मज़दूर
मेहनत-मशक्कत करें और घर वाले चैन की वंशी बजाएँ। जो जमीन थी
सो भी बेच दी। बच्चे छोटे हैं। मैं ही अकेला कमाने वाला हूँ। परि
वार की जिम्मेदारियाँ अधिक हैं। अगर राष्ट्र मेरे परिवार की जिम्मेद
ले ले तो मैं राष्ट्र के साथ हूँ। फिर आप जैसे तो हैं ही राष्ट्र-सेवा क
के लिए।"

मामा का ताना लक्ष्मीपति को बाण की तरह चुभा। मैंने
को इतने स्पष्ट रूप से, इतने लोगों के सामने, अपने परिवार की
नाइयों के बारे में कभी बोलते न सुना था। बातें दिल से नि
थीं......दिल की तड़पन सुरीली तान की परवाह नहीं करती,
बनकर निकल ही जाती है। शिष्टता भी उसे मूक नहीं कर पा
बनकर निकल ही जाती है। शिष्टता भी उसे मूक नहीं कर पा
... के तूफान की परवाह नहीं है। जो पहले से ही

का झुंड भी पहुँचा। गाँव में साम्यवाद का नशा था। धनियों की को
नहीं सुनता था। मुझे याद है। कभी लक्ष्मीपति मामा के घर घोड़े
सवार होकर आया करते थे। तब हर कोई आता-जाता उनक
सलाम किया करता। जब मामा ने उनके लिये डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सदस्य
होने के लिये जमीन-आसमान एक किया तो सारे गाँव ने लक्ष्मीपति के
नारे लगाये थे। वही गाँव आज उन्हें घृणा की नज़रों से देख रहा था।
जमाना बदल रहा था।

लक्ष्मीपति ओहदे और हैसियत के प्यासे थे। अव्वल दर्जे के खुदगर्ज
भी। वे मामा जैसे गरीब भलेमानसों का इस तरह उपयोग करते थे, जिस
तरह पहाड़ पर चढ़ता बूढ़ा पेड़ों का सहारा लेता है। रास्ता तय हो जाने
पर उन पेड़ों की उसके लिये कोई कीमत नहीं रह जाती। वे दोस्ती तभी
तक निभाते हैं, जब तक उनका स्वार्थ पूरा होता है।

"मैंने शायद गल्ती की कि सरकार से क्षमा माँगी।" नरसिंह मामा
कह रहे थे। इतने में वेन्कय्या चिल्लाया, "जो कुछ आपने किया
ठीक किया है। यहाँ तूफान के कारण जरा धान झुका कि नहीं, मिन्न
कर-कराकर जेल से छूट आते हैं......देश-सेवा के लिये भी घर में पैस
चाहिए, नहीं तो न देश पूछता है, न सेवा ही होती है।" सब लक्ष्मी
पति की ओर घूरने लगे। लक्ष्मीपति की जिन्दगी में एक भीड़ उनको
पहली बार शायद आड़ों हाथ ले रही थी।

"मेरी जेल जाने की इच्छा न थी। मुझे जबरदस्ती ले जाया गया।
मेरे सामने एक द्विविधा थी। मुझे परिवार और राष्ट्र में से एक को
चुनना था और मैंने परिवार को पहिले ही चुन लिया था। कई परिवार
द्वारा ही राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं। फिलहाल हमारे लिये यह ही काफी
है। यह गलत हो सकता है, पर लाचारी है। परिवार की सेवा से मेरा
मतलब तिकड़मबाजी करके लड़कों को बड़ी-बड़ी नौकरियाँ दिलवाना
नहीं है, जमीन-जायदाद हड़पना नहीं है......" भीड़ हँसने लगी।
लक्ष्मीपति के एक लड़के पुलिस में बड़े अफसर थे, दामाद कहीं डिप्टी

...क्टर थे।

"हम मानव जन्म लेते हैं, पर कई तंगियों के कारण मनुष्य नहीं
...न पाते। वह मनुष्य भी क्या जो शिक्षित न हो? हमारी गरीबी भी
...तनी भयंकर होती है कि हम अपने लड़कों को पढ़ा-लिखाकर मनुष्य
तक नहीं बना पाते, लड़कियों का घर नहीं बसा पाते। आहें भरते-
भरते जिन्दगी कट जाती है। जो समृद्ध हैं, शायद वे इसकी कल्पना
भी नहीं कर पाते। अगर जिन्दगी में मैं अपने दो-तीन लड़कों को
मनुष्य बना गया, शिक्षित कर गया, तो मेरी राष्ट्र-सेवा पर्याप्त है। राष्ट्र
के दो-तीन सदस्यों को यदि मैं सच्चा मनुष्य बना सका, तो मैं समझूँगा
कि मेरा काम समाप्त हो गया। कभी मैंने सपने देखे थे कि मैं सारे गाँव
को शिक्षित कर सकूँगा, पर वह सपना अधूरा ही समाप्त हो गया है।
अब तो पाठशाला का छप्पर भी मिट्टी में मिल गया है। गाँव को शिक्षित
करना अलग, अब मेरे बच्चे ही नहीं पढ़ पा रहे हैं। लड़का मद्रास में
ट्यूशनों की तलाश में एक साल ज़ाया कर बैठा, भूखा-प्यासा तड़पता
रहा। दामाद पैसे न होने के कारण पढ़ाई छोड़ कर घर आ गया। क्या
करता बेचारा? मेरे पास कोई जमीन-जायदाद तो है नहीं कि मज़दूर
मेहनत-मशक्कत करें और घर वाले चैन की वंशी बजाएँ। जो जमीन थी
सो भी बेच दी। बच्चे छोटे हैं। मैं ही अकेला कमाने वाला हूँ। परि...
वार की जिम्मेदारियाँ अधिक हैं। अगर राष्ट्र मेरे परिवार की जिम्मेदा...
ले ले तो मैं राष्ट्र के साथ हूँ। फिर आप जैसे तो हैं ही राष्ट्र-सेवा क...
के लिए।"

मामा का ताना लक्ष्मीपति को बाण की तरह चुभा। मैंने म...
को इतने स्पष्ट रूप से, इतने लोगों के सामने, अपने परिवार की...
नाइयों के बारे में कभी बोलते न सुना था। बातें दिल से निक...
थीं......दिल की तड़पन सुरीली तान की परवाह नहीं करती, व...
बनकर निकल ही जाती है। शिष्टता भी उसे मूक नहीं कर पाती...
... की परवाह नहीं है। जो पहले से ही ब...

उसका तूफान क्या बरबाद करेगा ? यह तूफान पक्षपात के रोगी के लिए सिरदर्द की तरह है । मैं नहीं घबराता । परिवार में भले ही दरारें पड़ जातीं, मैं उसे भी जैसे तैसे सह लेता, पर बच्चों का कालेज-स्कूल छोड़ना मैं न सह सका । अशिक्षित व्यक्ति पशु है । मैं स्वयं खास पढ़ा-लिखा नहीं हूँ, इसलिए शिक्षा की कीमत भली भाँति जानता हूँ । खैर, यह तो मेरा रोज का रोना है । आइये, खाना खाइये ।" नरसिंह मामा ने लक्ष्मीपति को भोजन के लिए निमन्त्रित किया । शायद इतना सुनने के बाद लक्ष्मीपति नरसिंह मामा के घर खाने न जाते । पर भीड़ से बचने को कोई और उपाय न था । वे मामा के साथ अन्दर चले गये ।

कांग्रेसी नेताओं की हिदायतों पर वे नरसिंह मामा की निन्दा करने आये थे, पर स्वयं निन्दित हुए । अपने को बदनामी से बचाने के लिए वे नरसिंह मामा को बदनाम करना मान गये थे, पर उनका पैंतरा गलत निकला । अपमानित होने पर वे मामा से नाराज भी हो गये थे ।

बाद में यह सुनने में आया कि वे कहीं और नरसिंह मामा को साम्यवादी कहकर बदनाम कर रहे थे । इसका नतीजा यह हुआ कि कांग्रेस वाले नरसिंह मामा का और भी अविश्वास करने लगे । वे यद्यपि साम्यवादी न थे ।

नरसिंह मामा बुय्युर जमींदार साहब के पास भी गये । मामा ने उनको तूफान की बरबादी के बारे में बताया और उनके कहने पर उन्होंने हमारे गाँव के कर भी माफ कर दिये थे । सारा-का-सारा गाँव मामा को बधाई दे रहा था ।

कर्णं तो बहुत ही खुश थे । वे अब निश्चिन्त थे । घर की लड़कियों का विवाह कर दिया था । लड़का भी पैतृक वृत्ति सीख रहा था । वे कार्य से निवृत्त होकर राम-नाम जपते शेष जीवन बिताना चाहते थे । गाँव की गुटबन्दी ऐसी थी कि कर्णं घुन बने हुए थे । मुन्सिफ कुछ गलत

ता तो लोग कर्णं को ही कोसते, क्योंकि मुन्सिफ लगभग काला
क्षर भैंस बराबर था। अगर कर्णं कुछ अच्छा काम करते तो मुन्सिफ
अपना ढिढोरा पीटता।

मामा के आने के बाद तालाब के किनारे फिर लोगों का जमघट लगने लगा था। रोज अखबार पढ़ा जाता था। पर पहले जैसा रंग न जमता था। बातचीत भी कम होती थी। लोग मामा से दस पूछते, और वे एक का जवाब देते। अन्यमनस्क-से रहते।

उस दिन दूसरों के चले जाने के बाद कर्णं से उन्होंने पूछा, "आज-कल जमीन का भाव कैसा है?"

"कोई बेचने वाला हो तब न भाव बने।"

"फिर भी।"

"अच्छी जमीन पाँच हजार से ऊपर बिक रही है।"

"हमारी कितने में बिकेगी?"

"क्यों, जमीन बेचने का भूत फिर सवार हुआ है? सोने जैसी जमीन है। आपको भी क्या खब्त सवार हुआ है?"

"क्या किया जाय? आमदनी कम है, खर्च ज्यादा और कर्ज बढ़ता जाता है। कर्ज पालना मुझे बिलकुल पसन्द नहीं।"

"आमदनी का कोई स्रोत तो हो?"

"ढूँढेंगे तो स्रोत भी मिल जायगा। पर कर्ज को खत्म करना पड़ेगा। कर्ज एक ऐसा नाला है, जिसमें हमेशा बाढ़ बनी रहती है। कुछ दिन पहले जरूरी कर्ज चुकाया था और इस बीच में जाने कितना बढ़ गया है।"

"बेचने वाला चाहिए, खरीदने वालों की क्या कमी है? रामय्या ही जमीन खरीदने के लिए लार टपकाता फिरता है। पर टेश्वर राव ने उसकी नाक में दम कर रखा है। वह अपना बाग फिर खरीदना चाहता है। सूरय्या और मुखासादार भी
तीन और छः हो रहे हैं। रामय्या की लड़की, पद्मा सूरय्या

हिल-मिल गई है। मुखासादार की कभी उस पर नजर थी।"

"खैर, उस सबसे हमें क्या?"

"मेरी सलाह मानिये, आजकल ज़मीन बेचना एकदम नादानी है। आपके इतने रिश्तेदार हैं......ब्रह्मेश्वर राव ही हैं, उनसे क्यों नहीं मदद लेते?"

"बेचारा ब्रह्मेश्वर राव कब तक और कितनी मदद देगा? रिश्तेदारी तभी तक है, जब तक कोई लेन-देन नहीं होता। मुझे यह सब पसन्द नहीं है।"

"आप जब सारे गाँव के लिए कर माफ करवा सकते हैं तो हमारी मदद भी क्यों नहीं करते?"

"क्यों, क्या चाहिए?"

"मैं अब कर्णं नहीं रहना चाहता। काफी कर ली। पैतृक वृत्ति है। कितने ही पुश्तों से चली आ रही है। अब ये मुखासादार वगैरह बुच्चय्या को दिलाने की कोशिश में हैं। बुच्चय्या को गाँव छोड़े अर्सा हो गया है। विजयवाड़ा में व्यापार शुरू किया था, बड़ा नुकसान हुआ। अब फिर गाँव आना चाहता है।"

"तब तुम क्या चाहते हो?"

"मैं चाहता हूँ कि मेरे बाद मेरे लड़के, कृष्णा राव को ही मिले यह 'कर्णांक'। जमींदार साहब दिलवा सकते हैं।"

"मैं नहीं समझता कि इसमें कोई कठिनाई होगी। मैं करवा दूँगा। तुम ज़रा जमीन के बारे में ध्यान रखना।"

"पर आप......जमींदार से क्यों नहीं कुछ लेते? वे तो सभी को देते हैं। गलती उनकी है जो न माँगें।"

"हाँ, इस बार कुछ माँग ही बैठा। हिम्मत न होती थी, अब भी नहीं होती। वे दामाद की शिक्षा का खर्च उठाना मान गये हैं। आज उसे फिर वाल्टायर भेज रहा हूँ। तुम नहीं जानते, मेरे दिल की क्या हालत हो रही है। माँग नहीं पाता हूँ, मांग कर जीना भी कोई जीना

है। खैर तुम जाओ।"

कहते-कहते, नरसिंह मामा भी उठ गये। वे सीना तानकर चलना चाहते थे। सीना तना था, पर पैर लड़खड़ा रहे थे। वह आत्म-सम्मान भी शायद बुरा है, जिसको आर्थिक आधार न मिला हो।

नरसिंह मामा के साथ एक दिन वेन्कट सुब्बय्या विजयवाड़ा से आये। उन दिनों अदालतों में मामा का कोई मुकदमा न था, इसलिए वकील के आने से गाँव में फिर अनुमानों की पतंगें कटने लगीं।

मामा बहुत व्यस्त थे। वे अपने साथ विजयवाड़ा से बहुत-से कागज़ात ले आये थे। वे अंग्रेजी में थे। वकील साहब उनको पढ़-पढ़कर उनका अर्थ बता रहे थे। बुय्युर से लक्ष्मीनारायण भी आये हुए थे। उनका बुय्युर में लकड़ी का व्यापार था। शुगर मिल और राईस मिल में भी उनके शेयर थे। जमीन-जायदाद भी थी। मामा के पुराने दोस्त थे।

बातचीत करके वेन्कट सुब्बय्या विजयवाड़ा चले गये, मामा काटूर। मैं और प्रसाद बातें करने लगे। वह अब भी कमजोर था।

"मालूम है, सुजाता अब बहुत बदल गई है? आजकल उसको अपने को हिन्दुस्तानी कहते हुए भी शायद शर्म आती है। बस चले तो अंग्रेजी पोशाक भी पहिने। कई दोस्त भी हो गये हैं।" प्रसाद ने कहा।

"मामा क्या सोचेंगे? वे सुजाता पर तो जान देते थे।"

"क्या सोचेंगे, कौन जाने? हटाओ इस बात को। चलो चलें मामी को देख आयें।"

हम मामा के घर पहुँचे। मामी घर में व्यस्त थीं। रम्मा अपनी पाँच-छः सहेलियों को लेकर देहली के पास बैठी गप्पें लगा रही थी। हम उनकी नजर बचाकर इमली के पेड़ के पास गये। डालियाँ ही रह

गई थीं। न पत्ते थे, न इमली ही थी। पेड़ भूखा, नंगा रोता-सा लगता था।

मामी को आवाज दी। वे हाँफती-हाँफती आईं। वे मुटिया गई थीं। पेट भी बढ़ गया था। चेहरे पर रौनक थी, पर आँखों में वही पुरानी उदासी। उन्होंने हमें देखकर मुसकराने की कोशिश की, पर आँखों में आँसू छलक आये। वे तुरन्त अन्दर चली गईं।

सुब्बाराव नौकर के सिर पर बोरा लदवाकर आया। वह मामी के पास आकर खड़ा हो गया। खम्मा ने अपनी सहेलियों को सुब्बाराव की ओर इशारा करके दिखाया। वे साड़ियाँ मुख में दबाकर खिसियाने लगीं। सुब्बाराव बोरा घर में रखकर चला गया। वह मिल से चावल लाया था।

हम घर जाना चाह रहे थे कि नरसिंह मामा उधर से आये। वे अकेले थे। कुछ सोचते-सोचते नीचे मुँह किये हुए थे। मामा खटिया पर बैठ गए। हम फाटक के पास दीवार के पीछे खड़े रहे।

"भाई अच्छा है, आज वकील साहब आये थे। वे सरकार के साथ चिट्ठी-पत्री करते रहते हैं। दिन भी गुजर रहे हैं, देखें......" मामा कह रहे थे और खम्मा किवाड़ की आड़ में से लगातार उनकी ओर देखती जाती थी।

"ठीक तो हो?" मामा ने पूछा।

मामी ने कोई उत्तर न दिया।

"अब अधिक सावधानी की ज़रूरत है। हमारे घर आकर रहो। बच्चे भी घर में हैं। हर तरह की सुविधा है। चलो वहीं रहना।"

मामी ने तब भी कुछ न कहा।

"इस हालत में अकेला रहना अच्छा नहीं। जाने कब किस चीज़ की ज़रूरत हो।"

मामी चुप खड़ी रहीं।

"मैं नहीं चाहता कि मैं गाँव में रहूँ और तुम्हें अलग यहाँ रहना

पड़े। भाई भी यही चाहता है कि तुम हमारे यहाँ रहो।"

मामी ने कुछ न कहा।

"मैं पहले ही आना चाहता था, लेकिन और ज़रूरी कामों में फँसा रहा। अब फ़ुरसत मिली है। एक बार आया भी था, पर तुम मन्दिर गई हुई थीं। मुब्बु की पत्नी भी आ गई है।"

मामी सुनती रहीं।

"यह घर भी तो तुम्हारा है। जैसा मेरा, वैसे मेरे भाई का। कोई तंगी न होगी।"

"यहाँ भी कोई तंगी नहीं है। मुझे यहीं रहने दीजिये। घर में कोई दिया जलाने के लिये तो हो। मेरी जरूरतें ही कितनी हैं?" मामी ने धीमे-धीमे कहा। उनकी आवाज़ में कम्पन था, लहजे में कसक थी। शब्द घुट-घुटकर निकल रहे थे।

"सोच लो, अगर मैं कुछ कर सकूँ तो मेरे पास ज़रूर खबर भेजना। भाई को कुछ कहना है?"

मामी ने कुछ न कहा, किन्तु उनके रोने की आवाज़ सुनाई पड़ी।

मेरी पढ़ाई के बारे में पिताजी कदाचित् उदासीन थे, माताजी मूक थीं। मैं स्कूल-फाइनल में पास हो गया था। पर इतना सयाना न हुआ था कि जिन्दगी का रास्ता स्वयं निकालता। मेरे लिये यह काफ़ी था कि प्रसाद कालेज में था, सुजाता कालेज में थी, इसलिए मुझे भी उनकी तरह कालेज में पढ़ना चाहिए। नरसिंह मामा का प्रोत्साहन मुझे निरन्तर मिल रहा था। उन्हीं की सहायता से मैं विजयवाड़ा कालेज में भरती हो गया था।

मैं एक दिन विजयवाड़ा से आ रहा था। वुय्युर में उतरा तो बस-स्टैन्ड के पास भीड़ देखी। भीड़ उचक-उचककर एक स्त्री की ओर देख रही थी। वीरवल्ली की सड़क पर नरसिंह मामा घर जा रहे थे।

पास की दुकान में कमलवेणी और उसकी माँ कुछ खरीद रही थ
कमलवेणी बनी-ठनी हुई थी। चलती तो सैकड़ों आँखें उसको घू
लगतीं। उसी को देखने के लिये भीड़ इकट्ठी हो गई थी।

कमलवेणी की माँ बहुत चालाक समझी जाती थी। उसने क
चौबच्चे देखे थे। जवानी में वह एक शमा थी, जिस पर कई परवा
बरबस बरबाद हो गए थे। अब वह बुझ चुकी थी पर उसकी लड़की
की लौ बढ़ रही थी। वह स्वयं रोशनी दिखाकर परवानों को जलने के
लिये ले आती थी।

जब कमलवेणी की माँ को मालूम हुआ कि वेन्कटेश्वर राव क
पलड़ा भारी हो रहा है और उन्होंने रग्घू मामा को जेल पहुँचाया है तं
उसको आमदनी का एक और रास्ता सूझा। वेन्कटेश्वर राव को वह
बहुत दिनों से लुभा रही थी। आखिर वह सफल भी हो गई। मगर
वेन्कटेश्वर राव की इतनी हिम्मत न हुई कि कमलवेणी को काबू में
रखे। वह कमलवेणी पर पागल हो चुका था। उनकी जवानी कभी
की ढल चुकी थी, किन्तु कमलवेणी के साथ वे जवानी के सपने ले
रहे थे। रोज किसी-न-किसी रास्ते, दो-चार घण्टे के लिये बुय्युर चले
आते थे। कमलवेणी पर पैसा बरसा रहे थे। अगर कंजूस के हाथ
ढीले हो सकते हैं तो औरत पर ही होते हैं। कमलवेणी के लिये उन्होंने
एक बड़ा मकान ले रखा था।

वेन्कटेश्वर राव अपनी मस्ती में थे, बुढ़ापे की मस्ती थी, इसलि
हमारा इलाका शान्त था। दंगे-फसाद भी कम होते थे। वे शायद यह
सोच फूले न समाते थे कि न केवल उन्होंने रग्घू मामा को जेल ही
भिजवाया था परन्तु उनकी रखैल को भी हथिया लिया था।

मैं नरसिंह मामा के पीछे भागा। वे तब तक उस पुल तक पहुँच
ाये थे, जहाँ सालों पहिले रग्घू मामा ने सुब्बम्मा को मुसलमानों से
चाया था। मेरे पीछे से आते ही वे चौंके। मैंने उन्हें अपनी कॉलेज
ी बातें सुनाईं। वे अन्यमनस्क से सुनते गये। सम्भवतः वे कुछ और

सोच रहे थे। भीड़ में उनको भी लोग अँगुली से दिखा रहे थे।

एक-डेढ़ मील का रास्ता था। मामा रास्ते भर कुछ न बोले। मेरी बात भी दो-चार मिनट में खतम हो गई। चुप-चाप ही रास्ता तय हुआ।

घर पहुँचे कि उनके लिए वहाँ एक और भीड़ तैयार थी। संयोग की बात थी। सुशीला और उसके बाप के साथ, कई हरिजनवाड़ा के लोग खड़े थे। औरतें भी थीं। सुशीला की गोद में एक बच्चा था। वह रो रही थी। नरसिंह मामा सहमे, सकुचाये।

मामा घर न गये। वे तालाब के किनारे पेड़ के नीचे थके-मांदे बैठ गये। फरियादें शुरु हुईं। सुशीला के पिता ने उसकी गोद के बच्चे को दिखाकर कहा, "यह आपके भाई की करनी है। अब यह बेचारी नौकरी से भी हाथ धो बैठी है। आप ही बताइये कि हम क्या करें?"

नरसिंह मामा पर बिजली सी गिरी। वे कुछ न बोल पाये। सुशीला का बाप उबल रहा था। वह बड़ा मुँहफट था, अव्वल दर्जे का आलसी, कामचोर, पियक्कड़। लड़की की कमाई पर जी रहा था। कई अदालतों और जेलों की उसने धूल छानी थी। झूठ उसकी जीभ पर मचलता था।

न मालूम यह कहाँ तक सच था। बच्चे की शक्ल सुशीला जैसी थी, मामा जैसी न थी। सुशीला कोई मासूम लड़की न थी।

मामा चुप थे। कहते भी तो क्या कहते? भीड़ बढ़ रही थी। इतने में हरिजनवाड़ा का पादरी आया। उसने उनको थका-माँदा देखकर कहा, "आदमी आया नहीं कि भिड़ों की तरह चिपट पड़े। तमीज नहीं है। आराम करने दो। कल आना। रात भर में कुछ न होगा।" पादरी के कहने पर भीड़ तितर-बितर हो गई। मामा और पादरी बहुत देर तक बातचीत करते रहे।

नरसिंह मामा सवेरे-सवेरे बुच्चुर जाने के लिये घर के बाहर आये। सड़क पर सुशीला और उसका बाप पहिले ही मौजूद थे। उनकी शक्ल-

सूरत से लगता था, जैसे रात भर वहीं खड़े रहे हों।

"जिन्दगी भर यह बदनामी कैसे ढोता फिरूँ ?" सुशीला के बाप ने कहा। वह उसके पास खड़ी सिसक रही थी।

"पर वह तो जेल में है।"

"आप चाहे शक्ल-सूरत देख लीजिये।"

"देखो, ऐसी वाहियात बात मुख से न निकालो। झूठ बोलते शर्म नहीं आती ? मैं सब जानता हूँ। पैसा ऐंठने का एक और तरीका निकाल लिया है। तेरी लड़की कैसी है, यह कौन नहीं जानता ?"

"आप स्वयं एक लड़की के बाप हैं, यह सोच लीजिये।"

"हाँ, हाँ......मैं सब जानता हूँ।"

"उनकी पत्नी ने भी सौ रुपये दिये हैं। जो बात वे मानती हैं, आप मानने को तैयार नहीं हैं।"

"तो तुमने उनसे सौ रुपये ऐंठ लिये हैं ?"

"आज सवेरे ही उन्होंने घर भिजवाये थे।"

"हूँ।"

"पर सौ रुपये से क्या होता है ? यहाँ तो लड़की हमेशा के लि बेकार हो गई। सौ रुपये खर्च होते कितनी देर लगती है ? कहीं इसे नौकरी दिलवा दीजिये, जो हो गया सो हो गया।"

"क्या हुआ ? कुछ भी नहीं हुआ है। किसी से झूठ-मूठ कहोगे तो अच्छा न होगा। यह भी जान लो कि वह हमेशा जेल में न रहेगा। जाओ।"

"पर......"

"गिड़गिड़ाते क्यों हो ? जो कुछ मुझे कहना था, मैंने पादरी से कह या है। उनसे बात करो।" मामा गुस्से से काँप रहे थे। मैंने मा को इतना क्रुद्ध कभी न देखा था। सुशीला डरकर पीछे खिसकने ी।

मामा ने सुब्बु मामा को बुलवा भेजा। मामा, नरसिंह मामा की

आज्ञा से मल्लिखार्जुन राव का घर बनवा रहे थे। घुटनों तक धोती बाँधे, सिर पर तौलिया लपेटे, पसीने से तरबतर वे जल्दी-जल्दी आये।

"सुना है तुमारी भाभी ने जगन (सुशीला का बाप) को सौ रुपये दिये हैं। पूछ कर आओ कि क्या यह सच है।"

"सुब्बाराव को बुलवाकर पूछ लीजिये, उनका काम-धाम तो सब वह ही देखता है।"

"हूँ।"

"रुपये-पैसे का मामला तो क्या, सब कुछ वह ही करता है। जैसे हम यहाँ हों ही न। हम उनके किस काम आयेंगे?"

"तो तुम भी औरतों की सुनने लगे हो?" सुब्बु मामा अपने भाई की तरफ घूरने लगे। शायद सुब्बु मामा सोच रहे होंगे कि उनके भाई का इशारा उनकी ओर था। पत्नी का कठपुतला भी अपने को कठपुतला समझा जाना नहीं सह सकता।

"औरतों की क्या बात है, गाँव के सब लोग जानते हैं। कितनी बदनामी हो रही है, आप क्या जानें? जिसके जो जी में आता है, वही बक रहा है।"

"अच्छा तो तुम अपना काम देखो।" नरसिंह मामा एकाएक ठंडे पड़ गये। मैंने सोचा कि मामा शायद अन्नपूर्णा मामी के पास पूछ-ताछ करने जायेंगे। पर वे न गये। मुझे भेज कर उन्होंने सुब्बाराव को बुलवाया।

"सुना है जगन को सौ रुपये दिये हैं?" मामा ने उससे पूछा।

"जी हाँ, अन्नपूर्णा जी ने देने के लिये कहा था। वह तो दो सौ माँग रहा था, सौ रुपये में पटा दिया।"

"अगर वे अनुभव-हीन हैं तुम तो दुनियाँ को जानते हो। अब वह इन सौ रुपयों के बूते पर सबको कहता फिर रहा है कि सचमुच यह रघू की करतूत है।"

"मैंने बहुत समझाया पर वे न मानीं। उधार लाकर पैसे दे दिये।"

"उधार ! अच्छा तो तुम जाओ ।" मामा ने सोच कर कहा ।

वे घूमते-घामते पादरी के घर गये । पादरी का घर तालाब के उस पार था । कुछ देर उसके घर में बैठे रहे; फिर कड़ी दुपहरी में वुय्युर चले गये ।

कई दिनों से नरसिंह मामा सवेरे वुय्युर जाते और शाम को अँधेरा होने के बाद वापिस घर आते । दिनभर वहीं रहते । जब से विजयवाड़ा से वकील आये थे, तब से नरसिंह मामा लिखा-पढ़ी करने में लगे थे । रजिस्ट्रेशन आफिस कई बार चक्कर काट आये थे । विजयवाड़ा भी प्रायः आते-जाते रहते ।

वुय्युर में पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि मामा और उनके दो-चार दोस्तों ने मिलकर एक दुकान खोली थी । इसी दुकान के काम में मामा चौबीसों घंटे लगे रहते । मामा ही उसका प्रबन्ध किया करते । दुकान के लिये वे ही खरीद-फरोख्त करते ।

वकील साहब और ब्रह्मेश्वर राव ने दुकान में काफी पूँजी लगाई थी । लक्ष्मीनारायणजी का भी साझा था । चार आना हिस्सा मामा का था । उनका भी दुकान के हानि-लाभ में और साझे में बराबर भाग था, यद्यपि उन्होंने अपनी तरफ से एक पैसा नहीं लगाया था । उनको दुकान का काम देखने के लिए कुछ तनख्वाह भी मिलती थी ।

वुय्युर का कस्बा बढ़ रहा था । जो व्यापार में जमे हुए थे, वे ही बड़े-बड़े मुनाफे बना चुके थे और बना रहे थे । नये व्यापार की कम ही गुंजाइश थी । माल मिलना मुश्किल था ।

मामा को दुकान अच्छी जगह मिल गई थी । बस स्टैण्ड के चौराहे पास । दुकान में दो-तीन कुर्सियाँ और एक मेज़ रखी हुई थी । एक तरफ आने जाने वालों के लिये चटाई बिछवाई गई थी । दुकान का नाम भी कृष्णा नदी को लेकर रखा गया था ।.........कृष्णा ट्रेडिंग

कम्पनी। हमेशा दुकान में पाँच-दस आदमी बैठे मामा से बातचीत करते रहते। वे उनकी जान-पहिचान के होते थे या मित्र। ग्राहक कम ही आते थे।

एक कोने में बीस-पच्चीस सीमेंट के बोरे थे। उन दिनों सीमेंट मिलना बहुत कठिन था। परमिट वगैरह की आवश्यकता होती थी। ऐजन्सी पाना तो एकदम नामुमकिन था। विजयवाड़ा में ही सीमेंट फैक्टरी थी। मामा के एक मित्र उसके डायरेक्टर थे। उन्हीं के द्वारा उनको सीमेंट मिल जाता था। सीमेंट लारी में आता था।

सीमेंट पर लोग पैसा बना रहे थे। काले मार्केट में वह खूब खपता था। पर मामा कम्पनी के द्वारा निश्चित दाम पर ही बेच रहे थे। कमिशन जरूर मिलता था। जो मिलता था, उसका बहुत-सा हिस्सा उसे लाने में ही खर्च हो जाता था।

दूसरी तरफ मिट्टी के तेल के कुछ कनस्तर रखे हुए थे। उन दिनों मिट्टी का तेल भी न मिलता था, पर मामा ने जैसे-तैसे उसके लिए परमिट प्राप्त कर लिया था। काले बाजार में मिट्टी का तेल भी खूब बिकता था। पर मामा को व्यापार का गुर न मालूम था।

दुकान का हिसाब-किताब देखने के लिए एक मुनीम रखा गया था मामा व्यापार में नौसिखिये थे। मुनीम का होना जरूरी समझा गया।

अभी दुकान चली थी, काफी समान बिक रहा था, पर फायदा कम हो रहा था और खर्च अधिक। इसलिए मामा कपड़े और खाद का व्यापार भी शुरू करना चाहते थे। कपड़ा तो ढूँढने पर कहीं मिल भी जाता था, पर खाद न मिलती थी। बिना खाद के गन्ना हो नहीं सकता था, बिना गन्ने के शुगर फैक्टरी वाले इधर-उधर से खाद मंगा कर दे रहे थे। वे न चाहते थे कि मामा खाद का व्यापार करें फिर भी मामा यत्न कर रहे थे।

मामा दुकान के कार्य में इस तरह मशगूल रहते कि भोजन के लिये भी घर न आते। या तो उनके लिए भोजन भेजा जाता, नहीं तो वे अपने

मित्र के घर बुय्युर में ही खा लेते। कभी-कभी रात को दुकान में ही सो जाते।

सुशीला के बाप ने गाँव में ढिंढोरा पीट दिया कि अन्नपूर्णा मामी ने उसको सौ रुपये दिये थे, देने का कारण भी बताया। नीच-जाति का गरीब पैसे के लिए अक्सर बेशर्म हो जाता है, समाज की मर्यादायें उसे नियन्त्रित नहीं कर पातीं।

सुब्बु मामा की देख-रेख में मल्लिखार्जुन राव का मकान फिर बन गया था। काम-चलाऊ घर था। खम्मा घर का निरीक्षण करने तो आती मगर अभी अपने परिवार के साथ घर में प्रविष्ट न हुई थी। अपन सास को काम करने के लिए भेज दिया करती थी।

जब कभी खम्मा वहाँ जाती तो दो-चार औरतें भी गप्पें लगाने के लिए चली आतीं। नरसिंह मामा की पत्नी भी वहाँ जा बैठती थी। एक ही तरह की औरतें थीं। बातूनी, चुगलखोर, कड़वी।

"देवी-देवताओं की पूजा करती फिरती है और काम ऐसे वाहियात करती है·····" खम्मा कह रही थी कि नरसिंह मामा की पत्नी ने भी कहा, "ढोंगी ही तो दुनिया भर के पाप करते हैं।"

"जानती हो उसने क्या किया?"

"नहीं तो·····"

"सुशीला के बाप को पैसा दिया है। क्यों?"

"तुम ही बताओ।"

"मैं तो उसके घर में ही रहती हूँ। उसकी नस-नस जानती हूँ ···ब्बाराव की और उसकी खूब बन रही है। मालूम नहीं उसकी पत्न ···यों आँखें मूँदे बैठी है।"

"पर···"

"अब पेट हो गया है, पति जेल में है। आते ही शक होगा, इस

लिए उसकी करनी को रुपया देकर चुप करना चाहती है, ताकि उसकी करतूत पर पति चुप रहे। दूर की सोचती है। एक काम करती है तो उस का असर महीनों बाद पता लगता है।"

"यह बात है?"

"नहीं तो और क्या सोचती होगी कि दुनिया को कुछ नहीं मालूम है? वही अक्लमन्द है? मैंने राघवैय्या को गुमनाम चिट्ठी लिखवा दी है। सब बता दिया है।"

"कितने महीने का हो गया है?"

"प्रसव के दिन हैं।"

"मायके में तो कोई है नहीं, अगर हो भी तो इस मुँहजली को कौन ले जायगा?"

"मायके वालों से भी यह बात छुपी नहीं है। वे इसको पास न फटकने देंगे। सुना है, तुम्हारे आदमी ने इसको अपने घर बुलाया है।"

"मैं यह आफत मोल न लूँगी। बेकार बदनामी होगी। मैं साफ-साफ कह दूँगी। भाईचारा निभाना हो तो घर के बाहर निभाओ?"

"पर यह माने तब न? उसने जाने से इंकार कर दिया है तुम्हारे घर रहेगी तो सुब्बाराव कैसे आएगा?"

"हाँ।"

दोनों पान-सुपारी चबाने लगीं। सुब्बु मामा धोती झाड़ते हुए उस तरफ अपना तौलिया लेने आये। दोपहर हो रही थी, उनको आता देख कर वे एक तरफ हट गईं। मामा तौलिया लेकर चले गये और उनकी बातें यथापूर्व चलने लगीं।

युद्ध को प्रारम्भ हुए चार वर्ष हो गये थे। शुरू-शुरू में जर्मनी सेनायें विद्युत् गति से चारों दिशाओं में विजय वैजयन्ती फहराती फैल गई थीं और इधर जापान ने भी खासा बड़ा साम्राज्य बना लिया था।

पर अब उनके अच्छे दिन लद गये थे। व अब मित्रराष्ट्रों
सेनाओं द्वारा पराजित किये जा रहे थे। यूरोप में उन्हें एक ओर अंग्रे
और अमरीकी फौजें दवा रहीं थीं, दूसरी ओर रूसी सेनाएँ उनपर दना
दन बमवर्षा कर रही थीं। उन्होंने करीब-करीब घुटने टेक दिये थे।

यही हालत जापान की थी। अमेरिका, जो पहिले मैदान से भाग
खड़ा हुआ था, फिर मैदान मार रहा था। जापान का साम्राज्य उसकी
अपनी भौगोलिक सीमाओं तक संकुचित हो गया था। वे भी परास्त हो
रहे थे। चीन में जहाँ वे वर्षों से नादिरशाही कर रहे थे, उन्होंने हा
ऊपर कर दिये थे।

भारत में 'भारत छोड़ो' आन्दोलन समाप्त हो चुका था। पर क्षुब्ध
वातावरण जारी था। कई कांग्रेसी अपनी सज़ा पूरी करके रिहा कर दिये
गये थे। सरकार इतनी सजग थी कि वे कुछ भी न कर पाते थे। नेता
अब भी जेल में थे। कोई नजरबन्द था, कोई लम्बी सजा भुगत रहा था।
न कोई कार्यक्रम था न कार्यकर्ता ही थे।

सुना जाता था कि लन्दन में जोर-शोर से सलाह-मशवरा हो रहा
था। यह जानने की कोशिश की जा रही थी कि भारतीयों को कैसे शा
किया जाय। वायसराय मुस्लिम लीग व अन्य संस्थाओं के
दोस्ताना तौर पर

सूरय्या था। दोनों कॉफी होटल में खा-पी रहे थे। उन दिनों प्रायः औरतें कॉफी होटल में नहीं जाया करती थीं पर पद्मा ने स्त्रीसुलभ लज्जा कभी की त्याग दी थी। सूरय्या उसके पीछे, जमीन-जायदाद, घर-बार खराब कर रहा था।

हम दोनों अर्सा हुआ था, एक-दूसरे से बोलते नहीं थे। कोई झगड़ा भी न था। मुझे देखते ही आँखों के इशारे से बुलाने लगी। मैं घबराता हुआ पास गया।

"पहले वायदा करो कि पार्टी दोगे। बात अच्छी है, वादा करके नहीं पछताओगे।" पद्मा ने मुस्कराते हुए कहा।

"अच्छा तो कहो।"

"तुम्हारी अन्नपूर्णा मामी के लड़की पैदा हुई है।"

"मेरा मुँह एकाएक खिल गया, फिर सहसा तन गया। एक साथ खुशी और दुःख का अनुभव हुआ। 'तीर्थों' के भगवान् आखिर मामी पर पसीज गये थे। बहुत दिनों की मुराद पूरी हुई थी।

"लड़की देरी से पैदा हुई .... दस-साढ़े-दस महीने के बाद। चार-एक दिन हस्पताल में पड़ी रही। मरती-मरती बची। सुब्बाराव ने सब इन्तजाम कर दिया था। उसके घर इस तरह खुशियाँ मनाई जा रही हैं, जैसे उसके बच्ची हुई हो। अच्छा अब बैठो और वादा पूरा करो।" पद्मा ने कहा।

ग़नीमत थी कि जेब में पैसे थे। वादा पूरा कर दिया। मैं होटल से सीधा बस स्टैंड पर गया और घंटे-डेढ़-घंटे में बुय्युर पहुँच गया। कदम तेजी से घर की ओर चलते जाते थे।

मामी के घर की ओर जा रहा था। टीले पर खम्मा खड़ी थी, अपशकुन की तरह। उसका मकान पूरा बन चुका था। उसने मुझे थोड़ी देर घूरा ...... फिर मुँह बनाती पड़ोसिन के घर चली गई।

मामी कमरे में लेटी हुई थीं। उनका फूल-सा चेहरा कुम्हला गया था। बाल जो कभी चमका करते थे, सूखे बिखरे पड़े थे। कपड़े भी मैले

थे, बदबू आ रही थी।

मामी की बगल में गोल-मटोल, गोरी-गोरी बच्ची पड़ी थी। शक बिल्कुल मामी से मिलती थी। वे उसको चिपकाये लेटी हुई थीं। माम ने आँखें उठाकर मेरी तरफ देखा, फिर आँखों को नीचा कर लिया। कुछ न बोलीं। मैं भी चुप-चाप दरवाजे के पास खड़ा रहा।

थोड़ी देर बाद मामी ने पूछा, "विजयवाड़ा से आये हो बेटा?"

"हाँ, पद्मा ने बताया था।"

"पद्मा ने?" मामी ने अचरज में पूछा। थोड़ी देर वे चुप रहीं, फिर उन्होंने पूछा, "शाम को आ सकोगे? मामा को चिट्ठी लिखवान है। मैं तुम्हारी इन्तजार कर रही थी। भगवान् ने तुम्हें ठीक समय प भेजा है।" बच्ची जरा हिलने लगी, मामी उसको थपथपाती हुई लोरियां गाने लगीं।

सुब्बाराव के घर गया। उसके यहाँ गाँव के गरीबों को खाना बाँटा जा रहा था। अच्छे-अच्छे पकवान थे। सुब्बाराव नाराज लगता था। उसकी पत्नी भी मुँह सुजाये बैठी थी। मुझे कुछ समझ में न आया, किसी से पूछकर मालूम करने की हिम्मत भी न हुई।

घर गया तो माँ ने बताया, लड़की के जन्म की खुशी में मामी की तरफ से सुब्बाराव गाँव में बिरादरी वालों को न्योता दे आया था। नर-सिंह मामा गाँव में न थे। सुब्बु मामा भी उसी दिन सवेरे अपनी ससुराल चले गए थे। कोई भी बिरादरी वाला मामी के घर न गया। मामी बहिष्कृत-सी कर दी गई। बना-बनाया खाना गाँव के हरिजनों को बाँट दिया गया। उनको भी जाने से मना किया गया था, पर एक-एक करके सब अलग-अलग रास्ते से पहुँच ही गये थे।

मामी की किस्मत भी खूब थी। वह किस्मत बनाने वाला भगवान् जिसको वे दिनरात रिझाती थीं, उनसे इस कदर खिझा हुआ था कि अगर कोई मुराद पूरी करता तो सैकड़ों आफत और उलझनें भी उनके लिये तैयार कर देता। जान न पड़ता था कि उसको गाली दें या दुआ दें।

शाम को मामी के घर जाने से पहिले कर्णा के घर गया। उनका बेटा बचपन का लँगोटिया यार था। हम दोनों पास वाले बड़ के पेड़ के नीचे बातें करने लगे। पास ही खम्मा की चौकड़ी लगी हुई थी।

"अब सारा गाँव जानता है कि वह लड़की किसकी है।" खम्मा कह रही थी और रामस्वामी की पत्नी "हाँ, हाँ," कह रही थी। हमें पास खड़ा देख खम्मा और जोर से बातें करने लगी।

"राघवैय्या से शक्ल बिल्कुल नहीं मिलती है। नाक सुब्बाराव की है। इसमें कोई सन्देह नहीं है, लोग सब जानते हैं। इसलिए उसके घर कोई खाने नहीं गया। सुब्बाराव की लड़की है, इसलिये उसके घर ही जलसा मनाया जा रहा है। जानती हो सुब्बाराव की पत्नी भी पति से उलझ गई है। नादान औरत है। इतने दिनों तक आँखें मुँदे रहीं, अब आँखें खोली हैं। पति के काले कारनामे देख रही है। सुना है मायके जाने की धमकी दे रही है और-तो-और।" खम्मा कुछ कह रही थी और मुझे ऐसा लग रहा था, जैसे कोई कानों में सीसा डाल रहा हो।

खम्मा अपने स्वभाव से लाचार थी और मैं अपने स्वभाव से। मुँह पर तौलिया डालकर, सिर नीचा करके मामी के घर चला गया। मुझे मालूम था कि खम्मा मेरी ओर देख रही थी। फूटें उसकी खूसट-सी आँखें।

जब मैं घर गया तो तालाब के किनारे कुछ लोग एकत्रित थे। कोई सज्जन अखबार पढ़ रहे थे। अखबार के कारण उनका चेहरा न दीखता था। आवाज परिचित-सी लगती थी। बड़े ध्यान से लोग सुन रहे थे।

"जापान में अमेरिकनों ने अणु बम छोड़ दिया। हिरोशिमा का सारा-का-सारा शहर सूखे जंगल की तरह जल गया। बड़ी-बड़ी विशाल इमारतें तबाह हो गईं। हजारों मारे गये। लाखों जिन्दगी भर के लिये पंगु कर दिये गये।"

"मनुष्य ने कई भीषण अस्त्र बनाये। अस्त्र के रूप में ऐसे कीटा
भी पैदा किये, जिनके कारण भयंकर महामारी फैल सकती है। जर्मनों
पास कीटाणु थे पर उन्होंने उनका उपयोग न किया, किन्तु अमेरिकन
ने जो अपने को शान्ति और स्वतन्त्रता के दूत समझते हैं, इस भयंक
अस्त्र का उपयोग किया।"

अखबार साप्ताहिक था, साम्यवादी।

"अमेरिकनों ने इस भयंकर अणु-अस्त्र का उपयोग पश्चिम में क्यों
नहीं किया? उन्होंने एशियायी देश को ही इसका शिकार बनाया?
पाशविकता का यह निकृष्ट व्यवहार क्या सदियों से अहिंसा की दुहाई
देने वाले ईसाई मत के प्रचार का परिणाम है? क्या उस भ्रातृत्व का,
जिसका ढिंढोरा दिन-रात ये सभ्य देश पीटते हैं, यही उदाहरण है?
एक दिन पश्चिम के शक्तिशाली देशों को इन प्रश्नों का उत्तर देन
होगा।"

लम्बी साँस लेते हुये उस व्यक्ति ने अखबार नीचे रख दिया। खिचड़ी
होती घनी भौंहें, बढ़ी दाढ़ी, सफेदी में पुती हुई-सी; धँसे गाल।

"आओ बेटा, सुना है विजयवाड़ा में पढ़ रहे हो?" उन्होंने मुझे
प्रेम से बुलाया। मैं हिचकिचाता गया? "अरे मुझे नहीं पहिचाना?"

मैंने मुस्कराते हुए नमस्ते की। वे मल्लिखार्जुन राव थे। यों तो वे
पहिले ही दुबले-पतले थे, जेल में और भी दुबले हो गए थे। किन्तु चेहरे
पर विशेष कान्ति आगई थी। वे पहिले की तरह जले-भुने नहीं लगते थे।

"बेटा, अब इसने संन्यास ले लिया है।" गाँव के बूढ़े-बुजुर्ग ने
चुटकी ली। सब हँसे।

"हम संन्यासी तभी हो गये थे, जब गांधी जी ने सत्याग्रह चलाया
था।" मल्लिखार्जुन राव ने कहा। साम्यवाद का प्रचार बढ़ रहा था,
अब भी वे कांग्रेस के हिमायती थे। गांधी के भक्त थे और भक्त एक
अधिक देवता को नहीं चुनते। खैर, उनके गृहस्थ की यह हालत थी
कोई और होता तो कभी का गेरुआ पहिन लेता, नहीं तो पागल-

खाने में भरती हो जाता। वे जैसे-तैसे परिवार को ढेल रहे थे। शायद वे जेल में ही अच्छे थे। बिना खरी-खोटी सुने भोजन तो मिल जाता था।

"अरे भाई, तुमने रघू मामा को भी जेल भेज दिया?" मल्लिखार्जुन राव ने मेरे कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा। हम दोनों पुल की ओर चल-पड़े। उनका घर भी उसी तरफ था।

मल्लिखार्जुन राव जेल से पिछले दिनों ही छूट कर आये थे। उनकी सजा पूरी हो गई थी।

घर में पिता जी ने बताया, "तुम्हारे मामा खाद की ऐजेन्सी ले रहे हैं। मद्रास में किसी कम्पनी को पेशगी देनी है। जो रहा-सहा एकड़ था, वह भी बेच दिया है। हम लोग व्यापार करना भी चाहें तो नहीं कर पाते हैं। किसान हैं। वह किसान भी क्या जिसके पास जमीन न हो? जमीन बेचकर उन्होंने अच्छा नहीं किया।"

"किसने खरीदी?" मैंने पूछा।

"और कौन खरीदेगा? उसी कम्बख्त रामय्या ने।"

कुछ सूझ न रहा था। मामी को देखने चला। रास्ते में रामय्या के घर के सामने पाँच-दस आदमी खड़े थे। नरसिंह मामा की पत्नी भी किवाड़ की आड़ में से देख रही थीं।

रामय्या ने मैसूर नस्ल की एक जोड़ी बैल खरीदी थी। जोड़ी सच-मुच देखते बनती थी। सफेद, डील-डौल, बड़े-बड़े सींग। रामय्या उनकी नज़र निकलवा रहा था।

पंचम् परिच्छेद

"आप कहाँ के रहने वाले हैं ?" एक व्यक्ति ने मुझ से पूछा। वे आन्ध्र के लगते थे। जाति के भी वे कम्मा मालूम होते थे। वे बहुत देर तक मेरी ओर घूरते रहे।

"जी, मैं...मैं विजयवाड़ा का रहने वाला हूँ।" मैंने विनय-पूर्वक कहा।

मद्रास शहर में ट्राम खट-खट करती चलती जाती थी। मैं कुछ दिन हुए विजयवाड़ा में इन्टरमीडियेट समाप्त करके मद्रास पढ़ने आया था। गाँव से मेरा इतना अन्तर हो गया था कि अपने गाँव का नाम भी न बताता था, जैसे मैं विजयवाड़ा का रहने वाला हूँ।

"आपके पिताजी जीवित हैं क्या ?" उसी महाशय ने पूछा।

"हाँ, जीवित हैं।" मैं खिसक कर बैठ गया। वे महाशय मेरी तरफ घूरते जाते थे। मुझे उनके प्रश्नों का मतलब समझ में आने लगा था।

"आप कितने भाई-बहिन हैं ?" उन्होंने पूछा।

"मैं इकलौता हूँ।"

"क्या पढ़ रहे हैं ?"

"आनर्स।"

"क्या आपकी शादी हो गई है ?"

"नहीं तो......" मैं कहते-कहते कुछ झेंप गया। उस सज्जन : आँखें मुझ पर गढ़ी हुई थीं।

मुझे आगे जाना था पर माउन्ट रोड पर ही उतर गया। उस

सज्जन के कुतूहल ने मेरा मूड खराब कर दिया था।

एक-डेढ़ साल में बहुत-कुछ हो गया था। शादी के बाज़ार में मेरा भी सौदा होने लगा था। मैं गाँव वाले से शहर वाला बन गया था। धोती-कुरता छोड़कर, कोट-पतलून पहनने लगा था।

युद्ध समाप्त हो गया था। इटली के मुसोलनी को लोगों ने पीट-पीटकर जान निकाल दी थी। हिटलर एकाएक कहीं गायब हो गया था। मित्रराष्ट्र विजयी हो गए थे। सन्धि और शान्ति के बारे में निरन्तर चर्चा चल रही थी।

कांग्रेस के नेता जेल से रिहा कर दिये गए थे। वायसराय से बातें चल रही थीं। कई क्षेत्रों में, यह अनुमान किया जा रहा था कि कांग्रेस के नेता सन् '३७ की तरह शासन-सत्ता का भार फिर सँभाल लेंगे। सब अनिश्चित था।

मैं माउन्ट रोड पर घूमता-घामता एक कॉफ़ी होटल में गया। संयोग-वश वहाँ प्रसाद भी था। हम दोनों एक ही कालेज में थे। दिन में दो-तीन बार मुलाकात हो जाती थी।

नरसिंह मामा प्रायः मद्रास आया करते थे। दुकानदारी में हानि हो रही थी। लगी पूँजी ही खर्च हो रही थी। बहुत दौड़-धूप कर रहे थे पर कोई लाभ न हो रहा था। पैसे की तंगी उनको फिर सता रही थी। उनका दामाद आन्ध्र यूनिवर्सिटी में लेक्चरर के रूप में लग गया था। वे उनके बारे में निश्चिन्त थे।

उनसे कभी-कभी गाँव की खबरें मालूम होती थीं। मुखासादार कोई गड़बड़ी न कर रहा था। उसे कोई बीमारी हो गई थी। हॉस्पिटल में उसकी टाँग भी काट दी गई थी। सूरय्या की पत्नी ने दो बार आत्म-हत्या करनी चाही, पर दोनों बार बचा ली गई। कर्णं की मौत हो गई थी, उनके लड़के को ही उनकी नौकरी मिली थी। मल्लिखार्जुन राव फिर खेती करने की कोशिश में थे।

"बैठो, मैं होस्टल में तुम्हारी प्रतीक्षा करते-करते थक गया।"

प्रसाद ने कहा।

"क्यों ?" मैंने पूछा।

"अरे, रग्घू चाचा जेल से छूट गए हैं। सुना है बहुत दुबले-पतले हो गए हैं। बीमार हैं, मुझे देखना चाहते हैं। पत्र में तेरा भी ज़िक्र है। तू पहले हो आ, जाना तो मैं भी चाहता हूँ, पर……" प्रसाद ने कहते-कहते भौंहें सिकोड़ लीं।

"पर क्या ?"

"सुजाता आ रही है, अब उसे नौकरी की सूझी है। कोई इन्टरव्यू है शायद।"

"अकेली आ रही है क्या ?

"हाँ।"

"क्या ब्रह्मेश्वर राव साथ न आयेंगे ?"

"अगर वे साथ आना भी चाहें तो यह उन्हें साथ लायेगी नहीं। उसको अपने ऊपर बहुत भरोसा है। विचित्र लड़की है।"

"तो उसके आने के बाद चलेंगे, अभी जल्दी ही क्या है ? पर चलेंगे साथ ही। मामा को क्या बीमारी है ?"

"मालूम नहीं, चिट्ठी में नहीं लिखा है।"

"अधिक तो नहीं है ?"

"मालूम नहीं……" मेरी उत्सुकता बढ़ती जाती थी, पर उत्सुकता … उचित उत्तर नहीं मिल पा रहा था।

हम दोनों होटल से 'बीच' पर घूमने निकल गए। मामा की रिहाई … फूले न समाते थे। जाने मामा को क्या हुआ हो ? उन्हीं का चित्र … ओं के सामने कई मुद्राओं में चक्कर काट रहा था और हम चहल … ी करते जाते थे।

… घूमकर हम होस्टल पहुँचे तो वे सज्जन, जो मुझे ट्राम में मिले थे, … मरे के सामने बराण्डे में बैठे मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैं उनका … जानता था। मैं मन-ही-मन झुँझलाया। डाँट-डपट कर उन्हें

भेज तो सकता न था।

कमरा खोलने पर वे भी कमरे में घुस आये। बड़ी लम्बी-चौड़ी बातें करके अपना परिचय दिया। जमीन-जायदाद की फहरिस्त भी उन्होंने बिना मांगे मेरे सामने पेश की। मैं मामा के बारे में सोच रहा था। उनकी तरफ देख भी न रहा था। चुप था। भक मारकर वे चले गए। मैं औंधा मुँह बिस्तरे पर लेट गया।

सुजाता जिद्दी थी। शहर के वातावरण में जिद की जड़ें और भी दृढ़ हो गई थीं। आग्रह अभिमान की कलम से मजबूत हो जाता है। अब उसको नौकरी की जिद सवार थी।

भगवान् ने उसको काफी दिया था। वह जिन्दगी-भर बिना कमाये अच्छी तरह खा-पी सकती थी और पाँच-दस को खिला सकती थी। एक लड़की के लिए नौकरी करना गाँवों में बुरा समझा जाता था। अविवाहित स्त्री अगर नौकरी में चली गई तो माँ-बाप के लिए विवाह करना एक खासी इल्लत हो जाती है।

गाँव में उसका गला घुटने-सा लगा था। शहर की स्वतन्त्रता वह चख चुकी थी। बुरा चस्का लग चुका था। शायद उसको शादी की आशा भी न रह गई थी।

उसकी छोटी बहन की शादी के बारे में प्रयत्न किये जा रहे थे। यह भी हो सकता है कि इस कारण उसमें ईर्ष्या पैदा हो गई हो। कौन जाने? स्त्री का मन तो कहा जाता है, पल-पल पर परिवर्तित होती पर्वतीय-प्रकृति की तरह है।

हमें बाद में मालूम हुआ कि उसकी अपने पिताजी से झपट हो गई थी। नरसिंह मामा से वह रूठ गई थी। माँ से भी फासला कर लिया था। जब बड़े-बुजुर्गों ने उसे समझाने की कोशिश की तो उसने कहा, "......अगर घर ही बिठाना था तो मद्रास में पढ़ाया-लिखाया ही क्यों

था ? और अब जब पढ़ाया ही है तो नौकरी भी करने दीजिए।" फि
वह अँग्रेज़ी में कुछ बड़बड़ाने लगी। आँसू बहाने लगी। माँ-बाप कै
कहते कि किन अवस्थाओं में उसे मद्रास पढ़ने के लिए भेजा गया था
सुजाता सयानी थी, स्वयं वह समझ सकती थी। समझती भी थी।

रो-धोकर वह मद्रास आ रही थी, इस बारे में पूरे विवरण के साथ
नरसिंह मामा ने प्रसाद को चिट्ठी लिखी थी। ब्रह्मेश्वर राव ने उसको
स्टेशन पर सुजाता से मिलने के लिए तार दिया था।

जब सुजाता गाड़ी से उतरी तो उसकी आँखें लाल थीं। मुँह सूजा
हुआ था। बाल बिखरे हुए थे। विह्वल-सी थी। साथ कोई न था।

हमें देखकर वह मुस्कराई। पर किसी सहेली को देखकर उसका मुँह
सहसा खिल-सा गया। हमारा उस सहेली से परिचय न था। हमें यह
भी न ज्ञात था कि वह सुजाता की प्रतीक्षा कर रही थी। शायद वह
सुजाता की सहपाठिनी थी। दोनों गले मिलीं। सुजाता ने हमारा
परिचय कराया।

"आप भी हमारे घर आइये।" उस स्त्री ने कहा।

"क्या तुम इनके साथ ठहरोगी ?" प्रसाद ने पूछा।

"हाँ, हाँ। तुम्हारे साथ ठहर नहीं सकती। जो लोग मुझे नौकरी
नहीं करने दे रहे हैं, वे होस्टल में क्या ठहरने देंगे ?" सुजाता ने उला-
हना दिया।

वह महिला आगे कुली के साथ चलती जाती थी। सुजाता आगे-
पीछे देखती बीचों-बीच दोनों से कदम मिलाने की कोशिश कर रही थी।
"इनका घर दफ्तर के पास है।" सुजाता ने कहा, "आसानी से काम
हो जायगा। यह स्वयं काम कर रही है। आओ भी, फिर बताऊँगी।"
कहती-कहती वह उस महिला से जा मिली।

हम टैक्सी में उस महिला के घर गए। ट्रिपिल्केन मोहल्ला क्या था,
कानों का घना जंगल-सा था। पारसारथी मन्दिर के पास उसका घर
। बड़ा मकान, छोटे-छोटे कमरे, तंग गंदा दालान। एक मकान में

कितने ही परिवार थे। कहीं कपड़े सूख रहे थे। कहीं पानी का नल गुन-गुना रहा था। कई स्त्रियाँ अपने काम में लगी हुई थीं। हमें उस तरफ जाता देख वे हमें घूर रही थीं। उस महिला का घर उस मकान के आखीर में था। छोटा-सा एक कमरा, साथ बराएडा, दालान, जिस पर आस-पास के सभी किरायेदारों का समान हक था; अत्यन्त ही गन्दा स्थान था।

पूछ-ताछ करने पर मालूम हुआ कि उस कमरे में वह महिला अपनी बूढ़ी माँ और अपने भाई की दो लड़कियों के साथ रहा करती है। भाई हर छुट्टी में सपत्नीक वहाँ रहने के लिये आ जाते थे। वे अनन्तःपुरम् में किसी कालेज में लेक्चरर थे। निम्न मध्यम श्रेणी का डूबता-मरता परिवार था। अतिथियों के लिये भी बैठने की जगह न थी।

वह महिला सुजाता के नहाने-धोने के लिये प्रबन्ध करने चली गई। और हम उसे छोटे-से बराएडे में खड़े-खड़े बातें करने लगे।

"नौकरी तो तुम करने पर तुली हुई हो। पर नौकरी है क्या?" प्रसाद ने पूछा।

"नौकरी कोई बड़ी नहीं है, यही लेक्चररशिप। प्रोफेसर की सहायता से मुझे मिली है।"

"तुम रग्घू मामा से मिलीं कि नहीं?" मैंने थोड़ी देर बाद पूछा।

"नहीं तो, वे जेल से छूट गए हैं। सुना है बीमार हैं। मिलती तो वे शायद मुझे मद्रास न आने देते।" सुजाता नल की ओर देख रही थी। वह महिला नल के पास खड़ी उसको बुला रही थी।

"अगर कभी जरूरत हो तो फोन कर देना। नम्बर जानती हो न?" प्रसाद ने कहा।

"हाँ, हाँ जरूर।" सुजाता नल की ओर टुथ-ब्रुश लेकर जाने लगी।

"पर इन्टरव्यू कब है?" हमने जाते-जाते कुछ याद करके पूछा।

"दस बजे।"

हम उस भूलभुलैय्या से निकलने लगे—मकान क्या था, शह
की मक्खियों का छत्ता था और वह महिला हमारी ओर उचक-उचक
कर देख रही थी।

मैं उस दिन कालेज तो गया पर मन नहीं लगा। मटरगश्ती भी
न कर पाया। मन में रघू मामा, सुजाता, ट्रिप्लिकेन का वह पिंजड़ा,
जिसमें सैकड़ों व्यक्ति परिस्थिति-वश कैद थे, वह महिला, घूरती आँखें,
घुले-घुले हो रही थीं।

इधर-उधर समय बिताकर मैं शाम को अपने कमरे में पहुँचा तो
ब्रह्मेश्वर राव और प्रसाद वराण्डे में मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैं उन्हें
देखकर हैरान हुआ।

ब्रह्मेश्वर राव शाम को एक्सप्रेस से आये थे। शायद पुत्री का
ख्याल सता रहा होगा। आखिर पितृहृदय ही तो है। पर उन्हें होस्टल
में देख मुझे आश्चर्य हो रहा था।

"तुम्हारे पिताजी ने तुम्हें चिट्ठी लिखी थी क्या?" उन्होंने पूछा।

"नहीं तो......" मैं चकित था। मैं उनके प्रश्न का आशय ठीक
तरह समझ नहीं पा रहा था।

"रघू मामा ने तो चिट्ठी लिखी होगी ही।"

"हाँ।" उन्होंने प्रसाद को लिखी थी। मुझे यह सन्देह होने लगा
ा। जैसे वह सुजाता के लिये न आकर मेरे लिये आये हों।

"नहीं, मेरा मतलब, तुम्हें कुछ नहीं लिखा उसने?"

"नहीं तो, क्यों क्या बात है? उनकी तबियत तो ठीक है?"

"बीमार है, जेल की बीमारी है। तुम्हें बहुत याद करता है। उसी
ी देख आने के लिये कहा था।" ब्रह्मेश्वर राव ने कहा। मैंने
ी साँस ली।

"आइये, बैठिये।" मैंने कमरे का ताला खोलते हुए कहा।

"वेन्कटेश्वर राव ने कुछ और तो शुरू नहीं कर दिया है ?" प्रसाद ने पूछा ।

"अब वह क्या करेगा ? जाल में है ।" ब्रह्मेश्वर राव मुस्कराये । फिर थोड़ी देर बाद कहने लगे, "सुजाता नौकरी करना चाह रही है । प्रसाद ने बताया था कि तुम भी उसे स्टेशन पर सवेरे लेने गए थे । खब्त है । किसी की सुने तब न कोई कुछ कहे । उसकी माँ रो रही है, मुझे मद्रास भेजकर ही उसने चैन ली । यह भी न बताया कि कहाँ ठहरने जा रही है । मेरा ख़याल था कि तुम ही लोगों ने उसके ठहरने का प्रबन्ध किया होगा । यहाँ चला आया । पर······खैर, तुम्हें काम तो नहीं है ?" उन्होंने मुझसे पूछा ।

"नहीं तो ।"

"तो चलो सुजाता के पास चलें, अब वह दफ्तर से वापस आ गई होगी ।" हम तीनों निकल पड़े । होस्टल के बाहर से टैक्सी ले ली । ट्रिप्लिकेन गए । टैक्सी घर के बाहर खड़ी कर दी गई । हम अन्दर गए । सुजाता बाहर बरामडे में खड़ी थी । वह महिला दफ्तर से शायद अभी न लौटी थी ।

"तुम्हें फोन करना ही बला है, पाँच बार फोन किया और पाँचों बार ऐंगेज्ड······" सुजाता ने कहा ।

"आओ, बाहर चलें । तुम्हारे पिताजी आये हुए हैं । बाहर प्रतीक्षा कर रहे हैं ।" प्रसाद ने कहा ।

"पिताजी आये हैं ?" उसे अचरज हुआ । मुस्कराती हुई हमारे साथ चली आई ।

सुजाता गम्भीर हो अपने पिताजी के पास बैठ गई । जो कुछ पिताजी ने पूछा; नाप-तोल कर उसने उसका उत्तर दिया । हम सब मिलकर समुद्र के किनारे गए । टैक्सी छोड़कर समुद्र की रेती पर बैठ गए । सुजाता चुप थी । ब्रह्मेश्वर राव भी । हम दोनों कुछ बोल न पाते थे ।

"इन्टरव्यू का क्या हुआ ?" थोड़ी देर बाद ब्रह्मेश्वर राव ने पूछा

"इन्टरव्यू फौर्मल था, मुझे काम दे दिया गया है। मुझे दो मही
यहाँ कुछ ट्रेनिंग दी जायगी, फिर किसी जिले में काम पर नियुक्त किय
जायगा।"

"हूँ।" ब्रह्मेश्वर राव कुछ सोचते-सोचते चुप हो गए।

"वेतन?" मैंने पूछा।

"डेढ़ सौ।"

"बस?" ब्रह्मेश्वर राव ने कहा, "तुम्हारी पढ़ाई के लिये ही हम
माहवार सौ रुपये खर्चते थे, खैर!" सुजाता खिन्न हो, पिता की बात
को अनसुनी करके दूर समुद्र की ओर देख रही थी।

"ये दो महीने कहाँ रहने का इरादा है? कहो तो मैं तुम्हारी माँ को
यहाँ भेज दूँ। किराये पर मकान ले लेना।" ब्रह्मेश्वर राव कह रहे थे।

"नहीं, कोई जरूरत नहीं।"

"तो रहोगी कहाँ?"

"जहाँ अब रह रही हूँ, वहीं।"

"वहाँ उनके लिये ही जगह काफी नहीं है, तुम कैसे रहोगी?"

"वैसे ही।"

"जिद न करो। तुम दुनिया को नहीं जानती, सुनो।"

"नहीं, मैं वहीं रहूँगी।"

"जिद बुरी होती है। बाद में पछताओगी, सुनती हो। लोग क्या
सोचेंगे?"

"कुछ भी सोचें?"

"अच्छा!" ब्रह्मेश्वर राव अपनी छड़ी लेकर उठ खड़े हुए। काफी
र बेंच पर बैठने का इरादा था। हम रघू मामा के बारे में जानना
हते थे। पर बातों का रुख ऐसा बदला कि चुप्पी रखनी पड़ी।

सुजाता हमारे साथ आई। उसको उसके ठिकाने पर छोड़ हम

होस्टल चले गए। न वह बोली और न हम ही बोले। सब-के-सब तने हुए थे।

अगले दिन सवेरे ब्रह्मेश्वर राव फिर मेरे कमरे में आये। प्रसाद भी उनके साथ था।

"आज सुना है छुट्टी है।" उन्होंने मेरा कन्धा थपथपाते हुए कहा।

"नहीं तो।" मैंने झेंपते हुए कहा।

"नहीं है, तो मना लो। प्रसाद भी मना रहा है।"

मेरा हौसला बढ़ा। मैं कमरा बन्द करके उनके साथ चल दिया। होस्टल से बाहर ब्रह्मेश्वर राव की टैक्सी खड़ी थी। प्रसाद मुझे देखकर मुस्करा रहा था। कारण साफ़ न था। मैं हैरान था।

टैक्सी ब्रह्मेश्वर राव के हुक्म पर एक मशहूर जौहरी की दुकान के सामने रुकी। दुकान अभी खुल रही थी। दरवाजे पर सन्तरी खड़ा सलाम कर रहा था। कोई सज्जन अन्दर जा रहे थे। हमारे सामने ठीक दरवाजे के पास एक और टैक्सी खड़ी थी। उसमें एक सुन्दर महिला बैठी थी। उसकी ओर हमारा ध्यान आकर्षित हुआ। गौर से जो देखा तो हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह कमलवेणी थी। वह हमें देख मुस्कराई.......माल गाड़ी का डिब्बा ही तो थी, कभी कलकत्ता में, कभी मद्रास में, कभी कड़वाकोल्लु में नहर के किनारे।

मैं उसको इस कदर घूर रहा था कि सीढ़ी पर से गिरते-गिरते बचा। संतरी ने हंसी दबाने की कोशिश की। कमलवेणी कह ही बैठी, "जरा संभल कर, आंखों का कसूर........" कहती-कहती वह रुमाल मुंह में रखकर हंसने लगी।

ब्रह्मेश्वर राव घड़ियों की अलमारी के सामने खड़े ध्यान से देख रहे थे। पाँच-दस घड़ियाँ रखी थीं, दाम भी बड़े थे। बाजार में मुश्किल से घड़ियाँ मिलती थीं।

"कहो! तुम्हें इसमें से कौन-सी घड़ी पसन्द है?" ब्रह्मेश्वर राव

ने मुझे देखते हुए पूछा। मैं मुस्कराता-मुस्कराता प्रसाद को देखने लगा, मानो वे गलत आदमी से पूछ रहे हों।

"अरे, बताओ भी, कौन-सी घड़ी पसन्द है?" ब्रह्मेश्वर राव ने फिर पूछा, "नौजवान हो, नये-नये फैशन जानते हो। हम तो बूढ़े हो रहे हैं, इसलिए हम तुम से पूछ रहे हैं और तुम छुई-मुई हो रहे हो।"

मैं ध्यान से घड़ियाँ देखने लगा और ब्रह्मेश्वर राव मुझे घड़ियाँ चुनता देख मुस्कराने लगे। मैंने एक सुन्दर घड़ी चुनकर उनको दिखाई।

"तो तुम्हें यह घड़ी पसन्द है?"

"हाँ।"

"अच्छी है, पर टिकाऊ भी है कि नहीं? सुन्दर है, मजबूत भी है कि नहीं?"

"जी हाँ, जितनी सुन्दर उतनी मजबूत। बढ़िया, टिकाऊ, स्विस
ड है। इससे अच्छी घड़ी आपको बाजार में न मिलेगी। दाम भी ज्यादा
हीं हैं।" बेचने वाला कह रहा था।

"कितना?" मैंने पूछा।

"चार सौ, सिर्फ चार सौ।"

"अच्छा बिल बनाओ, नई अंगूठियाँ भी हैं क्या?" ब्रह्मेश्वर राव
छा।

"हाँ, हाँ, इधर तशरीफ लाइये।" बेचने वाला हमें एक और अल-
के पास ले गया। अलमारी कमरे के नुक्कड़ में थी और अलमारी
ल में ऊपर जाने के लिए जीना था। वहाँ भी सीढ़ियों पर एक
सन्तरी खड़ा था। बड़े-बड़े लोगों की दुकान थी, उन्हीं के साज-
थे। उनकी रईसी को सलामी देने के लिए जगह-जगह गुलाम

ई, अँगूठी भी तुम चुनो।" ब्रह्मेश्वर राव ने कहा।

पको चाहिए क्या?" मैंने मुस्कराते हुए पूछा।

रा जमाना तो गया, अब जमाइयों का जमाना है। तुम ही

चुनो, वह भी तुम्हारी हमउम्र का है।"

"तो शादी तय हो गई है?" मैंने पूछा।

"हाँ, करीब-करीब।"

मैंने अँगूठी चुनकर दे दी। अँगूठी ब्रह्मेश्वर राव को भी पसन्द आ गई।

हम रुपया देकर दरवाजे में से गुज़र रहे थे कि वेन्कटेश्वर राव भी हाथ में पिस्तौल लेकर हमारे सामने से गये। वे मोटर से जाकर टैक्सी में बैठ गये। कुछ देर तक हमारी ओर घूरते रहे।

ब्रह्मेश्वर राव टैक्सी के जाने तक कुछ न बोले। फिर उन्होंने कहा, "तो यहाँ भी यह आ धमका। ज़रा बाद में आता नहीं तो अपशकुन हो जाता।" ब्रह्मेश्वर राव का 'अपशकुन' से क्या मतलब था मैं तब न जान सका।

"ये यहाँ क्यों आये हैं?" प्रसाद ने पूछा। तब तक वेन्कटेश्वर राव की टैक्सी मुड़कर यूनिवर्सिटी बिल्डिंग की ओर जा रही थी।

"पिस्तौल खरीदने। देखी नहीं?" ब्रह्मेश्वर राव ने कहा।

"क्यों?"

"नहीं समझे। रघू अब रिहा हो गया है। इसी कम्बख्त की तिकड़मबाजी से उसे कैद हुई थी। अब वह बाहर आ गया है और इसे चैन नहीं है। सुना है मद्रास में रहने की सोच रहा है। डर है कहीं रघू उसका काम तमाम न कर दे।

"इसीलिए पिस्तौल खरीदी है?" मैंने पूछा।

"डरपोक की पिस्तौल भी मदद नहीं कर सकती। पिस्तौल चलाने के लिए भी तो हिम्मत चाहिए। दूर-दूर भागा फिरता है। कुत्ते की जिन्दगी है, या तो गला फाड़कर भौंकता है नहीं तो पाँव चाटता-चाटता दुम हिलाता है। खैर, सवेरे-सवेरे इसके बारे में भी क्या बात करना।" हम टैक्सी में बैठकर टाऊन को चल दिये।

उस दिन ब्रह्मेश्वर राव जी ने एक-डेढ़ हज़ार रुपये के कपड़े खरीदे।

लेक्चरर हैं, छुट्टी पर आये हैं।" लेक्चरर थे, बिना कुछ सोचे-विचारे हम विद्यार्थियों के हाथ बंध गये।

सुजाता शायद हमारे साथ न आना चाहती थी, पर हमें बिठाती कहाँ और भेजती भी कहाँ? लाचार हमारे साथ चली आई।

हम बीच पर पहुँचे। ब्रह्मेश्वर राव वहाँ पहिले ही विराजमान थे। वे कांग्रेस के पुराने समर्थक थे। सभा स्थल से कुछ दूर हम टहलने लगे। समुद्र की गर्जन के बावजूद वक्ताओं का गर्जन बहुत दूर तक सुनाई देता था।

तमेड़ के पीछे एक वृद्ध व्यक्ति ने हमें देखकर मुख मोड़ लिया। शायद परिचित थी। पास कमलवेणी भी बैठी थी। वह समुद्र की ओर निहार रही थी। वृद्ध ने उसके कन्धे पर से सहसा हाथ उठाया, फिर जोर से कन्धा थपथपाया। हम अभी पास भी न आये थे कि कमलवेणी के साथ तेजी से कदम रखते हुए, छड़ी घुमाते सड़क की ओर चले गये। उन्हें पीछे देखने की भी हिम्मत न हुई। वे वेन्कटेश्वर राव थे। शायद जब पुजारी पाप करने निकलता है तो उसे अन्धा भी घूरता लगता है।

हमें वेन्कटेश्वर राव की पिस्तौल याद आई। शायद वह भरी-भराई उनकी जेब में थी। हम हँस पड़े।

दो-एक महीने बीत गये और हम रघू मामा के पास न जा पाये। प्रसाद आखरी वर्ष में था। वह एक क्षण व्यर्थ नहीं खोना चाहता था। जब गाँव जाना ही था तो दो-चार दिन के लिए जाने से क्या लाभ।

रघू मामा की हालत सुधर रही थी ...... यह नरसिंह मामा की चिट्ठी से मालूम हो गया था। ब्रह्मेश्वर राव ने जिस चिट्ठी के बारे में कहा था, मैं अब भी उसकी इन्तजार कर रहा था।

गाँव के बारे में कृष्णा राव अक्सर चिट्ठी लिखता। उसी से मालूम हुआ कि मुखासादार की हालत नाजुक थी। टांग तो पहले ही कट चुकी

थी, अब कोई और बीमारी उसका शरीर खोखला किये जा रही थी। मामा की रिहाई से तो उसके दिल की धड़कन और भी तेज हो गई होगी।

यह भी सुना गया कि उसने वह जमीन, जो जबरदस्ती हड़प ली थी, गाँव के मन्दिर के नाम लिख दी थी। मरते-मरते शायद वे पछताने लगे थे।

आदिनारायण तिरुपति होता हुआ मद्रास आया। वह मामा के परिवार का विश्वासपात्र था। उन्हीं की सहायता किया करता था। हमारा पड़ोसी था।

उसने बताया कि रघू मामा के शरीर पर बड़े-बड़े फोड़े निकल आ[ए] थे। कोई छूत की बीमारी थी, घर से बाहर भी न निकल पाते थे। पत्नी[...] मौन कर रखा था, बच्ची को भी न दुलारते थे। अन्नपूर्णा मामी [उ]नकी रात-दिन सेवा कर रही थी।

इसी बीच सुजाता की ट्रेनिंग भी खतम हुई। अफसर की मेहरबानी [से] उसकी नियुक्ति भी अनन्तपुर में हुई। वह वहाँ चली गई। ब्रह्मेश्वर [...] नाराज थे। वे उसे देखने फिर मद्रास न आये।

एक दिन शाम को हम एक मित्र को देखने निकले। उसका घर [तेनामपे]ट में था। तेनामपेट में तेलुगु भाषियों की बस्ती है। भूली-भटकी [...] वहीं गुजारा करने के लिए आन्ध्र से आती हैं। उनके पीछे उनके [...] भी चले आते हैं।

[अँ]धेरा हो गया था। सड़क पर नारियल की बाग़ की तरफ से, [...]यों में से पद्मा चली आ रही थी। हट्टी-कट्टी हथनी की तरह। [अँधे]रे में दूर से उसकी चाल-ढाल से उसको पहिचाना जा सकता [था। हम]ने उससे बच कर निकलना चाहा, पर वह इतनी नजदीक आ [गई थी कि ह]म उसकी नजर से न बच सके।

"[...] तुम?" उसने ही पहिले हम से कहा।

"हाँ, तुम यहाँ कैसे?" मैंने पूछा। प्रसाद चुप ही रहा।

"अब यहीं रहते हैं, उस नारियल के बाग में...कुटिया में।"

हाथ मलते-मलते, आँखें बड़ी करके वह खिसियाने लगी। "तुम यहीं पढ़ते हो ? कहाँ है तुम्हारा कॉलेज ?"

"यहाँ से बहुत दूर है।"

"घबराओ मत, भटकती वहाँ न आऊँगी। एक ही गाँव के हैं, इस-लिए पूछ लिया, बस।.........मैं कोई भाग-भूग कर नहीं आई हूँ। मेरे पिताजी जानते हैं। सूरया भी यहीं है, मेरे साथ। नौकरी की खोज में है, कहीं दिलवा सकोगे ?"

"देखी जायेगी।"

"दो-चार रुपये हों तो उधार देते जाओ। बचपन से जान-पहिचान है न ?"

मैं और प्रसाद एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। हमने इशारा किया कि हम तो ठन-ठन गोपाल हैं। हम आगे बढ़ गये और पद्मा भी जंगली जानवर की तरह एक और गली में चली गई।

भाग्य के रास्ते टेढ़े-मेढ़े होते हैं। वे दोनों अपने-अपने घर आराम से रह सकते थे। पर आज दर-दर भटक रहे थे।

शहरी जीवन का यह पहिला अनुभव था। समय चौकड़ी भर रहा था।

देश में एक प्रकार की नई चेतना संचरित हो रही थी। भारत की आज़ादी की भूमिका लिखी जा रही थी। मजदूर दल के नेता ब्रिटिश साम्राज्य के पंजे से भारत को रिहा कर रहे थे। भारतीयों की दो सदियों की इच्छा अनायास पूरी हो रही थी।

केन्द्र में श्री नेहरू के प्रधानमन्त्रित्व में आन्तरिक मन्त्रिमण्डल बन गया था, जिसमें मुस्लिम लीगी लीडर भी शामिल थे। दिल्ली के आपसी रस्साकशी का अन्यत्र भी असर हो रहा था। आपस में, कहा जाता था, मन्त्री 'फाइली जंग' लड़ रहे थे। रास्ते कम थे और रोड़े अटका-

वाले अधिक थे।

प्रान्तों में चुनाव हो रहे थे। कांग्रेस का जोर था, सबसे बड़ी थी। बड़े-बड़े लोग इसके नेता थे। सब जगह इसी की तूती बोलती १९४२ के आन्दोलन ने इसको और भी लोकप्रिय और बलशाली दिया था।

हम विद्यार्थियों में कांग्रेस के समर्थन करने वाले काफी थे। य साम्यवादियों का अपना जबरदस्त कक्ष था। साम्यवादी पार्टी कांग्रेस वट वृक्ष के सामने एक छोटेसे अंकुर के समान थी।

खबरों से मालूम हो रहा था कि यद्यपि रग्घू मामा अब भी बिस्त पर थे, किसी से बोलते भी न थे, तो भी वे लक्ष्मय्या को बुलाकर अक्स बहुत देर तक बातचीत किया करते।

गाँव में चुनाव की तैयारियाँ हो रही थीं। लक्ष्मय्या की या उसकी पार्टी की ताकत खास न थी। जगह-जगह पर जो लाल झण्डे दिखाई देते थे, वे धीमे-धीमे गायब हो गये थे। कांग्रेस की शक्ति भी गाँव में अधिक न थी। लक्ष्मीपति गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहे थे पर उनकी सुनने वाला कोई न था।

उड़ती-उड़ती खबरों में हमारे पास यह खबर भी पहुँची कि प्रकाश राव चुनाव में खड़े होने की सोच रहे हैं। उन्हें कांग्रेसी टिकट भी मिल गया था। जब कभी वे बाहर निकलते तो दो-तीन गुरखों को साथ ले जाते। कार में हथियार रहते। घर पर तो हमेशा सख्त पहरा रहता ही।

यह भी सुना गया कि रग्घू मामा को फिर जेल भेजने के लिये वे कुछ और तिकड़मबाजी कर रहे थे, पर सफल होते नजर न आते थे।

रग्घू मामा ने बिस्तर पर पड़े-पड़े, सुनते हैं, सुब्बाराव की तरफ, बिना कुछ बोले, जोर से घूरा। दोनों ने एक ही साथ आँखें फेरलीं। शायद उनके घूरने का वह मतलब समझ गया था। जमीन तथा रिश्ते-दारों को छोड़ कर वह बिस्तरा-बोरिया बाँध विजयवाड़ा चला गया था। वहाँ कुछ कारोबार कर रहा था।

यद्यपि मामा बीमार थे तो भी उनके कारण कई घटनायें स्वतः घट रही थीं।

आखिर हमें अवकाश मिला। लम्बी प्रतीक्षा समाप्त हुई, जल्दी-जल्दी घर आये। प्रसाद तो अपना सब कुछ मद्रास से ले आया था। उसका आखिरी साल पूरा हो गया था।

गरमियाँ शुरू हो रही थीं। खेत खाली थे। कहीं-कहीं गन्ना जरूर खड़ा था। अन्यथा सब सुनसान था।

चुनाव हो चुका था। कांग्रेस की भारी विजय हुई थी। आन्ध्रकेसरी श्री प्रकाश प्रान्त के प्रधान मन्त्री निर्वाचित हुए थे।

गाँव पहुँचते ही हम रग्घू मामा के घर की ओर भागे। एक लड़की इमली के पेड़ के नीचे रेंग-रेंग कर सूखी इमली बटोर रही थी। हमें सहसा अपना बचपन याद आगया। अन्नपूर्णा मामी उस लड़की को लेने लपकीं। लड़की को गोद में लेकर हमें आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगीं। फिर एकाएक रोने लगीं। हम अन्दर चले गये।

मामा अपनी पुरानी जगह पर बैठे थे। बाल खिचड़ी हो रहे थे। चमड़ी सूख गई थी। वे आँखें जो कभी उनके चेहरे की रौनक थीं, धंस गई थीं और पत्थर की तरह चमक रही थीं। जेल-जीवन और लम्बी बीमारी ने उनको अस्थिपंजर-सा कर दिया था। हमें देख कर उन्होंने मुस्कराने की कोशिश की।

"अरे, तुम बच्चों को फुरसत मिल गई है? कबसे तुम्हारी इन्तजार कर रहा हूँ। आओ बेटा, बैठो।" मामा ने कहा।

"मामा, आपकी तबियत कैसी है।"

"ठीक है, तुमतो ठीक हो?"

"हूँ।" मैंने सिर हिला दिया।

"क्यों बेटा, तुम ठीक हो? सुनता हूँ कि तुम कॉलेज छोड़कर कहीं

चले गये थे। क्या खब्त सवार हुई थी ? पिताजी की नहीं सोची ? वे बेचारे जितने दिन जेल में रहे, काँटों पर सोये होंगे। अच्छा नहीं किया बेटा ? अब कैसे हो ?"

"हाँ।" प्रसाद ने कहा।

"मामा, यह सब उस प्रकाश राव की करतूत है। अगर वह धोखा न देता तो आपकी हालत यह नहीं होती।" मैंने कहा।

"क्या हालत है मेरी ? जेल न जाता तो क्या बीमार न पड़ता ? जाने दो।"

"पड़ते या न पड़ते, यह बात दूसरी है। पर सच यह है कि आप बीमार पड़ गये। और बीमार पड़ गये जेल की वजह से, जेल गये उस प्रकाश राव की वजह से......जी चाहता है......"

"क्या कहते हो बेटा ? अधिक पढ़-लिख गये हो, क्यों ?"

"नहीं, मामा।"

"किताबें चाटने से लोग बहुत कुछ जान जाते हैं, पर अनुभव से पाई हुई अक्लमन्दी कुछ और है। हर किताब मन पर अपनी अलग पुताई कर जाती है, पर अनुभव ईंट-पत्थर की चिनाई है। खैर, तुम तो यह जानते ही होगे, किताबों में यह लिखा ही होगा।"

"नहीं तो।"

"तुम्हें अपनी किताबें याद नहीं हैं।" मामा ने हँसने की कोशिश की। पर मुस्कराहट ओठों में कहीं उलझ गई और दयनीय-सी शक्ल न गई।

"मामा, फिर भी आप कुछ कहना चाहते थे।"

"कभी सुनी है कहावत ? चोर-चोर ममेरे भाई।"

"हाँ।"

"ये सब एक ही थैले के चट्टे-बट्टे हैं......ये प्रकाश राव और ... कटेश्वर राव, हर रईस मोटे तौर पर उन्हीं की तरह बरतता है, यह ... निजी अनुभव है। प्रकाश राव ने भी अपनी जान बचाने के लिये

यही किया जो दूसरा रईस उसकी जगह करता। दोष तो उस समाज का है, जिसने इस तरह के आदमियों को बनाया और पनपने दिया। समाज की नहलाई करनी ही होगी। खेत समान करना होगा। धान के खेत में बड़े पेड़ों का क्या काम? घास-फूस, झांखड़ का क्या काम? दोनों ही बेकार हैं। यह तुमने पढ़ा ही होगा। खैर, मेरी बात जाने दो। तुम सुनाओ शहरी हो गये हो।"

हम दोनों एक-दूसरे की ओर देखते-देखते मुस्कराने लगे।

"शहर में रहते-रहते गाँवों को तो नहीं भूल गये हो?"

"पेड़ कभी जड़ को भूलता है मामा?" मैंने कहा। पेड़ और जड़ का रिश्ता मैं क्या जानूँ? जहाँ तक मेरा सम्बन्ध था, मैं धीमे-धीमे गाँवों को भूल रहा था। पर मामा को खुश करने के लिये ही ऊपर का जवाब दिया था। शायद यह भी शहरी तहज़ीब थी।

"तुम अभी मद्रास से चले आ रहे हो क्या?"

"घर में समान पटक कर सरपट यहीं भागे-भागे आये हैं।"

"सुना है सुजाता मद्रास नौकरी करने गई है। मिली? मुझ से कहकर भी न गई। शहर क्या गई कि बुरी तरह ऐंठ गई है। काम ही करना था तो क्या यहाँ काम कम था? एक पाठशाला खुलवा देते भाई साहब ही। वह काम करती, पढ़ाती, पाँच-दस का भला करती। नौकरी कर, सौ-डेढ़-सौ कमा कर किसका उद्धार करेगी? अच्छा, तुम जाओ, खाओ, पियो।" मामा मुँह नीचा करके, डंडे से जमीन कुरेदने लगे।

मामा का आखिरी वाक्य सुनकर हमें आश्चर्य हुआ। हम कभी उनके घर खाने के समय बिना खाये-पिये न गये थे। किवाड़ की आड़ में खड़ी अन्नपूर्णा मामी सिसक रही थीं।

"अभी रहोगे न? मिलते रहना।" मामी ने अपने को सम्भालते हुए कहा।

"मामा, आपकी चिट्ठी की अब भी इन्तजार कर रहा हूँ।"

"चिट्ठी लिखने की आदत नहीं है। अब तुम आगये हो बात कर

लूँगा, जल्दी क्या है। आओ, तुम्हें छोड़ आऊँ। अब तो अच्छी
चल-फिर लेता हूँ। बेटा प्रसाद, तुम उधर जा ही रहे हो, सुब्बु चा
शाम को गाड़ी भेज देने के लिए कहना। जरा काम है।" मामा
साथ आने लगे। पिछवाड़े की दीवार के पास उन्होंने आकर कहा, "
बेटा, याद है यह इमली का पेड़ ? कई तूफ़ान आये पर यह वैसा
खड़ा है। दो-एक टहनी टूटीं तो पाँच-छः उग आई हैं।"

शाम हुई। मैं फिर रग्घू मामा के घर की ओर चला। जाते-जा
प्रसाद के घर गया। वह पिछवाड़े में बैठा था। एक तरफ़ वायुसुत
अपने पति के साथ बैठी थी, मामा न थे।

प्रसाद ने मेरे साथ आने से इन्कार कर दिया। उसकी माँ की हिदा-
थी कि वह घर में रहे।

मैं अकेला ही मामा के घर गया। घर में ताले लगे थे। सभी दरवाजे
खिड़कियाँ बन्द थीं। वह खटिया जो हमेशा बाहर पड़ी रहती थी, बाहर थी,
पर उसपर कोई न था। मैं अवाक् रह गया। पास का सुब्बाराव का
मकान भी खाली था। उसकी बगल में से खम्मा का अट्टहास प्रतिध्वनित
हुआ। मैं सहमा। फिर ख्याल आया कि मामा ने गाड़ी मंगवाई थी
कहीं गये होंगे......पर मामी ?

मैं सोचता-सोचता सुब्बु मामा के यहाँ गया। हम छुटपन में भी
उनके घर न जाया करते थे। अब तो गये हुए सालों हो गये होंगे। उन
की पत्नी तिनुक मिजाज़ थी। हमेशा घमंड की बुर्ज पर तनी बैठी रहती।
यह हमें पसन्द न था। उनकी लड़की ने बताया कि सुब्बु मामा बाहर गये
हुए थे।

और कोई घर उस समय गाँव में न था, जहाँ मामा के बारे में जाना
जा सकता था, सिवाय मल्लिखार्जुन राव के। उनकी पत्नी किसी और
के घर में गप्पें मार ही रही थी, इसलिए मैंने अनुमान कर लिया कि वे

घर में न होंगे। चुनाव के बाद वे इतना घूमने-फिरने लगे थे कि गाँव में अक्सर न रहा करते।

मैं निराश पुल पर जा बैठा। नहर में पानी न था। यहाँ बैठते ही मुझे समय भागता-सा लगता था। पुरानी घटनायें आँखों के सामने परेड करने लगती थीं। सारा बचपन दोहरा जाता था। लम्बी साँस खींचता मैं कुछ याद नहीं करना चाहता था। कुछ मन में बिंध रहा था। मैं आते-जाते लोगों को देखने लगा।

नजर पटरी की ओर मुड़ी। नहर के किनारे, जहाँ कभी पाठशाला थी, अब उसका स्मारक भी न था। किसी के स्वप्न हमेशा के लिए भस्म हो गये थे। मैंने आँखें मूँद लीं।

थोड़ी देर बाद रामय्या आता हुआ दिखाई दिया। उसके साथ दो आदमी थे और एक बड़ा मेंढा। अब वह जमीन वाला ही न हुआ था पर जमीन वालों के वाहियात शौक भी पालने लगा था। वह, खेत में काम हो या न हो, खेत चला जाता था। काम होता तो करता-करवाता, नहीं तो खाली खेत की रखवाली करता। वह जाता-जाता मुझे देखकर रुक गया।

"अरे, अब बड़े हो गये हो?" वह मुझ को सिर से पैर तक गौर से देखने लगा। "बड़े शहर·····मद्रास में रहते हो न?" उसने पूछा।

"हाँ।"

"अच्छे हो न?"

"हाँ।" मैं उससे बात न करना चाहता था। मैं किसी और उधेड़-बुन में था।

"कभी तुम्हें हमारी पद्मा दिखाई दी? सुनता हूँ कि वह वहाँ है। कलौती है, आँखों में धूल झोंककर चली गई। बड़ी हो गई है। रस्सी से बाँधकर रखता क्या?" उसकी आँखों में तरी थी।

मैं सच कहता तो बात और बढ़ती, और मैं उससे बात बढ़ाना न चाहता था। मैं चुप रहा।

"बेटा, बड़े शहर का टिकट कितना है ?" उसने पूछा।
"बीस-पच्चीस रुपये आने-जाने के।"
"पच्चीस रुपये ?" उसने आश्चर्य में अपना मुख खोल लिय आँखें पोंछता चला गया।

काफी देर हो गई थी, मैं भी जाने को तैयार हो रहा था कि काट्टर तरफ से एक गाड़ी आती दिखाई दी। बैल तेजी से झूम-झूमकर चल र थे। सुब्बु मामा की गाड़ी थी। मैं मुँडेर के सहारे खड़ा हो गया।

गाड़ी में रग्घू मामा थे, ऊँघते-से लगते थे। शायद कहीं पी आये थे। गाड़ी में और कोई न था।

"मामा, कहाँ से चले आ रहे हो ?" मैंने पूछा।

वे न बोले। बैल घर की ओर जा रहे थे, इसलिए उनको हाँकने की आवश्यकता न थी।

"मामा, मामी कहाँ है ?"

"मामी ? जाने दो······चल बेटा !" वे दौड़ते हुए बैलों की पूँछें मरोड़ने लगे।

मैं नरसिंह मामा के घर गया। वे तब तक बुय्युर से वापिस आ चुके थे। वे पत्नी के बहुत मना करने पर भी रग्घू मामा के घर की ओर चल दिये। उन्होंने मुझे साथ आने न दिया।

मैं घर जाकर, प्रातःकाल की प्रतीक्षा करता, रातभर करवटें बदलता रहा।

रग्घू मामा के घर सवेरे-सवेरे लोगों का जमघट लग गया था। बूढ़े, जवान, बच्चे, स्त्री, मर्द सभी वहाँ उपस्थित थे और मामा अपनी टूटी-फूटी खटिया पर बुत की तरह बैठे थे।

खम्मा और नरसिंह मामा की पत्नी की कृपा थी कि सारा गाँव अन्नपूर्णा मामी को दोषी ठहराता था। जो दो-चार अन्यथा सोचते भी

थे, वे बहुमत को देखकर चुप थे।

कई यह आश्चर्य कर रहे थे कि जो काम रग्घू मामा को बहुत पहिले कर देना चाहिये था, इतने दिनों बाद उन्होंने क्यों किया ?

"जब भेजना ही था तो उस बेचारी से बीमारी में इतनी नौकरी-चाकरी क्यों करवाई ? खुद गर्ज है।" यह तो चार औरतों की दबी आवाज़ थी।

कई ऐसे भी थे, जो ज़बान से हमेशा नमक-मिर्च ही उगला करते थे। उनकी राय थी "राघवैय्या भला आदमी है और कोई होता तो इस कुल्टा का कभी ख़ात्मा कर देता। सुब्बाराव भी पहुँचा हुआ आदमी है। दोस्ती के नाम पर दगा कर गया। उसी की करतूत है, नहीं तो दुम मोड़ कर यों क्यों भागता ?"

घायल साँप को चींटियाँ तक मार देती हैं। अपमानित स्त्री को दूषित करने के लिये मूक भी वाचाल हो उठते हैं। यह इस टेढ़े-मेढ़े संसार की पुरानी परम्परा है। सब कोई दूसरे की बुराई करके अपनी बुराई छुपाता है।

नरसिंह मामा भी उस दिन कुप्पुर न गये। दुकान बन्द थी। वे उदास अपने घर के बाहर बैठे थे। उनके पास सुब्बु मामा खड़े थे। गाँव के दो-चार आदमी भी थे। नरसिंह मामा रात को काफ़ी देर तक अपने भाई से बातें करते रहे। पर नशे में चूर व्यक्ति से भी क्या बातचीत हो सकती है ? सवेरे वे फिर गये, पर उनकी हालत सवेरे भी अच्छी न थी। शायद वे अब जाना ही न चाहते थे। वे अपने भाई को भलीभाँति जानते थे। जो काम वे कर बैठते थे, उसकी नुक्ताचीनी की जा सकती थी, पर उसको रद्द करवाने की उनके भाई भी हिम्मत न कर पाते थे।

यह कतई घरेलू बात थी। ऐसी बात, जिस पर कुछ दलील-वलील भी न हो सकती थी। यह बात ही ऐसी है.........राम तक ने, सीता जैसी स्त्री को किसी धोबी के व्यंग्य पर घर से बाहर कर दिया था। और रग्घू मामा तो राम-रावण के अजीब मिश्रण से थे।

अन्नपूर्णा मामी के लड़की तब पैदा हुई थी, जब मामा जेल, ... ने

बहुत दिनों तक सन्तानहीन थीं, मामा ने शायद बच्चों की आस छोड़ दी थी। एकाएक उनका माँ बन जाना अच्छे-से-अच्छे आदमी को भी सन्देह में डाल सकता था। फिर मामा तो मामा ही थे।

नरसिंह मामा को इन ऊटपटाँग बातों पर विश्वास न था। उनका ख्याल था कि अन्नपूर्णा जैसी स्त्री इस तरह के काम नहीं कर सकती। यह गन्दी स्त्रियों की साजिश है। पर वे क्या करते ? पत्नी की बात थी। जोर से कुछ कह भी न पाते थे।

मेरा मन विचित्र स्थिति में था। सयाना हो चुका था। दुनिया को थोड़ा बहुत जान गया था। कितने गाँव वाले जानते थे कि मामा और मामी, जेल जाने से पहिले कितने प्रेम से रहा करते थे ? वे एकदम बदल गये थे। यह संयोग की बात थी कि उनके लड़की तब पैदा हुई, जब वे जेल में थे। मामी स्त्री नहीं, देवी थीं और इस देवी-देवताओं के देश ने देवियों को सताकर ही उन्हें पूजना सीखा है। कभी-न-कभी तो सच मालूम होगा ही।

शाम को नन्दमूरू......(मामी के मायके) से कोई आदमी मामी के बारे में खबर ले आया था। नीम के पेड़ के नीचे, खम्मा की चौकड़ी ने खबर पर बहस भी शुरू कर दी थी। नरसिंह मामा की पत्नी भी वहाँ उपस्थित थी।

"बाँझ बच्चों के लिये व्यभिचार ही नहीं और भी न जाने क्या-क्या करती है ?" खम्मा ने कहा।

"पर अन्नपूर्णा इस तरह की स्त्री न थी।" किसी ने कहा।

"अगर बेकसूर होती तो भला क्यों कुएँ में गिरती ? सुना है लड़की लेकर कुएँ में जा कूदी। मरना ही था तो उस बेचारी लड़की को लेकर [illegible] कूदी है ?"

"पर वह बचा ली गई थी न ?" किसी और स्त्री ने कहा।

"वह भी कोई ढोंग रहा होगा। भला मरते को कौन बचा सकता है ?" [illegible]ा ने कहा।

"सुनते हैं कि उसे गाँव वालों ने समझाया कि इस तरह मरोगी तो सारी दुनिया तुम्हें ही दोषी ठहरायेगी। फिर लड़की के लिये तुम्हें जीना ही होगा। उसको मारने का तुम्हें क्या अधिकार है? जीकर यह दिखाओ कि तुम बेकसूर हो। वहाँ के मुन्सिफ ने दया दिखाई, उसने पुलिस से शिकायत भी न की।" नरसिंह मामा की पत्नी ने बताया।

"यानी, वह जीती है?" एक स्त्री ने पूछा।

"हाँ, पर कितने दिन जियेगी? किसके सहारे जियेगी? रिश्तेदार कब तक दया दिखायेंगे?" नरसिंह मामा की पत्नी ने कहा।

"बदचलन स्त्री की यही हालत होती है।" खम्मा ने कहा।

"पर......" पहिली स्त्री कुछ कहना चाहती थी, पर चुप रह गई।

सारा गाँव जानता था कि खम्मा कभी-कभी रग्घू मामा से चार आखें कर लेती थी और...... । न कहूँ तो अच्छा। इस दुनियाँ में उलटा चोर कोतवाल को डांटे वाली बात ही चलती है। कौन जानता था कि मामी को इस तरह बाहर निकाल कर खम्मा अपने लिऐ शायद रास्ता साफ कर रही थी। बच्चों वाली माँ है, एक भलेमानस की स्त्री है, मुझे शायद यह बातें नहीं करनी चाहिये।

मैं इधर-उधर की बातें सुनकर विह्वल हो उठा। खेतों में चला गया। खाली खेत, सहिष्णु भूमि, जो उत्तम स्त्री की तरह सब कुछ सह लेती है, पर कुछ बोलती नहीं। वह शान्त थी। अन्धी समाज की तरह बकवास न कर सकती थी। वह आखिर आदर्श स्त्री, सीता की जननी थी न?

मामा घर से बाहर भी न निकलते थे। न कोई गाँव वाला उनको देखने जाता। वे बहिष्कृत-से लगते थे।

उनकी बहिन और ब्रह्मेश्वर राव जरूर उनको समझाने आये। पर कोई नतीजा न निकला। पत्नी को पति पर जबरदस्ती नहीं थोपा जा सकता। अगर कोई समाज-भीरु हो, बदनामी के नाम पर पसीना-पसीना

हो जाता हो, तब दूसरी बात थी। मामा को इन दोनों की फिक्र न थ

सुब्बम्मा हिम्मत करके उनके पास दो-चार बार हो आई थी। कु
खाने के लिये भी दे आई थी। कभी मामा ने उसकी जान बचाई थ
तब से वह उन पर जान देती थी। वह गाँव में बदनाम थी। मुँहफट
पर रग्घू मामा के नाम पर हाथ जोड़ती थी।

उसी से मालूम हुआ कि मामा दिन-रात पी रहे थे। ऐसे पी रहे थे
कि जैसे पी-पीकर मौत को बुला रहे हों...... खाँसते रहते। कमजोर शरीर,
तिस पर गँवारू दारू का नशा, बहिष्कार, बुरी हालत में थे।

तीन दिन बाद उनके खाने-पीने का सवाल उठा। दो भाइयों के
गाँव में घर थे और भी कई सम्बन्धी थे, पर उनके पास किसी ने खाना
तक न भेजा।

आखिर नरसिंह मामा की पत्नी उनको बुलाने गई। वह अन्नपूर्णा
मामी के किस्मत के हेर-फेर पर फूली न समाती थीं। अब मामा की जमीन,
वे सोचती होंगी, कभी-न-कभी उनके हाथ ही आयेगी।

नरसिंह मामा की पत्नी का रग्घू मामा के पास जाना औपचारि
था। यह बात दोनों से छुपी न थी। सम्भव है कि रग्घू मामा ने सोच
हो कि भाई के लिए अपने परिवार के पालन-पोषण में कठिनाई हो रह
थी, फिर वे क्यों अपने को उन पर थोपते? उन्होंने भोजन के लिए आने
से इनकार कर दिया। पर नरसिंह मामा की पत्नी निराश न हुई।
उन्होंने नौकर के हाथ खाना भिजवा दिया।

मल्लिखार्जुन राव के घर में वे पहिले भी कभी-कभी खा लेते थे।
म्मा से भी वे हिले-मिले हुए थे। खम्मा सोचती होगी कि उसके पति
हीं भी घूमे-फिरें, मगर रग्घू मामा उसके घर में खाने-पीने लगें, तो उस
और उसके बाल-बच्चों को फाके न करने पड़ेंगे। उसी की तो यह
ी करतूत थी।

वह टिफिन कैरियर में भोजन लेकर रग्घू मामा के घर गई और उन
खिला भी आई। इसके लिए भी मना आई कि वे उसके घर ही

खाया करेंगे।

शामको जब हम घूमते-फिरते उसके घर के सामने से गुजरे तो वेंकट-स्वामी सज-धज कर, नये-साफ कपड़े पहिने, दरवाजे के पास खड़ा था और पिछवाड़े में मुर्गी के पंख उड़ रहे थे। मामा के लिए मुर्गी कट रही थी। खम्मा के घर तो भात और लस्सी से ही अक्सर गुजारा हुआ करता था। खम्मा वहीं खड़ी थी।

वेन्कटस्वामी हमें देख कर हमारी तरफ आया। वह बड़ा खुश था, शर्मांता-सा लगता था।

"क्यों बे, क्यों यों छैला बना हुआ है?" मैंने पूछा।

"फिर शादी कर रहा हूँ।"

"क्यों एक काफी न थी?"

"आप छोटे हैं, औरतों का चस्का नहीं जानते। शराब का-सा है। एक बोतल जब टूट गई तो दूसरी चाहिए ही।"

"क्यों बे, पी तो नहीं रखी है?"

"धोबी हूँ......झूठ क्यों बोलूँ? हम लोग शाम को थोड़ा-बहुत गला गीला कर ही लेते हैं।"

"अच्छा।"

"बाबू, इस बार नहीं छोड़ूँगा। जरूर इनाम लूँगा। आपके रखू मामा ने पूरे एक सौ सोलह रुपये देने का वादा किया है। दिलवाले हैं।"

वायुसुता पति के साथ वाल्टायर में रहती थी। छुट्टियों में घर आई हुई थी।

इस वर्ष हम अप्पाराव के निकट सम्पर्क में आ सके। हमने सोचा था कि वे किताबी कीड़े होंगे पर बात ठीक उल्टी निकली। वे भूले न कि किस रास्ते से वे लेक्चरर-शिप तक पहुँचे थे। गरीबी का वह रौद्र रूप उन्होंने देखा था, जो कम ही देखते हैं। पढ़-लिख गये थे, अच्छी नौ

व्याख्यान हुआ। व्याख्यान प्रभावशाली था। सभा में नरसिंह मामा अपने दोनों भाइयों के साथ उपस्थित थे। वे उनका भाषण सुनकर इतने प्रसन्न थे कि कभी-कभी पुलकित हो आँसू भी बहा बैठते थे।

अप्पाराव कभी शहद बहाते, कभी आग बरसाते। भाषा में प्रवाह था। भावों के उतार-चढ़ाव के साथ वह भी भारी-हल्की होती जाती थी। कभी गरजते, कभी दबी आवाज में गद-गद स्वर में रोते-से लगते। विचार हृदय चीर कर आ रहे थे। श्रोता मन्त्रमुग्ध थे।

वे बोल रहे थे और लक्ष्मय्या आदि श्रोताओं में पार्टी के लिए चन्दा वसूल कर रहे थे। वे दृश्य याद आये जब कि कांग्रेस की सभाओं में स्त्रियाँ अपने गहने उतार कर दे देती थीं। तब सत्याग्रह का आन्दोलन चल रहा था और अब बिना किसी आन्दोलन के, लोगों में नया उत्साह संचरित हो रहा था। वे भरसक 'तोयं पुष्पं फलं' पार्टी के लिए दे रहे थे।

अप्पाराव के व्याख्यान का लोगों पर इतना असर हुआ कि उनकी माँग बढ़ने लगी। लक्ष्मय्या ने यलमरू के पार्टी के सदस्यों से कहकर वहाँ भी एक सभा करवाई। वहाँ भी हमारे गाँव वाले एक बड़ा जत्था बनाकर पहुँचे। गाते-गाते, उन्होंने सारा रास्ता तय कर लिया।

मैं और प्रसाद दो और आदमियों को लेकर गाँव वालों के पीछे-पीछे कड़ी दुपहरी में गये। हमारा आदमी एक सभा में बोल रहा हो और हम न जायें, यह कैसे हो सकता था?

नरसिंह मामा उय्युर से घोड़ा गाड़ी में आये। रग्घू मामा काहूर से ब्रह्मेश्वर राव और उनकी पत्नी को साथ लेकर एक बैल गाड़ी में पहुँचे। सभी वायुसुता के पति को सुनने के लिये उत्सुक थे। नरसिंह मामा का कांग्रेसी सफेद रंग कभी का आर्थिक परिस्थितियों ने खरोंच दिया था। जेल से रिहा होने के बाद रग्घू मामा पर भी लाल कलई पुत गई थी।

यलमरू में भी बड़ी भीड़ थी, गाँव वालों को ही अचरज हो रहा था कि वह शर्मीला लड़का, कैसे इतना अच्छा वक्ता बन गया था। उनको वे दिन अब भी याद थे, जब कि भूखा, नंगा वह धूल में खेला करता

था। उसको अब सफेद साफ कपड़े पहिने मंच पर खड़े धुआँ-धार भा
देते देख वे चकित थे। भाषण का यलमरू वालों पर भी वही असर हुअ
जो कि हमारे गाँव वालों पर हुआ था।

वायुसुता के ससुर, उन व्यक्तियों में थे, जो गाँधीजी के नाम पर ह
काँग्रेसी को सलाम करना अपना फर्ज समझते थे। उनके बुरे दिन लड़क
की नौकरी के कारण लद गये थे। वे ही एक व्यक्ति थे, जिनको वायुसुता
के पति का भाषण कतई नापसन्द था। वे डर रहे थे कि उनका लड़का
साम्यवादियों में भटक रहा है। उनकी राय में यह भाग्य का खेल था
कि कोई धनी पैदा होता है तो कोई गरीब और दोनों का आपस में
भिड़ना गलत था।

हम रग्घू मामा के साथ, ब्रह्मेश्वर राव की गाड़ी में काटूर गये।
हमारे साथ नरसिंह मामा भी थे। ब्रह्मेश्वर राव का घर परिचित था।
वह कभी बड़ा लगता था, छत बहुत ऊंची जान पड़ती थी, पर अब वह
मकान मामूली मालूम होता था।

प्रसाद अन्दर चला गया। नरसिंह मामा अपनी बहिन से बातें
करने लगे। मैं, रग्घू मामा और ब्रह्मेश्वर राव कमरे में बैठकर सुस्ता
हे थे। रग्घू मामा चुप थे, गमगीन। अन्नपूर्णा मामी जैसी स्त्री को
ोड़ना आसान है, पर उसके बगैर रहना आसान नहीं। हिन्दू स्त्री का
म भले ही कर्तव्य प्रेरित हो, अपने आप में उदात्त है। पशु भी उसको
कर पुरुष हो जाता है। फिर अन्नपूर्णा मामी तो साधारण स्त्री से
बालिश्त ऊपर थीं।

साधारणतः एक वस्तु के अभाव में मनुष्य उस वस्तु का वास्तविक
ंकन करता है।

मामा बिगड़े हुए आदमी थे। पर उनके भी पागलों की तरह अपने
त थे। सभी सिद्धान्तों के आधार में अभिमान था। वे प्रेम-परम्परा

घरबार, सभी को उस अभिमान का ईन्धन बना सकते थे। मैं उनके बारे में सोचता जा रहा था। वे एकाएक ऊँघने लगे।

रघू मामा उन लोगों में न थे, जिनको समाज का लठ अपनी पीठ पर ही नजर आता है। वे समाज की परवाह न करते थे, पर उनकी बेपरवाही में समाज के प्रति एक प्रकार का आदर था। वे उसकी सत्ता स्वीकार करते थे। पर उनका अभिमान उसे धिक्कारने को प्रेरित करता। विचित्र आदमी थे।

"अब तो तुम्हारी छुट्टियाँ करीब-करीब खतम हो गई हैं?" ब्रह्मेश्वर राव ने पूछा।

"जी हाँ।"

"क्या पढ़ने का इरादा है? इन्जीनियर और डाक्टर तो तुम बन नहीं सकते।"

"फिलहाल मर्जी भी नहीं है।"

"फिर क्या बनना चाहते हो?" उन्होंने पूछा।

"अभी कुछ निश्चय नहीं किया।"

"निश्चय कर लेना अच्छा है न?"

"जी, पर मैं ऐसे रास्ते पर जा रहा हूँ, जिस रास्ते से कई रास्ते फटते हैं। हाँ, अभी फटने शुरू नहीं हुए, पर जब फटेंगे तो सोच-विचार कर कुछ करना ही होगा। मेरा मतलब अर्थशास्त्र के अध्ययन से है।"

"शायद तुम भी ठीक कहते हो। अच्छा बेटा, चाय-पानी तो लाओ।" उन्होंने अपनी लड़की को आवाज लगाई। जब वह तुरत न आई तो वे खुद ही अन्दर चले गये।

थोड़ी देर बाद उनकी लड़की, सुजाता की छोटी बहिन, रेशमी साड़ी पहिने, मुँह पर बड़ा टीका, पाऊडर की मोटी परत, बाल सवारे, सारे बालों पर फूलों का गुच्छा लगाये, शर्माती, चाय की ट्रे रख गई। मैं उससे परिचित न था। देखा जरूर था। पर उसका ...

मुझे समझ में न आ रहा था। सयानी लड़कियों के ...

एक आभूषण है।

मैं चाय पीने लगा। थोड़ी देर बाद वह पान ले आई। मेरी खाने की आदत न थी। रघू मामा ने बीड़ा उठा लिया। मामा ने लड़की को अपने पास बिठा लिया। "जानते हो इस लड़की को?" उन्होंने मुझ से पूछा।

"कभी छुटपन में देखा था।"

"अब बहुत बड़ी हो गई है। क्यों बेटी?" मामा हँसने लगे। मामा के साथ वह भी मुस्कराने लगी।

"मालूम है यह मद्रास में पढ़ रहा है, बहुत बड़ी पढ़ाई। प्रसाद भी उसी कालेज में पढ़ता था। पढ़े-लिखे आदमी पसन्द हैं न?"

वह मेरी तरफ देखकर झेंप गई। जाने क्यों मैं भी खोया हुआ उसकी तरफ घूर रहा था। मैंने कभी उतनी बुरी तरह मद्रास की कालेज की लड़कियों को भी न घूरा था।

"अच्छा तुम जाओ बेटी।" ब्रह्मेश्वर राव ने कहा। वह जाती जाती किवाड़ से टकरा गई। पता नहीं वह किस ख्याल में थी।

मैं ब्रह्मेश्वर राव जी के घर कई बार गया था। कभी गाड़ी में भुस लेकर, कभी नरसिंह मामा की खबर पहुँचाने। पर मेरी इतनी आवभगत और खातिरदारी कभी न हुई थी।

हम चलने को तैयार हुए। नरसिंह मामा जब दरवाजे से निकले तो अपनी बहिन से कह रहे थे, "फिक्र न कर, मैं सब देख लूँगा।"

"रघू, तू भी कोशिश करना।" उनकी बहिन ने मामा से कहा।

"गाड़ी लेते जाओ।" ब्रह्मेश्वर राव ने मामा से कहा।

काटूर गाँव से गाड़ी बाहर निकली तो हवा से बातें करने लगी। रघू मामा हाँक रहे थे। मामा की बगल में बैठा, मैं भी बैलों की दुमें मरोड़ने लगा। मैं अजीब मूड में था, जैसे नशे में हूँ। प्रसाद मुझे देख आँखें बना रहा था।

"कहाँ से आ रहे हो? ब्रह्मेश्वर राव से कुछ बातचीत हुई थी क्या?" माँ ने भोजन परोसते हुए पूछा।

"कोई खास बातचीत नहीं हुई।"

"मद्रास में मिले थे कि नहीं?"

"हाँ, हाँ, मिले थे।" अब मेरी मोटी अक्ल को भी यह बात समझ आने लगी—प्रसाद का आँखें बनाना, उस लड़की का बन-ठनकर शर्माते-शर्माते चाय परोसना, ब्रह्मेश्वर राव का मिल-मिलकर बातें करना—सबका कारण साफ होने लगा। लेकिन मैं यह न जान सका कि क्यों मुझसे छुप-छुपकर ये बातें हो रही थीं।

"अब तुम बड़े हो गये हो बेटा, जो चीज जब होनी चाहिए, तभी हो जानी चाहिए।"

"क्यों इतने घुमा-फिरा कर बातें करती हो? कह दो न सीधे ढंग से।"

"मैं चाहती हूँ कि तुम शादी कर लो। तुम्हारे पिता चाहते हैं कि पढ़ाई के बाद तुम शादी करो। पर वे भी अब, तुम्हारे नरसिंह मामा के कहने-सुनने पर मान गए हैं। चिट्ठी लिखना चाहते थे। वादा भी किया था, पर तुम आ ही रहे थे, इसलिए चिट्ठी न लिखी। और जब से तुम घर आये हो गल्ती से भी दो घण्टे आराम से घर में न बैठे। तुम रहे हो न?"

"हाँ, हाँ।"

"यह कोई जरूरी नहीं है कि विद्यार्थी जब तक रहे, तब तक कोई शादी न करे। तुम वासुसुता के पति को ही देख लो। विवाह करने के लिए कह रहे हैं, घरबार चलाने के लिए थोड़े ही कह रहे हैं? क्या विवाहित लोग नहीं पढ़ा करते? फिर वे तुम्हारी पढ़ाई का खर्च भी देने तैयार हैं। पढ़-लिखकर करोगे क्या? नौकरी तो करोगे नहीं? जो छ पढ़ना है, घर में भी पढ़ा जा सकता है। बाप-दादाओं की जमीन-यदाद देख लो, यही काफी है। समझे बेटा!"

"जो कहना था, क्या वह सब कह दिया है ?"

"अच्छा घराना है, पुराना खानदान है। पैसे-हैसियत वाले ह
लड़की भी जानी-पहचानी है। पुरखों के समय से उस घराने से कुछ-
कुछ सम्बन्ध चला आता है। कभी नजदीक का, कभी दूर का। कहो
तुम क्या कहते हो ?"

"मैं क्या कहूँ ? तुमने ही मेरी तरफ से सब उनसे कह दिया है।"

"अब तू लड़की भी देख आया है। रूप-रंग कोई खराब नहीं। तेरी
क्या राय है ?"

मैं कुछ न कह सका।

"कहता क्यों नहीं ?"

"जो तुझे पसन्द है, मुझे भी पसन्द है।" मैंने कह दिया। विवाह
के बारे में भी अन्य बातों की तरह मैंने कभी न सोचा था।

माँ मेरे गाल पुचकार चूमने लगी। बलिहारियाँ लेने लगी। बड़ी
खुश थी। क्यों न होती ? माँ के कारण हमारा रग्घू मामा से सम्बन्ध
था। वे उसी जगह की रहने वाली थीं, जहाँ से रग्घू मामा के बाप-दादा
आये थे।

"जब पिता जी पूछें तो यही कहना। वे तुमसे बहुत दिनों से बात
करने की सोच रहे हैं।" माँ ने समझाया।

जब पिता जी खा-पीकर, बाहर आकर खटिया पर बैठे तो उन्होंने
भी पूछा। वे मितभाषी थे। जो कुछ बोलते, उसमें गम्भीरता रहती। माँ
की तरह मैं उनसे बहस भी न कर पाता था। मैंने अपना उत्तर दोहरा
दिया।

मैं उस दिन सो न सका। मुझे याद है कि न माँ सो सकी थी, न
पिता जी ही। वे लगातार करवटें बदल रहे थे। सवेरे मुझे सोता जान वे
...ीं विस्तार से बातें करने लगे। मेरे मन में गुदगुदी-सी हुई।

मैं नित्य-कृत्य से निवृत्त होकर, घर लौटा तो देखा कि वेन्कटस्वामी
...रे आँगन में खड़ा था। उसकी शादी हो चुकी थी। मेरा इनाम अब

भी बाकी था। मैंने सोचा कि शायद कुछ माँगने के लिए आया है। जेब खाली थी, बचकर जाना चाहा। उसी ने जोर से कहा, "बाबू, रघू मामा आपकी इन्तजार कर रहे हैं। बुला रहे हैं।" वह चला गया।

मैं चौकड़ी भरता रघू मामा के घर गया। वे अपनी खटिया पर लेटे थे। खटिया पर न बिस्तर था, न तकिया ही। सारा घर गन्दा पड़ा था। जगह-जगह इमली के सूखे पत्ते बिखरे हुए थे। मुर्गियों की बीट भी इधर-उधर पड़ी थी। मामी के जमाने में हर चीज शीशे की तरह साफ हुआ करती थी। खटिया पर सफेद चादर रहती और मुलायम तकिया।

"आओ बेटा, आओ!" उन्होंने कन्धे पकड़कर अपनी खटिया पर बिठा लिया। "तुम से बहुत दिनों से बातचीत करना चाहता था, कई बार चिट्ठी लिखने की भी सोची, फिर बातचीत करना ही मुनासिब समझा। यह भी कई बार ख्याल आया कि इस तरह के मामलों में मेरा हाथ अच्छा नहीं है। खैर, तुम तो अब जान गये होगे? कहो।"

मैं झेंप गया।

"जीजा को भरोसा है कि तुम मेरी जरूर सुनोगे। उन्होंने तैयारियाँ भी करली हैं। तुम्हारे भी पिता से बातचीत हुई थी···भाईसाहब की। वे भी राजी हो गये हैं। लड़की अधिक पढ़ी-लिखी नहीं है। पर लड़कियों को अधिक पढ़ाना-लिखाना आफत मोल लेना है। यह लड़की बहुत भली है, देख ली है न? मेरा कहना सुनोगे न?" रघू मामा ने मुस्कराते हुए पूछा। बहुत दिनों बाद उनके चेहरे पर मुस्कराहट दीख रही थी, वह अजनबी-सी लगती थी।

"मैंने कभी आपकी बात को न नहीं किया है।"

"तो मुहूर्त निश्चय किया जाय?"

मैंने स्वीकृति में मुस्कराते-मुस्कराते मुँह नीचे कर लिया।

"तो चलो चलें।" मामा ने कोई पुराना तौलिया कन्धे पर डाल लिया। शक्ल सूख गई थी। अपने-आप उन्होंने दरवाजे बन्द किये। शायद मामी के समय में यह काम उन्होंने कभी भूल कर भी न किया था।

हम सड़क तक एक साथ आये। फिर वे काटूर की ओर चले और मैं घर की ओर। रास्ते में नरसिंह मामा मिले। वे मेरे पिताजी से बातचीत करने जा रहे थे। उन्होंने भी वही बात कही, जो रघू मामा ने कही थी।

उनको वीरवल्ली के पुल पर छोड़ कर, मैं उनके घर चला गया, प्रसाद से गप्पें लगाने। वह ताने-तश्मे कसने लगा। "तो जल्दी ही ढोल ढमाके बजेंगे, दाल-भात मिलेगा।"

दीवार की आड़ में एक लड़की ताली बजा-बजा कर उछल-उछल कर गा रही थी "एक था दुल्हा, एक थी दुल्हन।"

मुझे ऐसा लगा कि सिवाय मेरे सारा गाँव मेरी शादी के बारे में जानता था।

विवाह के पूर्व कोई रस्म पूरी की जा रही थी। मुझे नहलाया-धुलाया जा रहा था और औरतें गीत गा रही थीं। अजीब अनुभव था···याद करके अब भी मुस्करा देता हूँ।

किसी ने आकर किवाड़ खटखटाया। पिताजी ने किवाड़ खोला। नहा-धोकर जब मैं घर के अन्दर गया तो रामस्वामी बैठे पिताजी से बातें कर रहे थे। शुभ अवसरों पर वे सदा हर घर में अपनी हाजिरी दे आते थे, सदिच्छा से नहीं, स्वार्थ के कारण।

वे कह रहे थे, "अगर रुपये-पैसे की जरूरत हो तो बिना किसी हिच-किचाहट के खबर भिजवा देना। जैसे वह आपका लड़का, मेरा भी लड़का है। भगवान ने भले ही बच्चे न दिये हों पर गाँव-भर के बच्चों को अपना समझने का दिल तो दिया है। पैसे के कारण कोई तंगी नहीं होनी चाहिये। तुम्हारा भी इकलौता है। खूब धूमधाम से शादी करो।"

"हूँ।" पिताजी ने उसकी लम्बी-चौड़ी सलाह का सिर्फ एक अस्पष्ट संकेत मात्र से उत्तर दे दिया।

रामस्वामी के पास पैसा इतना अधिक था कि उन्हें सूझता न था कि उसका क्या किया जाय ? शुभ अवसरों पर जब किसान अक्सर बिना आगे-पीछे देखे दिल खोलकर खर्चते हैं, कर्ज भी लेते हैं, रामस्वामी उन्हें खुद कर्ज देने आ जाते और भारी सूद वसूल करते। लोग उनसे रुपया ले भी बैठते थे।

"रुपया तैयार है। दौड़-धूप करना फिजूल है। बस, खबर भिजवा देना।"

"नहीं, रुपये की तो जरूरत होगी नहीं। लड़के की ही तो शादी है। लड़की की होती तो इधर-उधर के खर्च भी होते।"

"हाँ, ठीक कहते हो। पर इकलौता है, खर्च करने वाले लड़के पर भी करते हैं। कल मैं नन्दमूरू गया था। रामब्रह्म को तो जानते ही होगे। पच्चीस एकड़ का किसान है। पिछले साल उसने इकलौती लड़की की शादी इस तरह की कि लोग भूल नहीं पाते हैं। मैंने ही उसे रुपया दिया था। लेन-देन का बहुत पक्का है। जानते हो न ?"

"हाँ हाँ, सुना है। तो तुम नन्दमूरू गये थे ?"

शायद रामस्वामी पिताजी के प्रश्न का अर्थ समझ गया। उसने कहा, "लोग वहाँ राघवैय्या की बहुत निन्दा कर रहे हैं। पत्नी को छोड़ आया, खुद जैसे बहुत सुधरा हुआ हो। कौन जाने वह बिगड़ी हुई स्त्री थी कि नहीं। रुपये-पैसे वाली तो है नहीं। सगे-सम्बन्धी भी कम हैं। और जो हैं गरीब हैं। बड़ी दिलवाली औरत है। पाँच-दस घरों में चावल कूटती है, कुछ सीने का काम भी करती है। अपना और अपनी बच्ची का पेट भर लेती है। उस भली स्त्री को इसने यों ही छोड़ दिया। खैर, हमें क्या पड़ी कौन क्या करता है ? सबका अपना-अपना मुकद्दर है।"

"हूँ।" पिताजी और अधिक न कह सके। निश्वास छोड़ कर रह गये।

"मैं चला, दो-तीन जगह जाना है।" रामस्वामी कहते-कहते चले

गये। पिताजी अन्यमनस्क से बैठे थे। रामस्वामी उनके मन में उथ
पुथल मचा गया था।

मैं अपने विवाह पर खुश हो रहा था कि एकाएक अन्नपूर्णा माम
की याद में दिल तड़पने लगा। आज अगर वे होतीं तो गा-गाकर उब
टन लगातीं, मुझे नहलातीं, नये कपड़े पहिनातीं, मन्दिर में पूजा करतीं,
गरीबों को भोजन बँटवातीं। जाने क्या करतीं? और आज उन्हें कूली-
नाली करके पेट भरना पड़ रहा है।

"उठो, तुम भी नहाओ। सवेरे ही उस कम्बख्त का मुँह देखना
बुरा है। और तुम उससे बातों में उलझ गये। क्यों आया था?" माँ ने
पिताजी से पूछा।

"यूँही रुपया उधार देने।"

"उसका आना ही अपशकुन है, जाने क्या हो? अपना रुपय
अपने पास रखे। उठो तुम।"

"सुना है अन्नपूर्णा घरों में नौकरी करके अपना पेट भर रही है।"
पिताजी ने जो कुछ सुना था, माँ से कह दिया। माँ अनायास आँसू
बहाने लगी।

"तुम इस शुभ अवसर पर आँसू क्यों बहा रही हो? अपशकुन है।"
पिताजी ने कहा। माँ आँसू पोंछती हुई चुप-चुप पिछवाड़े में चली गई।

न जाने रामस्वामी ने यह बात कितनों को कही होगी।
शकुन और अपशकुन का कुछ भी झमेला हो। जब शाम को मुझे
खबर मिली कि मुखासादार की एकाएक मृत्यु हो गई है, तो मैंने और
ा ने परिवार के लिए शकुन ही समझा।
पिछले दिनों मुखासादार का एक और ऑपरेशन हुआ था। कोई
ी बीमारी थी। काफी दिन अस्पताल में रहे, हृद्गति के रुकने के
देहान्त हो गया।
रा गाँव उन्हीं के बारे में बात कर रहा था। और अन्नपूर्णा
बारे में जो गप्प रामस्वामी नन्दमूरू से बटोर लाये थे, किसी ने

न सुनी।

शहनाइयाँ बजीं, नाच गाने हुए, पर मेरे विवाह में वह धूम-धाम न थी, जो सुजाता के विवाह में थी। मैंने इसकी आशा भी न की थी। लगभग हमारा सारा गाँव विवाह में उपस्थित था। लक्ष्मय्या भी अपनी टोली लेकर पहुँचे थे।

नरसिंह मामा, सुब्बु मामा, सपरिवार उपस्थित थे। उन्हीं के जिम्मे विवाह का कार्य था। मल्लिखार्जुन राव उनकी मदद कर रहे थे। वे मेरे लिये खादी की एक माला भी ले आये थे।

ब्रह्मेश्वर राव के बहुत लिखने पर, तथा आदमी भेजने पर भी सुजाता न आई। उसने छुट्टी न मिलने का बहाना किया। पर असलियत सब जानते थे। उसके बारे में दो-चार बार बातचीत चली, लेकिन किसी ने उसको दोष न दिया।

मैं रघू मामा की अनुपस्थिति न समझ सका। तब बुरा भी लगा। नरसिंह मामा ने उनको बहुत मनाया, उनकी बहिन और जीजा ने भी जाकर खुशामद की, पर वे टस से मस न हुए। अपनी खटिया पर ही बैठे रहे। उनका कहना था कि उनके कारण एक शादी बिगड़ गई थी और वे दूसरी बिगाड़ना नहीं चाहते थे।

लोगों का कहना था कि रघू मामा सीता-सी पत्नी को घर से बाहर कर अपना मुँह कैसे दिखाते ? हर कोई उनको बुरा-भला कहता।

शादी में मुझे वही अंगूठी और घड़ी भेंट में दी गई जो मद्रास में मैंने स्वयं चुनी थी। ब्रह्मेश्वर राव जी उन्हें देते हुए मुस्करा रहे थे।

विवाह की विधि शांतिपूर्वक सम्पन्न हो रही थी कि उपस्थित बन्धु-वर्ग में खलबली मची। किसी ने कहा कि वेन्कटेश्वर राव गुडिवाडा के रास्ते घर आये हैं। उनके आते ही उनके खुशामदी उनके घर जमा हो गये।

सुना गया कि वे कार में ब्रह्मेश्वर राव के गली के नुक्कड़ में आये, कार थोड़ी दूर खड़ी हुई। पिछवाड़े में शादी के लिये लगाये छप्परों में से बाँसों के खींचने की आवाज आई। एक लट्ठ लेकर सुब्बु मामा नुक्कड़ की ओर भाग रहे थे। नरसिंह मामा और ब्रह्मेश्वर राव उनको रोक रहे थे और मन्त्र-पाठ होता जाता था। मैं भी घबराया। पिताजी का दिल शायद धौंकनी हो रहा था।

इतने में सुब्बु मामा धीमे-धीमे हाँफते-हाँफते आये। कार हमारे गाँव की ओर जा चुकी थी। ब्रह्मेश्वर राव जी की सलाह पर शादी के लिये आई हुई कार रग्घू मामा के पास चार-पाँच अच्छे लठैतों को लेकर भेज दी गई।

ब्रह्मेश्वर राव को डर था कि वेन्कटेश्वर राव विवाह में फिर को ऊधम न मचाये। वे इसके लिये तैयार थे, पर जब यह मालूम हुआ कि न्कटेश्वर राव पाँच-छः आदमियों के साथ वीरवल्लि गया है तो उनको ाशंका हुई कि वह रग्घू मामा का शायद कुछ बिगाड़े। इस पर भी रसिंह मामा निश्चिन्त थे। मन में चाहे उनके कुछ भी हो, वे मुस्कराने कोशिश कर रहे थे।

उपस्थित सज्जनों के समक्ष, एक लम्बे संस्कार के बाद, मैं और त्ते, पति-पत्नी घोषित कर दिये गए। वह दिन जिसकी बहुत दिनों से ा थी, निर्विघ्न समाप्त हो गया।

ाद में पूछ-ताछ करने पर मालूम हुआ कि मुखासादार के रिश्ते- ते उनकी आकस्मिक मृत्यु के बारे में वेन्कटेश्वर राव को तार दे दी तुरंत न आ सके। जहाँ तक मेरा अनुमान है, उनको मेरी शादी ना भी न थी। वे मुखासादार के घर वालों से मिलने आये थे। घंटे वीरवल्ली में रहे। पर्दानशीन औरत की तरह मुखासादार धियों से घर में बातें करते रहे, फिर बिना काटूर वापिस आये, से मद्रास चले गये।

रग्घू मामा ने अपने घर में ताला लगवा दिया। वे शायद अकेले रह नहीं पाते थे। वे मल्लिखार्जुन राव के घर में जाकर रहने लगे। अफवाहों के फिर पर लगने लगे, इधर-उधर की उड़ने लगी।

खम्मा उम्र की काफी थी। कई बच्चों की माँ थी, पर उसे जवानी छोड़ती न लगती थी और रग्घू मामा की कमजोरियों के बारे में दुनिया जानती ही थी! अब उनकी पत्नी घर में न थी। आसानी से लोगों को अफवाहों में विश्वास हो जाता था।

उनके दोनों भाई झुँझलाये। जीजा और बहिन ने भी डाँट बताई, मामा ने उनकी बात सुन ली, पर किया कुछ नहीं। फिर अपनी आवारा-गर्दी शुरू कर दी। कभी विजयवाड़ा जाते, कभी बन्दर, एक-दो बार तेलंगाना भी हो आये थे।

सुब्बु मामा ही अब परिवार की जमीन की देख-भाल किया करते थे। जब इस साल उन्होंने रग्घू मामा की जमीन पहिले जुतवानी चाही तो उनकी पत्नी ने हंगामा मचा दिया। चिल्ला-चिल्लाकर आसमान उठा दिया। कहा, "भाई से तुम क्या वेतन पाते हो कि अपनी जमीन छोड़कर पहिले उनकी जमीन जोत रहे हो?" सुब्बु मामा भी क्या कहते, वे पत्नी की बात मान गये।

एक दिन अचानक रग्घू मामा कहीं से आये। वे सीधे सुब्बु मामा के घर गये। यह एक असाधारण घटना थी। वे प्रायः उनके घर न जाते थे। उनको ही अपने घर बुला लेते थे। सुब्बु मामा तभी खेत से लौटे थे। बातें करते-करते वे रग्घू मामा के साथ सड़क पर चले आये। वहाँ से वे काटूर चले गये और रग्घू मामा वापिस खम्मा के घर। जाने क्या बात थी!

अगले दिन भेद खुला। सवेरे-सवेरे ब्रह्मेश्वर राव अपनी पत्नी के साथ नरसिंह मामा के घर आये। सुब्बु मामा भी वहीं पहुँचे। नरसिंह मामा के घर एक छोटी बैठक हुई। लक्ष्मय्या को भी बुलाया गया।

कुछ देर बाद, नरसिंह मामा, भाई-बहिनोई के साथ तालाब-से

किनारे आये।

"क्यों भाई लक्ष्मय्या, इसे भी तुमने अपनी जमायत में मिला लिया है?" ब्रह्मेश्वर राव ने कहा।

लक्ष्मय्या चुप रहा। हमें कुछ समझ में न आया।

"इसको मनाना मुश्किल है, सलाह देना मुश्किल है। जो कुछ सोचता है, वह करता है। अच्छा-बुरा, लाभ-हानि का भी ख्याल नहीं रखता। जेल से छूटने के बाद उसको नई खब्त सवार हुई है औ तेलंगाना क्या देख आया है कि तुम्हारी पार्टी का नशा चढ़ गया है।'

"आखिर बात क्या है?" लक्ष्मय्या ने पूछा।

"इसने अपने तीनों एकड़ बाँट दिये हैं, एक एकड़ तुम्हारी पार्टी को, एक एकड़ छोटे भाई को और एक एकड़ बड़े भाई को। अपने पास एक इंच जमीन भी न रखी। केवल घर बाकी है, वह भी एक दिन बेच देगा। जब सनक सवार हुई है तो उसका सफाया करके ही रहेगी।"

ब्रह्मेश्वर राव कुछ सोचते-सोचते पेड़ के नीचे बैठ गये। सुब्बु मामा र की ओर जाने लगे। उनका चेहरा जमा हुआ-सा था। एक एकड़ ल रहा था पर उन्हें अफसोस हो रहा था। नरसिंह मामा भी मूर्ति की ह खड़े थे।

"आज ही रजिस्ट्री हो जाय।" रघू मामा ने कहा।

"अभी और सोच लो, जल्दी क्या है?" नरसिंह मामा ने कहा।

"बहुत दिनों से सोचता रहा हूँ, अब जल्दी ही यह काम निबट जा च्छा है।" रघू मामा ने जिद पकड़ी।

"घूम-फिर कर आये हो, आराम करो। कल देखी जायगी, आज काम है।" कहते-कहते नरसिंह मामा बुय्युर चले गये। उनके साथ या भी खुशी-खुशी चला गया। ब्रह्मेश्वर राव फिर आने का वादा घू मामा को अपने साथ ले गये।

में पिताजी ने बताया कि नरसिंह मामा को दुकान में इतना हो रहा था कि वे व्यापार बन्द करने की सोच रहे थे और कर्ज

फिर इतना चढ़ गया था कि वे अपना घर बेचकर कर्ज चुका देने की कोशिश में थे। इसकी बू रग्घू मामा को लग गई। लेकिन सारी सम्पत्ति अपने बड़े भाई को देते तो शायद वे न लेते, इसलिए उन्होंने तीन भाग किये थे।

भाइयों के प्रति रग्घू मामा बड़े उदार थे, पर पत्नी के मामले में वे क्यों इतने अनुदार हो गये थे? उनको एक इंच ज़मीन या एक पैसा भी न दिया था। अपना भी ख्याल न था, वे क्या करना चाहते हैं? कैसे आमदनी होगी, कैसे रहेंगे? प्रश्न उठते और उत्तर न मिलने पर उठते जाते।

मेरे कालेज वापिस जाने में देरी हो गई। इसके दो मुख्य कारण थे। प्रसाद ने निश्चय न किया था कि आगे वह क्या करेगा। वह 'आनर्स' में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ था।

उनके पिता चाहते थे कि वह और पढ़े। रग्घू मामा का ख्याल था कि वह वकालत पढ़ने जाय। उसका अपना ख्याल था कि जितना पढ़ लिया था, वह काफी था। वह कहीं नौकरी करने की सोच रहा था असलियत यह थी कि नरसिंह मामा की आर्थिक स्थिति इतनी बिगड़ ग थी कि वे प्रसाद को मद्रास न भेज सकते थे।

रग्घू मामा ने जाकर ब्रह्मेश्वर राव से कहा। वे प्रसाद की शि का खर्च उठाना मान गये। आखिर वकालत पढ़ाने का निश्चय कि गया।

दूसरा कारण रग्घू मामा थे। जब से उन्होंने जमीन साम्यवादि को दी थी, यह जाहिर था कि उन्होंने सब कुछ छोड़-छाड़ कर प लिए काम करना तय कर लिया था। वे पार्टी के सदस्य हो गये सभाओं में भी बोलने लगे थे, पढ़े-लिखे न थे, भाषा अग्राम्यिक आवाज़ और लहजे में इतना जोर होता कि सुनने वाले दंग रह

लक्ष्मय्या ने गुण्टूर की शुगर मिल में मजदूरों का संगठन आ

शुरू कर दिया था। किसानों का कोई संगठन न था, यद्यपि उनकी कई
शिकायतें थीं। उनको गन्ने का उचित दाम न मिल रहा था। किसानों
के संगठन का कार्य रघू मामा ने ले लिया। उस इलाके में वे सुपरिचित
थे। उनके भाई तो मशहूर थे ही। किसानों में पर्चे बाँटे गये, गन्ने का
उचित दाम निश्चित करने के लिये आन्दोलन चला। मिल मालिकों के
पास अर्जियाँ भेजी गईं। सरकार को भी सूचना दी गई।

जहाँ-जहाँ गन्ना बोया जाता था, वहाँ-वहाँ मामा निरन्तर घूमते।
हर किसान से बात करते, बड़े-बड़े किसान, जिन्होंने मिल के हिस्से भी
खरीद रखे थे, इस आन्दोलन के प्रति उदासीन थे। किन्तु वे मामा को
देखकर घबराते थे। कई को मामा यह भी धमकी दे आये थे कि अगर
उन्होंने किसानों की माँग का समर्थन न किया तो उनके खेतों में खेती
करने के लिए एक मजदूर नहीं मिलेगा। नतीजा यह हुआ कि उस साल
कम किसानों ने गन्ना बोया, पार्टी यही आशा करती थी।

पर मिल मालिकों के कान पर जूँ तक न रेंगी। वे अब भी इसी
पने में थे कि पुलिस आयेगी और आन्दोलनकारी पीठ दिखाकर भाग
ायेंगे। कई आन्दोलनों को उन्होंने असफल होते देखा था। हड़ताल
कई बार धमकी दी गई थी पर मिल के फाटक तभी बन्द हुए थे, जब
हें मिल मालिक बन्द करना चाहते थे।

उन्हीं दिनों साम्यवादियों की कार्यवाहियाँ अखबारों में छप रही थीं।
ा जिले के उत्तरी भाग में हैदराबाद की सीमा पर गड़बड़ी मच रही
दो-चार छोटे-मोटे जमींदार मार दिये गये थे। कई जगह डकैतियाँ
ीं।

हा जाता था कि साम्यवादी टोलियों में किसी गाँव पर छापा
और वहाँ के धनी को लूट-लाटकर चले जाते। जनता भयभीत
रकार खास पुलिस का प्रबन्ध कर रही थी। इसीलिए मिल-
शायद निश्चिन्त थे।

ल चलनी शुरू हुई। पहले दो-चार दिन बड़े-बड़े किसान अपना

न्ना ले गए। फिर मिल के फाटक के सामने रग्घू मामा के सभापतित्व में विराट् सभा हुई, सारा बुय्यूर जमा हुआ। मिल-मालिक भी फाटक बन्द कर दुमंजिले मकान से भाषण सुन रहे थे। सत्याग्रह की धमकी दी जा रही थी।

एकत्र भीड़ को देखकर स्थानीय मिल मालिकों ने अन्य डायरेक्टरों को तार दी। पुलिस को सूचना भेजी गई। हलचल मची। सभा समाप्त हुई। पर यह निश्चय हुआ कि कोई भी मिल को गन्ना न बेचे, जब तक कि गन्ने का दाम न बढ़ाया जाए। अगले दिन दो-चार गन्ने की गाड़ियाँ आईं, पर रग्घू मामा ने उनको बाहर ही रुकवा दिया।

गन्ना खतम हो गया। मिल चलनी बन्द हो गई। दूर-दूर बैठे मिल-मालिक घबराने लगे। वे भागे-भागे बुय्यर आये। तब तक पुलिस सब जगह तैनात खड़ी थी। पर पुलिस क्या करती? दंगा-फसाद को ही बचा सकती थी। किसानों से जबरदस्ती अपना गन्ना तो बिकवा नहीं सकती थी।

अगर कभी किसी भूले-भटके को डरा-धमकाकर गन्ना बेचने के लिए बाध्य किया जाता, तो रग्घू मामा समझा-बुझाकर भेज देते। यदि वह यह कहता कि वह गरीब है, बरबाद हो जायगा, तो रग्घू मामा उसका गन्ना खुद खरीद लेते। वातावरण में गर्मी थी। किन्तु सतही तौर पर सर्वत्र शान्ति थी।

लक्ष्मय्या के मजदूर भी रग्घू मामा के किसानों के साथ टोलिया बाँध-बाँधकर मिल के फाटक के पास पहरा देते। स्थिति दिन-प्रतिदि विषम होती जाती थी।

डायरेक्टरों की कारें आने लगीं। वेन्कटेश्वर राव भी एक क कार में आये। न वे भीड़ को देख सके, न भीड़ ही उनको देख स अन्दर जाकर उन्होंने अपने को एक कमरे में बन्द कर लिया। खिड़ जब वे भीड़ की ओर देखने लगे तो रग्घू माम बाँधकर प नारे चिल्लाने लगे। वह खिड़की बन्द हो गई।

डायरेक्टरों की मीटिंग थी। वेन्कटेश्वर राव की तरह पाद और डायरेक्टर थे, जो बहुत घबराये हुए थे। वह मिल-मालिक थे और गन्ने की काश्त भी करते थे। गन्ने के दाम बढ़ते तो उनका भी फायदा होता वे किसानों की माँगों को मान गए। पर कारण कुछ और दिया गया कहा गया, क्योंकि गन्ने की पैदावार माँग की अपेक्षा कम हुई थी, इस-लिए दाम बढ़ाने को मिल मजबूर हो रही है।

कारण कुछ भी हो, यह किसानों की विजय थी। रघू मामा की विजय थी। उनकी और उनकी पार्टी की धाक उस इलाके में और भी बढ़ गई।

इस मामले में हमारी दिलचस्पी इतनी रही कि हम दोनों ठीक समय पर मद्रास न जा सके। और जब पहुँचे तो कालेज यथापूर्व चल रहे थे। कई दिनों की उपस्थिति मारी गई।

हमें मद्रास में मालूम हुआ कि नरसिंह मामा ने अपनी दुकान बन्द ... दी है। व्यापार करने के लिये भी हर वृत्ति की तरह एक विशे... ...त्ति और प्रशिक्षा चाहिए। वह उनमें न थी। अच्छी हवा मिले त... ...-से-भारी नाव भी तेजी से बहती है, जब उल्टी हवा में ऊपर की ... जाना होता है तो मंझे हुए माँझी ही चाहिएँ। युद्ध के बाद व्या-... ...ी मन्दा पड़ता जाता था, हर चीज़ धीमे-धीमे मिलने लगी थी। ...ी पहले जितने बढ़े-चढ़े न थे।

...ामा के लिये पैसे का उतना महत्व भी न था, जितना कि एक ... के लिए होता है। जब कभी उनको नकद पैसे दिखाई देते त... ...के निजी खर्च में खर्च हो जाते। प्रसाद की भी पढ़ाई का खर्च... ... तरह जो पूँजी व्यापार में लगनी चाहिए थी, इधर-उधर बिखर... ...ड़ी-बड़ी जिम्मेवारियाँ थीं, पुरानी आदतें थीं।

...मामा ने जो एकड़ दिया था, वह भी बेच दिया गया। ब्रह्मेश्वर...

अगर दखल न देते, तो वह एकड़ भी रामय्या खरीद लेता। उनकी
ाह पर वह एकड़ सुब्बु मामा ने खरीद लिया था।
यही नहीं, रघू मामा ने अपना मकान भी बेच दिया। वह पैसा
ी उन्होंने अपने बड़े भाई को किसी तरह दे दिया। उनको अपने
ुजारे के लिए पार्टी थोड़ा-बहुत देती थी। उनमें विचित्र परिवर्तन आ
गया था।

इतना सब करने पर बहुत-सा कर्ज चुक गया। फिर भी कई जगह
रुपया बाकी रह गया था। कर्ज समस्या जरूर न रही हो, पर आमदनी
एक समस्या थी। आय का कोई रास्ता न था। जमीन-जायदाद थी
नहीं, व्यापार का दरवाजा हमेशा के लिए बन्द था। बाल-बच्चे भी
कमाऊ न हुए थे। हम इन्हीं बातों पर सोचा करते।

प्रसाद की माँ ने एक बार लम्बा-चौड़ा पत्र लिखवाया, जिसमें
पारिवारिक परिस्थितियों पर उन्होंने अपने पति की कड़ी टिप्पणी की थी।
प्रसाद की माँ से कभी चिट्ठी न आती थी और जब आई तो इस तरह
की बारूद भरी आई। प्रसाद चिन्तित रहने लगा। फिर उसको ट्यूशन
की बीमारी सवार हुई।

माँ की चिट्ठी के बाद वायुलुता का खत आया। लिखा था कि माँ
ने नहर में कूदने का प्रयत्न किया, पर समय पर वेन्कटस्वामी ने उसको
बचा लिया। माँ और पिताजी की बिल्कुल नहीं पट रही थी। उनको
एक मिनट चैन से रहने नहीं देतीं। अक्सर वह घर पर ही नहीं रहते,
कभी रात के लिये आते हैं, फिर सवेरे उठकर चले जाते हैं।

यह चिट्ठी पढ़कर प्रसाद और भी विह्वल हो उठा। ब्रह्मेश्वर
और रघू मामा को वचन न दिया होता तो वह पढ़ाई छोड़कर
जाता।

कुछ दिनों बाद मालूम हुआ कि मिल-मालिकों ने नरसिंह
को बुलाया। रघू मामा ने उनका नाकों दम कर रखा था।
... उनकी बात सुनते थे। वे कभी भी मिल में

रातों-रात पैदा कर सकते थे। स्वभाव के ऐसे थे कि चाहे कोई कितना ही बड़ा हो, किसी की न सुनते थे। मिल-मालिकों ने पाँच-दस से कहलवाकर भी देखा। आखिर उन्होंने एक भाई को दूसरे भाई के विरुद्ध लगाना चाहा।

नरसिंह मामा की परिस्थिति बहुत ही खराब थी। बच्चे वाला बाप परिवार के पोषण के लिए क्या नहीं करता? आसपास के प्रदेश में उनका प्रभाव था ही। गाँव के मुखिया थे, जिले के बड़े आदमियों में माने जाते थे। भलेमानस समझे जाते थे। मिल-मालिकों ने उन्हें नौकरी देनी चाही। ओहदा भी बताया गया—लेबर वेल्फेयर ऑफिसर—काफी वेतन था।

नरसिंह मामा इतने भोले-भाले न थे कि मिल-मालिकों की उदारता के पीछे उनकी चाल न देखें। वे परिवार और पारिवारिक प्रेम को जितनी प्रधानता देते थे, किसी और चीज को नहीं देते थे।

उन्होंने नौकरी स्वीकार न की। वह मिल-मालिकों के मुनाफे के लिए भाई के रास्ते में न आना चाहते थे।

जब उनकी पत्नी को यह मालूम हुआ तो सुनते हैं उन्होंने अफीस र तेल निगल जाना चाहा ताकि आत्महत्या कर सकें। वायुसुता र बच्चों के रोने-चिल्लाने पर वह प्रयत्न उन्होंने छोड़ दिया।

इस दुनिया में, नरसिंह मामा-सा खरा, कर्तव्यपरायण भाई मिलना कल है।

ादी के बाद पति-पत्नी को अलग-अलग रखना अत्याचार है। ती लकड़ियाँ अगर अलग-अलग भी कर दी गई तो जलती ही जल-जलकर बेकार राख हो जायेंगी।

कालेज जाता पर ध्यान कादूर में रहता। शान्ति ही मन में मचाती रहती। छटपटाता रहता। वियोग इतना झुलसाने

ा होता है, इसकी मुझे पहले कल्पना भी न थी। मैं मतवाला-सा
रहा था, शायद कामान्ध। इसलिए हमेशा अवकाश की प्रतीक्षा
ता रहता। जहाँ दो-चार दिन की छुट्टी मिली नहीं कि गाड़ी पर
वार हो काहूर चला जाता।

मेरी पत्नी अपने घर काहूर में ही थी। मैं अपने गाँव बिना गये
गुडिवाड़ा के रास्ते काहूर चला जाता, दो-तीन दिन रहता और चला
आता।

एक बार काहूर से मैं मद्रास आ रहा था। विचार हुआ कि अन्न-
पूर्णा मामी से भी मिलता जाऊँ।

मैं नन्दमूरू गया। अपने एक रिश्तेदार के आँगन में मामी ने एक
छोटा-सा घरौंदा बना लिया था। अन्दर दस-पन्द्रह फीट की जगह थी,
बहुत ही साफ-सुथरी। एक तरफ कुछ चमकते हुए बर्तन रखे हुए थे,
दूसरी तरफ दो-तीन छज्जे लटक रहे थे। एक बाँस के सहारे दो धुली
साड़ियाँ सूख रही थीं। घर, एक स्वाभिमानी, किस्मत की मारी, शालीन
स्त्री की गरीबी का नमूना था।

दीवार पर तिरुपति वेन्कटेश्वर स्वामी का चित्र था। उसी के पास
रघू मामा की एक फोटो थी, जो एक अन्य फोटो में से, जिसमें पति-पत्न
का विवाह के समय का चित्र था, अलग काट ली गई थी।

मामी मुझे देखकर चौंकी। उनका चेहरा जल-सा गया था। झुर्रि
निकल आई थीं, बाल भी पक गए थे। हाथ खुश्क और सख्त नजर आ
थे। पर मुँह पर अब भी एक प्रकार की विचित्र शान्ति थी। वह चे
जो सदा मुझे देखकर मुस्कराता था, अब मुस्कराता न लगता था।

मामी का पहला प्रश्न था, "तुम्हारे मामा तो सकुशल हैं?"

"हाँ, हैं।"

"जहाँ भी हों वे स्वस्थ रहें, सुखी रहें, यही मैं भगवान से
करती रहती हूँ।" मामी आँसू पोंछने लगीं। फिर उठकर अपनी
को आँगन में से बुला लाईं। वह चल-फिर लेती थी। अब उस

निखर आई थी। भले ही उसका चेहरा मामा की तरह न हो·········(भगवान करे कि किसी लड़की को मामा का चेहरा न मिले) पर उसकी नाक और माथा मामा जैसा था। अब आकर यदि वे अपनी लड़की को देखें, तो शायद उन सब का गला घोंटकर रख दें, जिन्होंने उनके कान भरे थे।

कुछ देर बाद मैंने पूछा, "क्यों मामी, इस फोटो में तुम दोनों थे। तुमने अपना फोटो क्यों काट दिया?"

"बेटा, तुम तो पढ़े-लिखे हो। सोचो, जवाब मिल जायेगा।" फिर वे अपने गले का मंगल सूत्र आँखों से लगाने लगीं।

"मामी, तुम उनके पास जाती क्यों नहीं हो? पत्नी के नाते तुम्हारा उनके साथ रहने का अधिकार है, कर्तव्य है।" मैंने पूछा।

"उनको सुखी रखना मेरा कर्तव्य है। क्या वे मुझे पाकर सुखी होंगे? सुखी होते तो छोड़ ही क्यों जाते? मैं व्यर्थ उनका दिल क्यों दुखाऊँ? कहीं भी रहूँ, हूँ तो उनकी ही दासी। एक दिन वे भी जान जायेंगे कि मैं दोषी हूँ या वे? उनका भी क्या दोष है? सब की अपनी-अपनी किस्मत है। तुम भी अब शादी-शुदा हो गए हो। सब समझ लोगे।" कहतीं-कहतीं अन्नपूर्णा मामी हिचकियाँ भरने लगीं।

"एक बार जिन्दगी खतम कर लेने की सोची, पर किस्मत में मौत न बदी थी। औरत की जिन्दगी अपनी होती भी कब है? वह तो दूसरे के लिए ही जीती है। अगर मैं मर जाती तो···········खैर, जब तक वे हैं, मुझे मरने का भी अधिकार नहीं है। वे खुश हैं न? शराब तो नहीं पी रहे हैं?"

"पहले कुछ दिन पी थी पर अब शायद नहीं पीते हैं, नहीं मालूम।"

"सुना है खम्मा के यहाँ रहते हैं, जमीन-जायदाद सब भाइयों को दी है।"

"हाँ।"

"उनके भाई तो देवता हैं, उनको न देंगे तो किसको देंगे? भगवान

सब जानते हैं। एक दिन खम्मा अपने किये का फल भुगतेगी ही। खैर, मैं फिर इस तरह क्यों सोच रही हूँ? भगवान् उसको माफ करें। यह भी बच्चों वाली माँ है। सुनती हूँ कि वे आजकल कम्युनिस्ट पार्टी में भरती हो गए हैं?"

"हाँ, हाँ।"

"फिर घूमना-फिरना शुरू कर दिया है।"

"हाँ।"

"अधिक घूमने-फिरने से उनकी सेहत अच्छी नहीं रहती। तुम पर भरोसा है। वचन दो कि तुम अपने मामा की देख-भाल करोगे?"

"हाँ, हाँ, तुम्हारी सौगन्ध।"

वे मुझे पुचकारने लगीं, मैं उनकी लड़की को पुचकारने लगा।

"इसका नाम क्या रखा है?"

"उनकी माँ का ही नाम है, जयलक्ष्मी।"

थोड़ी देर बाद जब मैं जाने लगा तो मामी ने कहा, "शान्ति को मेरा प्यार देना। उसे भी जो साथ ले आँवे? फिर आओगे न?"

मैं साँस रोककर घर से बाहर चला गया, और गाँव के बाहर जाते ही फूट सा पड़ा।

कई दिनों बाद मैं अपने गाँव गया। तब तक कृष्णा में काफी [illegible] बह चुका था। बदलती दुनियाँ बहुत बदल चुकी थी। [illegible]

भारत में कम्युनिस्ट पार्टी ग़ैर-कानून करा दी गई थी। [illegible] साम्यवादियों की पकड़-धकड़ हो रही थी। परन्तु साम्यवादि[illegible] आन्दोलन बढ़ता जाता था। हमारे जिले में ही कई धनी लूटे [illegible] कई मारे गये। पुलिस ने कई जगह गोली छोड़ी। विशेष पुलिस जगह तैनात थी। विजयवाड़ा में पुलिस का बड़ा अड्डा था। [illegible] अखबारों में यह पढ़ने में आता था कि मतांने को पुलिस के

मुकाबला करते समय मार दिया गया, फलाने को कैद में डाल दिया गया। लगभग सभी साम्यवादी नेता 'अण्डर-ग्राऊन्ड' हो गए थे। कई पकड़े भी गए। लक्ष्मय्या अण्डर-ग्राउन्ड था। रंघू मामा, जो खुल्लम-खुल्ला अपना काम किया करते थे, एकाएक गायब हो गये।

अखबार पढ़ने वाले तालाब के किनारे पेड़ के नीचे फिर जमा होने लगे थे। अखबार प्रायः साम्यवादी विरोधी थे। कहा जा रहा था कि साम्यवादियों को बाहरी देशों से मदद मिल रही है। भारत खतरे में था, उधर हैदराबाद में रजाकारों का रवैय्या भी जोरों पर था।

मालूम हुआ कि वायुसुता के पति, अप्पाराव नौकरी से बरखास्त कर दिये गए। बरखास्त होते ही वे भी रंघू मामा की तरह अण्डर-ग्राउन्ड हो गए। नरसिंह मामा की शुरू से ही फिक्र और परवाह की जिन्दगी थी। इस घटना से उनका दिल टूट गया। वायुसुता को भी रह-रहकर मूर्छा आने लगी।

रंघू मामा ने शायद कुन्देर के अपने दोस्त से कह दिया था कि उनके भाई को किसी बात की तंगी न हो। नरसिंह मामा किसी से यों ही मदद लेना नहीं चाहते थे। उन्होंने अप्पाराव की जमीन-जायदाद देखने-भालने का काम स्वीकार कर लिया। उनकी जमीनें गाँव के उत्तर में, मामा की जमीन से लगती थीं। अब रामय्या के खेत की मेढ़ और उनके खेत की मेढ़ एक ही थी। नरसिंह मामा सवेरे-शाम जमीन देखने जाते। कभी-कभी कुन्देर भी हो आते थे।

जो कोई उनको देखता, आहें भरता, पर वे प्रसन्न रहने की कोशिश करते। जब धन था, तब उसकी परवाह न थी, अब जब नहीं था, तब भी उसकी चाह न थी।

इसी गड़बड़ी में भारत को पूर्ण आजादी मिल गई। ब्रिटेन का झण्डा जो दो सदियों तक इस पुरातन परतन्त्र भूमि में फहराता रहा, वह उतार दिया गया। जो मद्रास के रास्ते आये थे, बम्बई के रास्ते चले गए। दो सदियों का इतिहास छोड़ते गये।

अंग्रेज जाते हुए अपनी फूट की नीति को, जिसको वे सालों से रखते आ रहे थे, एक ठोस बुनियाद पर रखते गए। पाकिस्तान का निर्माण करते गये। एक भारत के दो टुकड़े हो गये। भारत स्वतन्त्र हुआ, पर वह टुकड़ा कर दिया गया।

इस विभाजन के बाद जो विभीषिका फैली वह शायद संसार के किसी और देश के इतिहास में नहीं देखी गई। मानव-समाज में भूचाल-सा आ गया। बड़ी-बड़ी दरारें फटीं, पाकिस्तान से हिन्दू जान बचाकर भागे और हिन्दुस्तान से मुसलमान। इस अहिंसा के पुजारी देश में रक्त की नदियाँ बहने लगीं। हाहाकार मचा। सेवा-ग्राम के महात्मा 'विभाजन-ग्रस्त' प्रान्तों का दौरा पैदल करने निकले।

पर यह विभीषिका, सौभाग्य या दुर्भाग्यसे, हमारे प्रान्त तक न पहुँची। शायद यह कहना ठीक नहीं है। शरीर का एक अंग चोट खाता है तो दर्द सारे शरीर को होता है। आन्ध्र हो या तमिलनाड, या उत्तर, भारत सब एक ही हैं।

वे दो-चार साल भारत के इतिहास में ऐसे हैं, जिसको याद कर अब भी रोंगटे खड़े होते हैं। एक देश का जन्म हो रहा था, एक स्वतन्त्र देश का निर्माण हो रहा था और प्रसव में थोड़ा बहुत रक्त-स्राव होता ही है। यह सोच कर हम अपने को तसल्ली देते।

नरसिंह मामा के सामने प्रश्न था—देश या परिवार? उन्होंने परिवार चुना था। अन्धकारमय भूत से अराजकता के बावजूद, भारत उज्ज्वल भविष्य में प्रविष्ट कर रहा था। क्या उनका परिवार भी सफल हो रहा था?

किसी भी परिवार की समृद्धि नापने के कई पैमाने हैं। धन के, विद्या के, हैसियत के, आदि। धन के पैमाने से उनका परिवार निस्सन्देह बिगड़ गया था, पर इस पैमाने को नरसिंह मामा ने कभी न माना था। वे विद्या के लिए प्रारम्भ से प्रयत्नशील रहे। खूब पढ़ा ... मिला। प्रसाद भी पढ़-लिख गया था।

भी अपनी-अपनी आयु के अनुसार शिक्षा की भिन्न-भिन्न सीढ़ियों
पर थे ।

जिस राह पर वे चले थे, वह बहुत ऊबड़-खाबड़, टेढ़ा-मेढ़ा था, पर
शायद वह बहुत कुछ तय हो चुका था ।

जब कभी मद्रास में विधान-सभा की बैठक होती तो हमारी तरफ के
लोग भी जाते । हम भी होस्टल छोड़ कर विधान-सभा के आस-पास
मटरगश्ती करते । वहीं लक्ष्मीपति के दर्शन होते ।

वेन्कटेश्वर राव की मनहूस सूरत भी वहीं दिखाई देती । मद्रास में
वे रहते थे, कभी-कभी काटूर की तीर्थयात्रा कर आते थे । वहाँ साम्य-
वादियों का ज़ोर इस कदर बढ़ा हुआ था कि वे दो घंटे भी चैन से
नहीं बैठ पाते थे । वे कांग्रेसी न थे । अंग्रेजों के जमाने में वे टोडी थे
और अब गांधी-टोपी के हिमायती बन गए थे । खुदगर्ज रईस कभी कमजोर
के साथ अपना कन्धा नहीं लगाते ।

साम्यवाद का बलवा मुख्यतः हमारे जिले में था । वह भी विशेषतय
हमारे गाँव के अड़ोस-पड़ोस में । सरकार इस विषय में बड़ी सतर्क थी ।
वहाँ पुलिस की चौकियाँ खोल दी गई थीं । छोटे-छोटे गाँवों में पुलिस
की बड़ी-बड़ी टोलियाँ बिठा दी गई थीं । बेतार का इन्तजाम था । कहीं
कुछ खटका होता और पुलिस उत्पात मचा देती । सर्वत्र आतंक था ।
साम्यवादी तो गायब हो रहे थे, उनकी जगह पुलिस अपने कारनामे
करने लगी थी ।

सुना जाता था कि स्वयं वेन्कटेश्वर राव शेखी मारते थे कि उनके
कहने-सुनने पर ही उस इलाके में इतनी पुलिस भेजी गई थी । इतना
ज़रूर सत्य है कि वे प्रायः मन्त्रियों से मिलते, उनके कान भरते, आमद-
खुशामद करते, कांग्रेसियों को चाय-पानी के लिए निमन्त्रित करते,
...न पर रुपया खर्चते । कांग्रेस को उसी प्रकार चन्दा देते, जिस प्रकार

युद्ध के काल में वार-फ़न्ट में देते थे।

हमें यह भी मालूम हुआ कि उन्होंने इस इलाके के साम्यवादी और उनके हितचिन्तकों की एक लम्बी सूची मन्त्रियों और सरकारी अफ़सरों को पहुँचा दी थी। इस सूची में जरूर नरसिंह मामा का नाम भी होगा।

हम डरे हुए थे। डाकिये को देखकर डर लगता था, जाने क्या लाये। पढ़ाई कतई चौपट थी।

एक दिन डाकिये ने एक चिट्ठी लाकर दी। चिट्ठी सुजाता की थी। उसने लिखा था कि कुछ दिन पहले उस लेक्चरर से उसने विवाह कर लिया था। वह गर्भिणी भी थी। वह जब मद्रास में पढ़ रही थी, कहते हैं, तभी से उसके साथ उसका लगाव चला आ रहा था, पर उसने इसलिए अपने सम्बन्धियों को सूचना न दी थी ताकि शान्ति के विवाह में कोई विघ्न न हो।

हमने कभी सपने में भी न सोचा था कि सुजाता उस मोटे, बद-शक्ल तोन्दू, काले-कलूटे, कुरूप से शादी करेगी। हम गुस्से में लाल-पीले हो रहे थे। लाचार थे। क्या करते?

फिर यह शादी भी कैसी थी? शादीशुदा से शादी करने का क्या मतलब है? क्या इसको कानून मानेगा? क्या सरकारी कर्मचारियों को एक साथ दो पत्नियों को रखना मना नहीं है? क्या समाज व धर्म उसको कभी पत्नी के रूप में स्वीकार करेगा? वह तो सबकी नजर में रखैल ही होगी। और कैसे आदमी की?

सुजाता शादी न करने का दम भरती थी और जब शादी की तो ऐसे से? पढ़ी-लिखी औरत, कोई कहे भी तो क्या कहे? हम सिर नी[illegible] किये सोचते जाते थे।

कितनी बदनामी होगी? दोनों प्राध्यापक हैं। कॉलेज में जब अ[illegible] बातें उड़ती हैं तो सारे शहर में उनकी प्रतिध्वनि उठती है। क्या सर[illegible] कोई कार्यवाही न करेगी? क्या पुलिस हम इस बारे में आखें [illegible]

रहेगी ? एक प्रश्न उठता तो उसके साथ कई प्रश्न उठते। हम घबरा रहे थे और गुस्सा भी बढ़ता जाता था।

बेचारे उसके पिता जी क्या सोच रहे होंगे ? नरसिंह मामा क्या सोच रहे होंगे ? वे शिक्षा पर मरते हैं। अगर शिक्षित स्त्रियाँ ही इस तरह के वाहियात काम करने लगें तो क्या वे आधुनिक शिक्षा के बारे में अपनी राय नहीं बदलेंगे ? क्या रघू मामा को भी इस विषय में मालूम होगया होगा। वे क्या सोच रहे होंगे ?

हम इस चक्कर में थे कि डाकिया एक और पत्र दे गया। यह ब्रह्मेश्वर राव का पत्र था। उनका दुःखी हृदय पत्र में द्रवित हो गया था। पितृ-हृदय का आर्तनाद। वे भी क्या कर सकते थे ? चाहे कुछ भी करते, कुछ न बन पाता। विवाह रद्द करने की कोशिश करते तो लड़की को बुरा लगता, पुलिस को इत्तला देते तो लड़की झंझट में पड़ती। उसे घर लाकर रखते, तो मुमकिन था कि वह आत्महत्या कर लेती। कोई रास्ता न था।

जाने वे बेचारे भी किस तरह रो रहे होंगे ? हम भी सिसकने लगे। दो क्षण एक-दूसरे को देखते और फिर चुप हो जाते, नीचा मुँह किये बैठे रहते।

अगले दिन शाम को गोविन्द नायकप्पन गली से, एक मन्दिर में मिलने के लिए प्रसाद ने मुझे फोन किया। मैं न समझ सका क्यों ? हम मन्दिर कभी न जाते थे। उत्कण्ठापूर्वक वहाँ गया। प्रसाद वहाँ पहिले ही किसी संन्यासी से एक पेड़ के नीचे, मन्दिर के पिछवाड़े में बात कर रहा था। मैंने संन्यासी को गौर से देखा, बड़ी दाढ़ी थी, लम्बा गेरुआ चोगा, बड़े बाल, माथे पर विभूति की मोटी परत, गले में रुद्राक्ष माला; हाथ में चमकता कमण्डल, बगल में मृगछाला।

"स्वामी जी तिरुपति दर्शन के लिये जा रहे हैं।" कह कर वे हँसने लगे। हँसते-हँसते मुख पर हाथ रख लिया। तब मैं आवाज से ताड़ सका कि रघू मामा ही उस वेश में हैं। मुझे डर लगा कि कहीं वे

वेन्कटेश्वर राव का खातमा करने न आये हों। भगवान की चाल को भी कभी-कभी ज्योतिषी जान जाते हैं पर मामा के बारे में कोई भविष्य-वाणी न की जा सकती थी।

वे सवेरे प्रसाद से मिले। फिर मन्दिर में उसे लेगये। हमें ताज्जुब हो रहा था कि मामा को इस मन्दिर के बारे में कैसे पता लगा था।

सुजाता की शादी के विषय में उन्होंने कुछ न कहा। सिर्फ इतना ही कहा कि गाड़ी से अनतपुरं सुजाता से मिलने जा रहे हैं। हमें स्टेशन पर भी आने के लिये मना किया। थोड़ी देर तक इधर-उधर की बातचीत होती रही, कोई आकर देखने लगता तो वे भी लोक प्रचलित वेदान्त गम्भीर स्वर में उगलने लगते।

इसके चार दिन बाद हमें खबर मिली कि सुजाता एक बन्द कमरे में जलकर मर गई है। दरवाजा अन्दर से बन्द था और बाहर से भी। पुलिस तहकीकात कर रही थी। उसकी मृत्यु का समाचार सुनकर हमें कोई खास दुःख न हुआ। हमारा यह सन्देह अवश्य बना रहा कि इसके पीछे रग्घू मामा का भी हाथ था।

हमारे परिवार की तरफ से सिवाय नरसिंह मामा के कोई अन्त्येष्टि-संस्कार के लिये भी न गया और मामा भी देर में पहुँचे।

हमें अब तक ठीक नहीं मालूम कि सुजाता किस हालत में, और क्यों इस प्रकार मरी? क्या यह आत्महत्या थी? या विचित्र हत्या? उसको आत्महत्या के लिये किसने प्रेरित किया? क्या यह भी रग्घू मामा की करतूत थी?

मैं इसे क्या कहूँ? अमानुषिक अत्याचार, नादिरशाही अथवा? नौकरशाही की निरंकुशता?

एक दिन शाम को पुलिस ने हमारे तीनों गाँवों पर छापा मारा। तीनों गाँव स्पेशल पुलिस ने घेर लिये थे। किसी को न अन्दर आने की

अनुमति थी, न बाहर जाने की आज्ञा थी। पुलिस बन्दूक लिये यत्र
खड़ी थी। जो जहाँ था, उसको वहीं खड़े रहने का हुक्म हुआ। औ
हाय-हाय करने लगीं। बच्चे चिल्लाने लगे। पुलिस का तूफानी दस
घर-घर तलाशी ले रहा था।

यह कहा जा रहा था कि रग्घू मामा और अप्पाराव गाँव में आ
थे। पुलिस ने उनकी खोज के लिए गाँव पर छापा मारा था। मगर हमे
इस की खबर भी न थी कि मामा गाँव आये हुए थे, पर जब पुलिस वाले
के मुँह सुना तो हम भय से काँपने लगे।

थोड़ी देर बाद पुलिस ने यह ऐलान किया कि गाँव के लोग तालाब
के किनारे जमा हों। मुन्सिफ हरिजनवाड़े से माल-मालिगों (निम्नजाति
के लोग) को भेज रहा था। रामस्वामी भी पुलिस की मदद कर रहे थे।
यह उनकी अंग्रेजी जमाने की आदत थी।

तालाब के किनारे पाँच-छः कुर्सियाँ लगी हुई थीं। पुलिस वालों ने
एक घेरा बना रखा था। गाँव वालों को उस घेरे में ले जाया गया। नर-
सिंह मामा और सुब्बु मामा, वेन्कय्या, हमारे रिश्तेदार, सबको उस घेरे
में खड़ा कर दिया गया।

हम इस तरह खड़े किये गये थे, जैसे कोई मामूली निम्न जाति के
चोर-चपाटे या लुच्चे-लफंगे हों। बहुत बुरा लग रहा था। पुलिस के
विरुद्ध आवाज उठा नहीं सकते थे। गोली से भून दिये जाते। उनकी
संख्या भी इतनी थी कि गाँव से बाहर भागना मुश्किल। शर्म के मारे
हम एक दूसरे को भी न देख पाते थे। नीचा मुँह किये खड़े थे।

"आप लोगों को यह बताना होगा कि राघवेन्द्र राव कहाँ छुपा
हुआ है? वह पहुँचा हुआ बदमाश है और अब इस गाँव में है।"
पुलिस इन्स्पेक्टर गरज रहा था और हम एक-दूसरे को देख रहे थे। पंक्ति
में वे सब थे, जिनकी रग्घू मामा से रिश्तेदारी थी या दोस्ती। कुछ हरि-
जन भी थे, जो मामा के समर्थक थे। उनके शत्रु या दूसरे दल के लोग
पुलिस के साथ थे। मुन्सिफ का चेहरा चमचमा रहा था। वह जाने

बुरा था। शायद इसलिए कि पुलिस ने उसकी हैसियत को माना

"आप लोग जानते हैं, आपको बताना होगा।" इन्स्पेक्टर ने कहा,
कहीं से कोई आवाज नहीं आई। सब चुप थे।
"मैं फिर पूछता हूँ, बताओ यह राघवेन्द्र राव कहाँ है? तुम्हारे गाँव
का आदमी है और तुम नहीं जानते? झूठ है, बताओ।"
सब चुप।
"देखो, यह मत समझना कि यह गांधीजी का चलाया हुआ सत्या-
ग्रह है। यह साम्यवादियों का बलवा है, सरकार ने हमें सब हक दे रखे
हैं। हम चाहें तो तुम्हारी खाल उधड़वा सकते हैं, समझे।"
सब चुप।
"हमें सूचना मिली है कि वह इस समय गांव में है, बताओ वह
कहाँ है।"
सब चुप।
इन्स्पेक्टर थोड़ी देर इधर-उधर चहलकदमी करता रहा। फिर हरएक
से पूछने लगा। किसी ने कुछ न कहा। उसने मेरे पास आकर, मेरा
कालर पकड़ कर मुझे झकझोरा, बड़ी आँखें कीं, पर मैं क्या बताता?
मालूम होता तो भी न बताता। मेरी बगल में वेन्कय्या था और वेन्कय्या
के बाद नरसिंह मामा थे। उनके पास जाकर पुलिस इन्स्पेक्टर ने कहा
"क्यों, तुम्हें जरूर मालूम होगा। बताओ, नहीं तो ठीक नहीं होगा।"
मामा चुप रहे।
"बताओ वह तुम्हारा भाई है, तुम्हें नहीं मालूम तो और किस
मालूम होगा? तुम्हारे बारे में हमें सब मालूम है। भाई कम्यूनिस्ट है, दो
कम्यूनिस्ट हैं।" इन्स्पेक्टर उनके साथ भी वही भाषा इस्तेमाल
रहा था, जिसका हमारे साथ किया था। हम अन्दर ही अन्दर गरम
रहे थे।
"... कम्यूनिस्ट हो, नहीं तो कांग्रेस का तुमने क्यों

किया ? कई हैं तुम जैसे, जो पहिले कॉंग्रेस में थे, फिर कम्यूनिस्ट पार्टी
शामिल हो गये। हम सब जानते हैं। बताओ, कहाँ है तुम्हारा भाई औ
दामाद ?"

"मैं नहीं जानता। आप लोगों ने घर-घर की तालाशी ली है,
अगर आपको उसके बारे में न मालूम हुआ तो मुझे क्या मालूम होगा ?"

"पता लग जायगा कि मालूम है कि नहीं। मैं कहता हूँ सच-सच
बताओ।" पुलिस जब इन्स्पेक्टर नरसिंह मामा से यों पूछ रहा था तो
स्त्रियाँ भी रोती-धोती वहाँ जाकर खड़ी हो गईं। शोर-शराबा शुरू हो
गया। पुलिस उन पर भी रौब जमा रही थी।

पुलिस इन्स्पेक्टर सबसे पूछता गया पर किसी ने कुछ न कहा। वह
तमतमाता हुआ इधर-उधर चलने लगा। पैरों में तेजी थी, शायद वह
अपनी तरक्की के सपने देख रहा था। एकाएक उसने चार सिपाहियों
को डण्डे लेकर एक जगह खड़ा किया। सिपाही शक्ल सूरत से ही क्रूर
लगते थे। वे हमारे प्रान्त के भी न थे। वे क्या जानें किसकी क्या हैसि-
यत है, किसी से उनका लाग-लगाव न था।

इन्स्पेक्टर गरजा, "तुम ऐसे न मानोगे, उतारो कपड़े।" किसी ने
नहीं उतारे।

"देखते क्या हो ? उतारो, मार-पीटकर इनके कपड़े।" इन्स्पेक्टर
ने कान्स्टेबलों को आज्ञा दी। औरतों में हल्ला मच गया।

हमें मार-पीट कर हमारे कपड़े उतार दिये गए। हमें कतार में भागने
े लिए कहा गया। हम थोड़ी देर खड़े रहे, फिर पुलिस वालों के मारने-
ीटने से भागना पड़ा। हमें उन तीन सिपाहियों के सामने से गुजरना
ड़ा, जो डण्डे लिए हुए थे। हर बार हम गुजरते और वे पूरे जोर से हमें
रते।

किन्तु मामा अपनी जगह से न हिले। पुलिस इन्स्पेक्टर उनको खुद
डे से मार रहा था और मामा चुपचाप सब सहते जाते थे।

बाप के सामने बच्चे, बच्चों के सामने बाप, बुजुर्गों के सामने

जवान, नौजवानों के सामने बुजुर्ग, छोटे-बड़े ऊँचे-नीचे, गाँव की
रतों के सामने नंगे दौड़ने के लिए बाधित किये गए।

डण्डे खाते-खाते मामा बेहोश गिर गए। उनका बेहोश गिरना था
क हम भी खड़े हो गए। हम पर डण्डे पड़ते जाते थे। कई और बेहोश
हो गए।

पुलिस वाले पीट-पीटकर हार गए। पर रग्घू मामा का कहीं पता
न लगा। कहीं होते तब न पता लगता? मारना-पीटना खतम हुआ।
"अब इनके लिए काफी है, देखो कभी किसी साम्यवादी को पनाह न
देना।"

लेफ्ट-राइट करते हुए, वे जीप में बैठ कर धूल उड़ाते हुए चले
गए। हमारे रिश्तेदार रोते-चिल्लाते हमें उठाकर ले गए।

उसी दिन पुलिस का जत्था कादूर भी गया। वहाँ के हर घर की
तलाशी ली गई। वहाँ भी लोगों को घेर लिया गया। पुलिस वालों ने
मेरे ससुर की भी वही हालत की, जो वे नरसिंह मामा की कर गए थे।
उनको भी नंगा करके माँ-बहनों के सामने पीटा गया। वे भी बेहोश कर
दिये गए।

दूसरे दिन पता चला कि यलमरु में भी यही हुआ। वासुमता का पति
पकड़ लिया गया था। उसे भी नंगा करके पहले मारा गया फिर गिरफ्तार
कर लिया गया। उसके साथ गाँव के अन्य बड़े बुजुर्गों को भी बुरी तरह
पीटा गया।

फिर हमें वेन्कटस्वामी के भाई से मालूम हुआ कि जिस दिन गाँव
में मार-पीट हो रही थी, उसी दिन रग्घू मामा नाव में यलमरु जा रहे थे।
उन्होंने वेश बदल लिया था। संन्यासी का वेश छोड़कर वे एक पिय
क्कड़ माँझी बन गए थे। वे नहर में ही घूम रहे थे और पुलिस उन
लिए गाँव-गाँव छान रही थी।

इसका मतलब था कि गाँव में जो गुजरा था, वे वह सब जानते उनको शायद ग्लानि भी हुई होगी कि उनके कारण उनके सगे प्रिय-ब वान्धव, सताये जा रहे हैं। उनकी बदौलत वे कई मुसीबतें पहले ही चुके थे। और अब यह बला आ पड़ी थी।

हम दो-चार दिन में मालिश कर-कराकर ठीक हो गए। उस भयंक दिन की स्थाई स्मृति के रूप में दाग रह गए। लेकिन नरसिंह मामा चारपाई पकड़ ली। चोटों की दर्द के अलावा उन्हें हमेशा तेज बुखा रहता, कई बार बड़बड़ाते। फिर एक दम शान्त हो जाते। प्रसाद उनकी सेवा-शुश्रूषा करने मद्रास से आ गया था। मामा की दशा देखकर सब चिन्तित थे।

हम सब उनकी चारपाई के पास बैठे थे। प्रसाद ने बातों-बातों में कहा, "इनको इतनी भी तमीज न थी कि किसको मारना चाहिये था और किसको नहीं।"

"ज़िन्दगी-भर कांग्रेस की सेवा करते रहे और जब वे खुद हाकिम हो गए हैं, तो वे अपने आदमियों को पिटवा रहे हैं। मैं तो शुरू से कहती रही इस कम्बख्त सेवा के झमेले में न पड़ो।" नरसिंह मामा की पत्नी ने कहा। वह मल्लिखार्जुन राव की ओर घूर-घूर कर देख रही थी। वे आये थे, तब से मामा की चारपाई के पास बैठे थे।

नरसिंह मामा ने धीमी-धीमी काँपती आवाज़ में कहा, "गेहूँ के साथ घुन पिसता ही है।"

"पर जब घुन-पिस रहे हैं तो उनके साथ कोई गेहूँ नहीं पीसता।" उनके वकील पुत्र प्रसाद ने कहा।

मामा से कोई जवाब देते न बना। वे कराह रहे। उस दिन शाम को उनका बुखार भी बढ़ गया। उनका मित्र डाक्टर रोज गुण्टुर से आया करता।

अँधेरा होने के बाद वेन्कटेश्वर राव शान से अपनी कार में हमारे गाँव में से गुजरा, जैसे कोई मैदान मार लिया हो। पुल पार कर तालाब

के पास पहुँचा था कि कार घेर ली गई और उनको मारा पीटा गया। आँखें निकाल कर अंधा कर दिया गया। जगह-जगह चोट मारी गई। वे नाजुक हालत में हस्पताल ले जाये गये।

हम जानते थे कि पुलिस के हथकंडों में उनका भी खास हाथ था। वे ही उनके पास जानकारी पहुँचा रहे थे। पर कभी हमारा ख्याल न था कि वे इतनी जल्दी और इस समय अपनी चाल की सफलता देखने आयेंगे।

वेन्कटेश्वर राव ने जिन्दगी में कई आदमियों का शिकार खेलना चाहा था। कई पर गोली चलाई थी। पर मारे कम ही गए थे। घमण्ड ने उनकी आँखें मूँद रखी थीं। गोली छोड़ी और तड़पड़ाते हुए शिकार को देखने के लिए उतावले होकर लपके, जो अनुभवी शिकारी कभी नहीं करता। और खुद शिकार-के-शिकार हो गए।

फिर रग्घू मामा के लिए पकड़-धकड़ मची। जीपें इधर-उधर घूमीं। मार-पकड़ हुई। क्योंकि वेन्कटेश्वर राव कराहते-कराहते भी रग्घू मामा का नाम ले रहे थे पर रग्घू मामा का कहीं पता न था। वे किश्ती पर भी न देखे गये।

नरसिंह मामा को यह बात सुनाई गई तो उन्होंने कहा, "जाने उसकी क्या हालत होगी ? सरकार कभी मुकदमा करेगी ही। बेटा, तू ही उसकी वकालत करना।"

उस दिन से उनकी हालत और भी बिगड़ गई। दवा का कोई असर न होता था। डाक्टरों को कुछ सूझता न था। पाँच-छः दिन बाद वे इस संसार से चले गये।

जब प्रसिद्ध व्यक्ति मरते हैं, तो उनकी लाश का जुलूस निकाला जाता है। मामा का नाम अखबारों में न छपा था, न उन्होंने को ओहदा ही पाया था, पर उनकी मानवता और उदारता कितने प्रसि व्यक्तियों में है ? उस व्यक्ति का भी उस छोटे से गाँव में जलूस निकालने दिया गया। पुलिस के पहरे में ही उनका दाह-संस्कार हुअ

उनके प्राण जो कभी स्वतन्त्रता-यज्ञ में आहुति बने थे, अब हमेशा के लिये राख हो गये थे, हाय !

उस दिन आधी रात को वेन्कय्या के गन्ने के खेत में से रग्घू मामा श्मशान के पास आये और दूर से जलती चिता को नमस्कार कर सिसकते-सिसकते चले गये।

सवेरे लाल टोपियों पर गिद्ध मँडराने लगे। पुलिस वाले, जो उनके जीवित भाई को न पकड़ पाये थे, नर सिंह मामा की ठंडी राख पर कई दिनों तक पहरा देते रहे।

षष्ठ परिच्छेद

पुलिस का दुराक्रम इतना बढ़ा कि विधान सभा में कांग्रेसी ही कांग्रेसी सरकार की आलोचना करने लगे। पुलिस पर निगरानी बढ़ी।

इस बीच साम्यवादी पार्टी ने भी अपनी नीति बदली। वह अब हिंसा के पक्ष में न थी। कार्यकर्ताओं में जरूर इस विषय पर मतभेद था।

कई साम्यवादी, जो सालों से भूमि-गत थे, अपने को पुलिस के हाथ सौंपने लगे। रघू मामा तब तक राजनीति से विरक्त हो चुके थे। भाई की मौत ने उनकी नैतिक रीढ़ तोड़ दी थी। वे उनकी मौत का अपने को जिम्मेदार समझते थे। पुलिस की लापरवाही थी कि वे न पकड़े गए, एक-डेढ़ साल इधर-उधर फिरते रहे।

पकड़े जाने पर उन पर वेन्कटेश्वर राव को पीटने का मुकदमा पुलिस ने दायर किया। वेन्कटेश्वर राव अभी मरे न थे, वे अपने पापों को भुगत रहे थे। अन्धे और पंगु हो गये थे।

मुकदमा कई दिनों तक चलता रहा, शायद यह प्रसाद का पहिला ही मुकदमा था। जिस ढंग से उसने वकालत की, उसको देखकर बड़े-बड़े वकील भी उसका लोहा मानने लगे।

मुकदमे के सिलसिले में कमलवेणी ने एक दिन आकर कहा कि वह यह गवाही देने के लिए तैयार है कि जिस दिन वेन्कटेश्वर राव पीटे गये थे, रघू मामा उसके पास थे विजयवाड़ा में। उसने खर्च के लिए बहुत-सा रुपया प्रसाद को दिया। उसकी माँ मर चुकी थी।

वह वेन्कटेश्वर राव की ही रखैल समझी जाती थी। उससे ही पैसा

पाती थी और जाने क्यों वह उसके विरुद्ध मामा के पक्ष में गवा[illegible]
देना चाहती थी। उन्हीं का पैसा क्यों मामा को देना चाहती थी। ह[illegible]
सोच-सोचकर अचरज होता था। शायद वेश्या के जीवन में भी ऐसे
क्षण आते हैं, जब वह देवी बनने का प्रयत्न करती है। मैं नहीं जानता

गवाही की कमी थी, कई और लोगों ने वेन्कटेश्वर राव को मारने
का दोष अपने ऊपर ले लिया था। कमलवेणी की गवाही की जरूरत ही
न पड़ी। उसका रुपया औरों के लिए जरूर काम में आया। यद्यपि मामा
जेल जाना चाहते थे, तो भी वे छोड़ दिए गये।

प्रसाद ने विजयवाड़ा में प्रेक्टिस शुरू की। उसकी माँ, भाई, बहिन
उसके साथ रहते थे। कड़वाकोल्लु में उन्होंने अपना घर बेच दिया था।
रग्घू मामा उसके साथ रहना न चाहते थे।

वे गाँव चले गये। सुब्बु मामा भी जमीन बेचकर ससुराल जा रहे थे।
रामस्वामी ने उनकी जमीन खरीद ली थी। वह और धनी हो गये थे।
रामय्या से उनकी खूब पटती थी, दोनों दोस्त थे। रामय्या की लड़की
पद्मा मद्रास के गंदे बाजारों में बिकती-फिरती थी।

रग्घू मामा खम्मा के यहाँ ही रहते। उसकी आर्थिक हालत न सुधरी
थी। उसको कभी-कभी मृगी-सी आती और पागल की तरह चिल्लाने
लगती। मल्लिखार्जुन राव पहिले की तरह बेपरवाह थे। अपनी सेवा
की धुन में मस्त थे।

रग्घू मामा ने फिर पीना शुरू कर दिया था। शरीर खोखला हो
गया था। पैसे भी न थे। सस्ती रद्दी शराब पीते। दिन में कई बोतल
निगल जाते। शरीर पर फिर फोड़े निकल आये थे।

जब मामी को यह पता लगा तो वे देखने आईं। मामा उनको देख-
कर मुस्कराये। पर उनको पास न आने दिया। बोले भी नहीं। नीचे मुँह
किये बैठे रहे। मामी रोती-धोती चली गईं।

उसके बाद रग्घू मामा का पीना और भी बढ़ गया। वे एक दिन
अपने कुत्ते को लेकर नहर के किनारे अमलतास के पेड़ के नीचे, शराब

की दो बोतलें लेकर चले गए। वे बहुत देर तक न आए तो घबरा कर लोग उनके पास गए। वे अपने कुत्ते के सामने बड़बड़ा रहे थे।

"काफी है जिन्दगी,······ वाहियात जिन्दगी, इन्हीं हाथों······ इन्हीं हाथों भा···न···जी की जा···न ली। भाई को भी इन्हीं हाथों गंवाया, कम्बख्त जिन्दगी, जिन्दगी।"

वे कहते जाते थे, "ऐ रग्घू, तू तू हत्या रा है, और हत्यारे को जीने का हक? कह वे कुत्ते, तू भी तो मुझ-सा है, जा वे हट।"

कराहते-कराहते उन्होंने करवट ली, "वह वे कसूर है, मैं कसूरवार हूँ। नहीं, नहीं, नहीं, मैं उसके लायक नहीं हूँ, नहीं था। वह देवी है और मैं, मैं राक्षस हूँ। राक्षस और देवी साथ नहीं रहते, समझे यार।"

अधखुली आँखों से देखती भीड़ को देखते हुए कहा, "अरे तुम आ गये। हम तुम से दूर भागना चाहते हैं। हूँ हूँ हूँ, भगवान् को मुझ जैसे को उस जैसी पत्नी न दे। भला बुरे से वैसे ही भागता है, जैसे बुरा भले से। मैं बुरा हूँ, भागो-भागो, खम्मा देख रही है, भगवान्।"

वे उल्टी करने लगे और उनका मरियल कुत्ता, खाजवाला, उल्टी सूंघता उनको गम भरी निगाह से देखता। लोग एक-एक करके खिसक गये।

अगले दिन सवेरे, जब तारे सो चुके थे, सूरज न निकला था, गाँव वालों ने उनको ठण्डा पाया। उनकी स्नेह जीवन शिखा बुझ चुकी थी।

भले-बुरे की, खरे-खोटे की परिभाषा आदमी-आदमी के साथ, समाज-समाज के साथ बदलती है। मेरी नजर में रग्घू मामा नरसिंह मामा की तरह भले आदमी थे, आप न मानेंगे।

दो दिन बाद मरिवाड़ा के पास एक स्त्री की लाश नहर से निकाली गई। माँग में सिन्दूर थी, माथे पर बड़ा टीका था, वे अन्नपूर्णा मामी थीं।

मेरा बस चले तो इस मन्दिरों के देश में उनके लिए एक मन्दिर बनवाऊँ, और दिन-रात उनकी पूजा करूँ।

पाती थी और जाने क्यों वह उसके विरुद्ध मामा के पक्ष में गवाही देना चाहती थी। उन्हीं का पैसा क्यों मामा को देना चाहती थी। हमें सोच-सोचकर अचरज होता था। शायद वेश्या के जीवन में भी ऐसे क्षण आते हैं, जब वह देवी बनने का प्रयत्न करती है। मैं नहीं जानता।

गवाही की कमी थी, कई और लोगों ने वेन्कटेश्वर राव को मारने का दोष अपने ऊपर ले लिया था। कमलवेणी की गवाही की जरूरत ही न पड़ी। उसका रुपया औरों के लिए जरूर काम में आया। यद्यपि मामा जेल जाना चाहते थे, तो भी वे छोड़ दिए गये।

प्रसाद ने विजयवाड़ा में प्रेक्टिस शुरू की। उसकी माँ, भाई, बहिन उसके साथ रहते थे। कड़वाकोल्लु में उन्होंने अपना घर बेच दिया था रग्घू मामा उसके साथ रहना न चाहते थे।

वे गाँव चले गये। सुब्बु मामा भी जमीन बेचकर ससुराल जा रहे थे रामस्वामी ने उनकी जमीन खरीद ली थी। वह और धनी हो गये थे। रामय्या से उनकी खूब पटती थी, दोनों दोस्त थे। रामय्या की लड़की पद्मा मद्रास के गंदे बाजारों में बिकती-फिरती थी।

रग्घू मामा खम्मा के यहाँ ही रहते। उसकी आर्थिक हालत न सुधरी थी। उसको कभी-कभी मृगी-सी आती और पागल की तरह चिल्लाने लगती। मल्लिखार्जुन राव पहिले की तरह बेपरवाह थे। अपनी सेवा की धुन में मस्त थे।

रग्घू मामा ने फिर पीना शुरू कर दिया था। शरीर खोखला हो गया था। पैसे भी न थे। सस्ती रद्दी शराब पीते। दिन में कई बोतल निगल जाते। शरीर पर फिर फोड़े निकल आये थे।

जब मामी को यह पता लगा तो वे देखने आईं। मामा उनको देख-कर मुस्कराये। पर उनको पास न आने दिया। बोले भी नहीं। नीचे मुँह किये बैठे रहे। मामी रोती-धोती चली गईं।

उसके बाद रग्घू मामा का पीना और भी बढ़ गया। वे एक दिन ने कुत्ते को लेकर नहर के किनारे अमलतास के पेड़ के नीचे, शराब